15

I, IV

श्रीः

त्रैमासिक

श्रीस्वाध्याय

[ग्रीष्माङ्क]

वर्ष १
सं० १९९९

संख्या ४
आषाढ़

स्वाध्यायोऽध्येतव्यः

वार्षिक मूल्य २) रु०

इस अङ्क का मूल्य ।।=)

संस्थापक—
श्रीमान् अमृतवाग्भव आचार्य

सम्पादक—
श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी

विषय-सूची

* श्रीः *

श्रीस्वाध्यायसदन

सोलन (शिमला)

ति० आषाढ़ शु० १० सं० १९९९ वि०

ग्राहक संख्या...............

श्रीयुत मान्यवर महोदय !

आपके प्रिय पत्र 'श्रीस्वाध्याय' को जनताने कितना पसन्द किया और भारतके बड़े बड़े धुरन्धर विद्वानोंने किस आदरकी दृष्टिसे इसे अपनाया है— यह आपको दूसरे तीसरे और इस चौथे अङ्कमें प्रकाशित भारतके सुप्रसिद्ध समाचार पत्रों और धुरन्धर विद्वानोंकी कुछ संक्षिप्त सम्मतियोंसे भलीभांति विदित ही है। वर्तमान कठिन समयमें—जबकि अच्छे २ पत्रोंकी स्थिति भी डावांडोल हो रही है—हमें सफलताकी इतनी आशा नहीं थी। किन्तु यह सब आप गुण-ग्राहक महानुभावोंकी उदार सहायताका ही फल है। आप लोगोंने ही सर्वप्रथम इसे अपनाकर हमारा उत्साह तथा पत्रका गौरव बढ़ाया है अतः हम आपका हार्दिक धन्यवाद करते हुए आशा करते हैं कि आगे भी आप इसी प्रकार पूर्ण सहयोग प्रदान करते रहेंगे।

दूसरे वर्षका मूल्य

इस ग्रीष्माङ्कके साथ ही आपका वार्षिक मूल्य भी समाप्त हो रहा है। अतः इस पत्रके मिलते ही दूसरे वर्षका मूल्य २।−) दो रुपये पांच आने मनीआर्डर द्वारा भेजनेकी कृपा करें।

स्थायी सम्पत्तिके अभावमें 'श्रीस्वाध्याय' का प्रकाशन कार्य अभी केवल आप उदार महानुभावोंकी सहायता पर ही निर्भर है; अतः यदि आप अपने इष्ट मित्रोंको प्रेरित करके (एक दो नवीन संरक्षक सहायक या ग्राहक बनाकर) अपने मूल्यके साथ ही उनकी वार्षिक सहायता भी शीघ्र भिजवादें तो 'श्रीस्वाध्याय' पर्याप्त बल पाकर अधिकसे अधिक सुन्दर रोचक एवं आकर्षक सामग्री भेंट करता हुआ आपकी सेवा कर सकेगा।

पत्र व्यवहारमें और मनीआर्डरके कूपन पर आप अपनी ग्राहक संख्या (जो इस पत्रके ऊपर अङ्कित है) अवश्य लिख दिया करें। 'श्रीस्वाध्याय' V.P.P. द्वारा मंगवाने से आपके =) अधिक व्यय होते हैं और यदि कहींसे वी० पी० लौट आती है तो श्रीस्वाध्यायसदनको भी हानि उठानी पड़ती है अतः दोनों ओरकी सुविधाका ध्यान रखते हुए आपको अपना वार्षिक मूल्य मनीआर्डर द्वारा ही भेजना चाहिए।

भवदीय—

व्यवस्थापक—श्रीस्वाध्यायसदन,

सोलन (शिमला)

❀ श्रीः ❀

श्रीस्वाध्याय

[त्रैमासिक-पत्र]

संस्थापक तथा प्रधानाध्यक्ष—

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम आचार्य

श्री १०८ मान् अमृतवाग्भवजी महाराज

संरक्षक—

बघाटमहीमहेन्द्र धर्ममार्तण्ड

राजा साहब श्री १०५ मान् दुर्गासिंहजी बहादुर C. I. E. सोलन (शिमला)

रावराजा साहब श्री १०५ मान् गिरिधारीशरणसिंहजी भरतपुर ।

सहायक—

श्री १०५ मती मांजी महाराणी साहिबा (सिरमौरीजी) बघाटराज्य ।

श्रीमान् सरदार कुँवर रणदीपसिंहजी नाहन (सिरमौर)

श्रीमान् कुंवर शिवसिंहजी B. A., L-L. B. सेशन जज सोलन ।

श्रीमान् कुँवर ईश्वरीसिंहजी सुपरिण्टेण्डेण्ट कोर्ट आफ वार्ड् स उदयपुर (मेवाड़)

श्रीमान् सरदार जगजीतसिंहजी ढिल्लों B. A., L-L. B. नाभा ।

सम्पादक और व्यवस्थापक—

ज्योतिषमार्तण्ड ज्योतिर्विद्यारत्न दैवज्ञमणि गणकरत्न

श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी ज्योतिश्शास्त्री

प्रकाशक—

श्रीस्वाध्यायसदन सोलन (पंजाब)

श्रीस्वाध्यायमें क्या क्या होगा ?

विज्ञ पाठकोंको 'श्रीस्वाध्याय' के उद्देश्य तथा नीतिका ज्ञान तो भलीभांति हो ही गया है। इसमें जो मोक्षादि पांच प्रधान स्तम्भ रक्खे गये हैं—उनके अन्तर्गत किन २ विषयों पर लेख लिखे जा सकते हैं ? इसकी एक संक्षिप्त सूची हम नीचे दे रहे हैं। इस तालिका द्वारा हमारे विद्वान् लेखकोंको विषय चुननेमें सुविधा होगी।

मोक्षस्तम्भमें—

भारतीय दर्शनोंका संक्षिप्त परिचय। न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा, वेदान्त (शाङ्कर रामानुज निम्बार्क माध्व श्रीकण्ठ भास्कर आदि मतोंका संक्षिप्त सार) शैव (त्रिक प्रत्यभिज्ञा पाशुपत आदि मतोंका संक्षिप्त परिचय) शाक्त (दक्षिण वाम कौल तन्त्र सिद्धान्त त्रैपुर आदि मतोंके संक्षिप्त परिचय) पारमार्थिक मोक्ष, व्यावहारिक मोक्ष आदि आदि।

धर्मस्तम्भमें—

वेदोंका स्वाध्याय। राष्ट्रिय शिक्षा। घरेलू शिक्षा। स्त्री शिक्षा। धर्म रहस्य। धर्ममें स्मृतियोंका स्थान। कल्प सूत्र। स्त्रीधन। दत्तक-दाय। दाय-भाग। प्रायश्चित्त विधान। पर्व व्रतोत्सवादि निर्णय। मुहूर्त्तादि निर्णय। पर्व किस प्रकार मनाये जायें। पर्व और त्यौहारोंका राष्ट्रिय महत्त्व। पर्व मनानेमें धार्मिक दृष्टिसे हानि लाभका विचार। ज्योतिश्शास्त्रानुसार तात्कालिक शुभाशुभ योग और भविष्यवाणियां। राशिफल। खगोलके ग्रह नक्षत्रादिकोंका परिचय।

अर्थस्तम्भमें—

अर्थ शास्त्र। चाणक्यके विचार। घरकी व्यवस्था। पारिवारिक आय व्यय। राष्ट्रको समृद्ध करनेके उपाय। यातायातमें अर्थ प्राप्ति। व्यापार। ज्योतिश्शास्त्रानुसार महर्घ समर्घ (तेजी मंदी) विचार। खानोंसे अर्थ प्राप्ति। आर्थिक दृष्टिसे कलाओंका विचार। पर्व और आर्थिक दृष्टि। युद्धसे आर्थिक हानि लाभ। कृषि (धान्य, फल, शाक-भाजी, ईख, कपास आदिके उत्पादन) से अर्थ प्राप्ति आदि आदि।

कामस्तम्भमें—

आयुर्वेद। शरीरके सभी अवयवोंको सुन्दर सुदृढ़ स्वस्थ ओजस्वी बनानेके उपाय। दीर्घजीवी बननेके उपाय। रसोईघर। कलाकौशल। घरकी स्वच्छता और पवित्रता। बच्चोंका पालन पोषण। भृत्योंके साथ व्यवहार। पशुपालन आदि आदि।

इतिहासस्तम्भमें—

इतिहास जाननेके साधन (ताम्रपत्र दानपत्र मुद्रा शिलालेखादि) संस्कृत-साहित्यका इतिहास। भारतीय ग्रन्थ और ग्रन्थाकारोंके परिचय। भौगोलिक परिचय (देशकी सीमायें नदियां पर्वत तीर्थ नगर ग्राम आदि) प्राचीनकालमें भूमण्डलके समस्त देश प्रान्त नगरादिकोंके जो नाम और सीमा थी उनके वर्तमान नाम और सीमाका विवेचन। महापुरुषों (दानवीर युद्धवीर धर्मवीर मृत्युवीर शास्त्रार्थवीर विशिष्टविद्वान् भगवद्भक्त राष्ट्रभक्त सिद्ध सती ज्ञानी आदि) के जीवन चरित्र। प्रत्येक वस्तु पर ऐतिहासिक दृष्टिसे विचार।

विशेष—

इसके अतिरिक्त 'श्रीस्वाध्याय' में कुछ सामयिक लेख भी रहेंगे। प्रत्येक अङ्ककी त्रैमासिक अवधिमें जो जो विशेष पर्व त्यौहार या जिन २ अवतारों एवं महापुरुषोंकी जयन्तियां आवेंगी उन उन पर विशेष रूपसे प्रकाश डाला जावेगा। आगामी अङ्क (शरदङ्क) के लिए विद्वान् महानुभाव सर्व प्रथम निम्न विषयों पर सुविचारपूर्ण लेख भेजनेकी अवश्य कृपा करें।

शरत्पूर्णिमा, श्री हनुमान्‌जीका जीवनचरित्र, हनुमान्‌जी के जन्मका शास्त्रीय निर्णय, श्रीहनुमान्‌जीकी स्वामिभक्ति, चिरञ्जीवी हनुमान्, दीपावली, अन्नकूट, भ्रातृद्वितीया, वष्टिकाकर्षण (रस्साकशी), गोपाष्टमी, महाकाल-भैरवजयन्ती, श्रीदत्तजयन्ती, मल्लद्वादशी आदि आदि।

सब लेख श्रावण शु० १५ ता० २६ अगस्त १९४२ तक सम्पादक "श्रीस्वाध्याय" सोलन (पञ्जाब) इस पते पर पहुँचना आवश्यक है।

स्वाध्यायोऽध्येतव्यः। ❀ श्रीः ❀ स्वाध्यायान्न प्रमदितव्यम्।

श्रीस्वाध्याय

[ग्रीष्मांक]

स्वराष्ट्रशिक्षां गृह्णीयाच्चिकीर्षुः स्वां समुन्नतिम्।
दूरदृष्टिर्यया भूत्वा न कदाऽपि विषीदति॥ [राष्ट्रालोक]

वर्ष १ | सोलन, आषाढ़ शु० १० गुरुवार सं० १९९९ वि० | संख्या ४

तत्तद्राष्ट्रे मानवानां व्यवस्थां शोभासम्पच्छालिनीमार्यरीत्या।
प्रेम्णा लोके स्थापयँस्तत्त्वदर्शी श्रीस्वाध्यायः कल्पतां विश्वभूत्यै॥
—अ० वा० आचार्य

* श्रीस्वाध्याय *

श्रीसे समस्त जगकी सुषमा बनावे।
स्वान्तस्थ शान्ति रसकी सरिता बहावे॥
ध्याता रहे अतुल शक्तिमयी प्रभाका।
यत्स्याद्विवेकयुत तत्त्व वही बतावे॥१॥

मिथ्याडम्बरका प्रपञ्च जगमें फैलो हुआ है घना।
रागद्वेषसना चरित्र जनका स्वच्छ दतासे तना॥
मायाबद्ध समाजको तिमिरमें आलोक देते हुए।
'श्रीस्वाध्याय' सुपत्रसे सजग हो कर्तव्यता देशकी॥२॥

—श्री धर्मभानु शास्त्री बी० ए०।

राजाका आदर्श

समस्त संसारके भीतर बहुत चिर समयसे ही राजाका नाम अतिशय प्रसिद्ध है। हां, कोई समय ऐसा भी अवश्य था जब कि राजा अथवा क्षत्रियकी कोई आवश्यकता ही नहीं थी किन्तु उस समयको बीते करोड़ों वर्ष हो चुके हैं। तात्कालिक ग्रन्थ भी आज उपलब्ध नहीं। आज यदि ऐसी बात कहदी जाय कि "सर्वोत्तम विश्व-संचालनकी व्यवस्था राज्यवादी लोग नहीं कर सकते अथवा राज्यवादके फूलते-फलते पूर्ण-शान्तिमय सुन्दर विश्व-संचालन हो नहीं सकता।" तो इस बातको असम्भव असम्भव कह उठेंगे। इतना ही नहीं, अपितु उसे विश्व-विप्लावक समझ राजद्रोही अथवा देशद्रोही भी ठहरा देंगे।

वास्तवमें यह लोगोंके हृदयकी अशक्तता तथा संकुचित स्वार्थपरायणताके अतिरिक्त कुछ नहीं। राजा बननेके इच्छुक केवल गुणवान् ही नहीं होते। निर्गुणसे निर्गुण व्यक्ति भी राजा बनना अतिशय प्रेमास्पद समझता है। किन्तु शान्ति-स्थापनाके लिए आदर्शराज्यवादकी दुहाई देने वाले अशान्तिके बीज बोते हुए भी समझ ही नहीं पाते कि इससे पूर्ण शान्ति कैसे स्थापित होगी? अस्तु।

भारतवर्षमें राज्यवादका आदर्श सर्वोत्तम रहा है, ऐसा कहते हैं; किन्तु उसी भारतवर्षके इतिहासमें ऐसे लाखों उदाहरण मिलेंगे कि आदर्शराज्यके लिए पुत्रहत्या, पितृहत्या, भ्रातृहत्या आदि अनन्त पाप किये गये तथा उनको धर्म्य भी मान लिया गया। थोड़ा विचार करिए वास्तवमें जो व्यक्ति राष्ट्रमें उत्पन्न होता है वह राष्ट्रका पुत्र होता है न कि पति। किन्तु जबसे राष्ट्रको पुत्र और राजाको राष्ट्र (भूमाता) का पति बननेमें गौरव होने लगा तथा राजाको भी "सर्वदेवमयोनृपः" "रक्षेत् पुत्रमिवौरसम्" "प्रजाः प्रजानाथ पितेव पासि" आदि२ शब्दों से गौरवान्वित किया गया तबसे ही वास्तविक अशांति का साम्राज्य प्रारम्भ हो गया। इसी कारण उत्तरोत्तर राज्यवादसे भी भयानक अशान्तिकारक संघवाद तथा व्यक्तिवाद उत्पन्न हुए और फूलते फलते ही गए। इनके फूलने-फलनेके साथ ही साथ घोर अशान्तिका साम्राज्य छा गया तथा प्राणिमात्रका जीवन दुःखमय, नरकमय बन गया है। यद्यपि भारतीय ग्रन्थोंमें आदर्श-राज्यवादका बहुत गुण-गान भरा पड़ा है तथपि चिरशान्ति कभी न हो सकी। फिर भी संसार में भारतका राज्यवाद औरोंकी अपेक्षया कुछ अच्छा ही रहा है। श्रुतिमें आता है "सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानां राजा" यहां सोम आप्यायक शिवतत्त्वका नाम है, इसी कारण भारतीय राजागण अपने-आपको राजा न मान कर केवल लोक व्यवस्थापक मानते थे, तथा भगवान् को राजा मानते थे। आज भी इस बातका टूटा-फूटा रूप भारतमें उपलब्ध है। जैसे नैपाल में राजा भगवान् पशुपतिनाथ हैं, उदयपुरमें भगवान् एकलिङ्ग शिवजी राजा माने जाते हैं, सोलनमें भगवान् नृसिंह जी राजा कहलाते हैं। इन राज्योंमें वहांके राजा अपने आपको केवल व्यवस्थापक माननेका आदर्श रखते हैं। जयपुरके राजागण अपने आपको भगवान् गोविन्ददेवका दीवान मानते चले आए हैं; किन्तु यदि सभी राजागण ऐसा आदर्श स्थापित करें व उस पर पूर्ण रूप से प्राण-पणसे चलें तो कुछ अंशोंमें विश्व-कल्याण अवश्य हो सकता है। एक प्राचीन राज्यवादी क्षत्रियका आदर्श यहां पाठकोंके सामने रखते हैं—

क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः
क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः।
राज्येन किं तद्विपरीतवृत्तेः
प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा॥

वशिष्ठ महर्षिकी नन्दिनी नामक गौको महाराजा दिलीप जङ्गलमें चरा रहे हैं। गौको सिंहने पकड़ लिया, गोरक्षाके लिए महाराजाने तूणीरसे बाण निकालना चाहा किन्तु भगवन्मायावश हाथ वहीं कुण्ठित हो गया। गोरक्षामें महाराजा दिलीप अपने आपको असमर्थ देख कहते हैं "संसारमें क्षतसे त्राण करने वालेको क्षत्र कहते हैं, यह बात समस्त संसारमें अत्यन्त प्रसिद्ध है; किंतु राजा यदि क्षतसे त्राण (रक्षा) नहीं कर सकता तो उसका निरर्थक राज्य तथा निन्दित प्राण किस कामके? अर्थात् वृथा ही हैं। ऐसे निन्दित प्राण और ऐसा निन्दित राज्य संसारमें सुखशान्ति नहीं स्थापित कर सकता।" अहा! कैसा सुन्दर आदर्श है, क्या इस आदर्श पर आजकल के राजागण चलनेका प्रयत्न करेंगे? शिवम्। —सम्पादक

भारतीय दर्शन और आत्मज्ञान

[लेखक—महामहोपाध्याय श्री पं० परमेश्वरानन्दजी शास्त्री]

भारतीय दृष्टिकोणसे दर्शन शास्त्र एक अमूल्य वस्तु है। भारतीय जनताके जितने भी धर्म कर्म हैं वे सब दर्शन शास्त्र द्वारा निर्धारित तत्त्वोंके आधार पर ही हैं, यूरोप आदि देशनिवासियोंकी तरह भारतीय लोग इस शास्त्रको विश्व प्रपञ्चका विचारात्मक ही नहीं कहते, तथा पढ़े लिखे लोगोंकी मानसिक भोजन प्राप्तिका साधन नहीं समझते। दर्शन शास्त्रमें तर्क और साक्षात् अनुभवके आधार पर तत्त्वोंकी मीमांसा तो रहती ही है परन्तु उसका मुख्य उद्देश्य दर्शन है—तत्त्व-साक्षात्कार है। भारतीय दर्शन शास्त्र में दर्शन अथवा तत्त्व साक्षात्कारके तीन हेतु बताये गये हैं—

> श्रोतव्यः श्रुतिवाक्येभ्यो मन्तव्योश्चोपपत्तितः।
> मत्वा च सततं ध्येय एते दर्शनहेतवः॥

अर्थात् पहले श्रुति वाक्योंसे सुनो, फिर उसका तर्ककी सहायतासे मनन करो और अन्तमें योग शास्त्र प्रक्रियासे निदिध्यासन करो, तब तत्त्व साक्षात्कार होगा अन्यथा नहीं। दर्शनके इन हेतुओंमें श्रुतिवाक्य श्रवणका निर्देश हुआ है। यद्यपि 'श्रुति' शब्दका साधारण अर्थ वेद ही प्रसिद्ध है और वह ठीक भी है, तथापि जो वेदको माननेवाले नहीं हैं वे श्रुति शब्दसे क्या समझें? तत्त्व साक्षात्कारके उपरोक्त हेतु भारतीयों ही के लिए निर्दिष्ट नहीं हुए हैं, किन्तु विश्व भरके लिए हैं। तत्त्वद्रष्टा ज्ञानीके लिए तो सारा विश्व ही उसका कुटुम्ब है। उसका जो भी उपदेश होगा वह विश्वके समस्त प्राणियों ही के लिए होगा, किसी व्यक्ति या जाति विशेषके लिए नहीं। इसलिए यहां श्रुति शब्दका सार्वभौम अर्थ बतानेकी आवश्यकता है।

जिस व्यक्तिने किसी वस्तुतत्त्वका साक्षात् अनुभव किया है, उसको साक्षातद्रष्टा कहते हैं, वह साक्षात् द्रष्टा स्वदृष्ट तत्त्वको लोकानुग्रहकी इच्छासे जिन शब्दोंके द्वारा प्रकट करता है उसका नाम श्रुति है, क्योंकि सुननेवाले जिज्ञासु ने सुनकर ही उसे जाना है। इसलिये तात्पर्य निकला कि साक्षात् द्रष्टा पुरुषके वाक्यका नाम श्रुति है। भारतीय भी वेदको श्रुति इसीलिए कहते हैं कि वे भी साक्षात् तत्त्व द्रष्टा ऋषियोंके वाक्य हैं। इसी प्रकार श्रोताके वाक्यका नाम स्मृति है। श्रोता स्वयंद्रष्टा नहीं है उसे तो द्रष्टा के शब्दोंसे ही तत्त्व ज्ञान हुआ है। उसका स्मरण करके ही वह अपने शब्दोंके द्वारा दूसरोंको ज्ञान कराता है। द्रष्टाका वाक्य स्वतः प्रमाण माना जाता है, क्योंकि वह वाक्य साक्षात् अनुभवके अनन्तर ही कहा गया है। श्रोताका भाव अपने निजी अनुभव को नहीं प्रकट करता, किन्तु सुनी हुई बात को, इसलिए वह परतः प्रमाण माना जाता है स्वतः प्रमाण नहीं। आज भी हमारे सामने जब कोई पुरुष किसी घटनाका वर्णन करता है, तो हम उससे पूछते हैं कि भाई! तुमने यह घटना स्वयं देखी है या सुनी सुनाई कह रहे हो? तात्पर्य यह कि साक्षात् अनुभवके समर्थनके लिए किसी प्रमाणान्तरकी आवश्यकता नहीं होती, वह तो स्वयं प्रमाण है। सुनी सुनाई बातके समर्थनके लिए प्रत्यक्षादि प्रमाणान्तरकी आवश्यकता होती है। तभी तो यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है—

> अन्तर अंगुरी चारको सांच झूठमें होय।
> सब माने देखी कही सुनी न माने कोय॥

इसी आधार पर भारतीय विद्वान् श्रुतिको स्वतः प्रमाण और स्मृतिको परतः प्रमाण कहते हैं। हमारे दर्शन शास्त्रकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह हमें श्रवण मननादिके द्वारा एक ऐसे निश्चित तत्त्वकी ओर ले जाता है, ले जाता ही नहीं किन्तु अधिकारी को वहां तक पहुंचा भी देता है जहां जाकर वह शाश्वत शान्तिका अनुभव करता है। कृत कृत्य और

आप्त काम हो जाता है। उसके लिए फिर कोई हेय उपादेय शेष नहीं रहता जहां पहुंचते ही वह कह बैठता है :—

धन्योहं धन्योहं दुःखं सांसारिकं न वीक्षेऽद्य,
धन्योहं धन्योहं स्वस्याज्ञानं पलायितं क्वापि ॥
धन्योहं धन्योहं कर्तव्यं मे न विद्यते किंचित्,
धन्योहं धन्योहं प्राप्तव्यं सर्वमद्य सम्पन्नम् ॥

मैं धन्य हूं, आज मेरे सांसारिक दुःख विलीन हो गये, मेरा अज्ञान नष्ट हो गया है। मैं कृत-कृत्य हो गया हूं, अब मेरे लिए कोई प्राप्तव्य शेष नहीं रहा, इत्यादि।

दर्शन शास्त्री का एक नाम कारुणिक भी है। कारुणिक उसे कहते हैं जो प्रत्येक वस्तुके मूलमें किसी कारण विशेष को देखता है। उसके कोषमें अकस्मात् या बाइचान्स आदि कोई शब्द नहीं। उसकी दृष्टिमें अकस्मात् ऐसी घटना घट गई—ऐसा कहने वाले लोग केवल अपने कारण विषयक अज्ञानको छिपाते हैं। वह घटना यों ही घट गई उस बातको माननेके लिए दार्शनिक तैयार नहीं। उस घटनाका कोई न कोई कारण अवश्य है जिसे वह नहीं जानता और अकस्मात् कहता है। प्रत्येक प्राणीको इस संसारमें कई प्रकारके दुःखोंका सामना करना पड़ता है। वह उन दुःखोंको दूर करनेके लिए रोगशास्त्रके विशेषज्ञ वैद्यों और डाक्टरों के पास जाता है। शरीरमें ही उसे दुःखानुभव होता है। शरीर शास्त्रके विशेषज्ञ वैद्य और डाक्टर ही हैं, इसलिए उस समय उसके लिए वे ही शरण हैं। वे उसके शरीरकी परीक्षा करते हैं और उसके लिए किसी औषधिकी व्यवस्था करते हैं परन्तु उस औषधिसे वह अच्छा हो ही जाता है यह बात नहीं, हो भी जाता है और नहीं भी। अच्छा होने पर भी कालान्तर में वह पीड़ा फिरसे आ घेरती है। तात्पर्य यह कि जब उसे यह ज्ञान हो जाता है कि इन लौकिक उपायोंसे किसी दुःखका अत्यन्ताभाव नहीं होता तब उसे यह धुन सवार होती है कि दुःखोंसे सदाके लिए छुटकारा कैसे प्राप्त हो। बहुत से दुःख ऐसे हैं जिनमें हमें प्रायः दुःखताका अनुभव नहीं होता। उदाहरणके लिए जैसे हमें प्रति दिन भूख सताती है और हमें प्रति दिन ही उसके लिए यत्न करना पड़ता है, हम उस यत्नमें कोई कष्ट अनुभव नहीं करते। आज अखिल भूमण्डल इस भूख पिशाचको ही शान्त करनेके लिए युद्धमें जूझ रहा है। हम अपने शरीरको नित्य अनेक उपायोंसे स्वच्छ करते हैं सिंगारते हैं, परन्तु दूसरे दिन उसकी फिर वही मलिन घिनोनी हालत हो जाती है। हमें इस मलभण्डार शरीर के नित्य संवारने सिंगारने में कोई भी कष्ट अनुभूत नहीं होता। नित्य नवजात शिशुओंको मलमूत्रमें लिपटा हुआ देखते हैं, नित्य सैंकड़ों स्त्रियां प्रसववेदनासे व्याकुल होती हैं और अनेक कष्ट सहती हैं, फिर भी शिशु-जन्ममें किसीको दुःखताका अनुभव नहीं होता। मैं ऐसा कहकर आपको संसारकी दुःखमयता बताने और आपको उससे विरक्त करने नहीं जा रहा हूं। वस्तुतः राग ही विरागका कारण है। बिना रागके विराग असम्भव है। मेरे कहनेका तात्पर्य केवल इतना ही है कि प्रत्येक प्राणीको जब कभी जिस वस्तुमें दुःख हेतुताका अनुभव होता है तभी वह उससे छुटकारा पानेका यत्न करता है। और जब उसे यह विदित हो जाता है कि यह रोग लौकिक उपायों के वशका नहीं तो उसे तत्त्वज्ञानी दर्शन शास्त्रीकी शरण लेनी पड़ती है। यहां यह शंका की जा सकती है संसारमें दुःख ही दुःख तो नहीं, सुख भी तो है, मान लिया कि भूख मिटानेके यत्नमें कुछ कष्ट अवश्य होता है, परन्तु सुख कितना होता है, क्या उस जरा से कष्टकी खातिर बड़े भारी सुखको छोड़ देनेकी सलाह देना बुद्धिमत्ता है? मृगोंके डरसे खेती किसने छोड़ी, मँगतोंके डरसे चूल्हा चढ़ाना किसने छोड़ा। इसी सम्बन्धमें एक पद्य सर्वदर्शन-संग्रहके चार्वाकदर्शन प्रकरणमें श्रीमाधवाचार्यने उद्धृत किया है कृपया उसे सुनिये :—

त्याज्यं सुखं विषयसंगमजन्यपुंसाम्
दुःखोपसृष्टमिति मूर्खविचारणैषा।
व्रीहीञ्जिहासति सितोत्तम तण्डुलाढ्यान्
को नाम भो स्तुषकणोपहितान् हितार्थी ॥

सांसारिक विषयोंसे होने वाले सुखोंको दुःख-मिश्रित समझकर त्याज्य समझना मूर्खोंका विचार है। अपना हित चाहनेवाला कौन मनुष्य केवल छिलका उतारनेके कष्टसे बचनेके लिए स्वच्छ उत्तम चावलोंसे युक्त धानोंको छोड़ देनेकी इच्छा करता है। ठीक है— थोड़ेसे दुःखोंसे बचनेके लिए बड़े भारी सुखसे मुंह मोड़ लेना वस्तुतः नासमझी है। परन्तु यहां यह विचार करना पड़ेगा कि क्या वह हमारा सुख चिरस्थायी है? वैषयिक दुःख तो तबतक ही रहेगा जब तक वह विषय है, उसके हटते ही या नष्ट होते ही वह सुख भी नष्ट हो जाता है। मनुष्यमें जैसे दुःखसे अत्यन्त छुटकारा प्राप्त करनेकी इच्छा भी नैसर्गिक है; उसी प्रकार नित्य निरतिशय सुख प्राप्त करनेकी इच्छा भी नैसर्गिक है। विनश्वर विषयोंसे अविनश्वर सुखकी इच्छा करना कागजी कुसुमोंसे सुगन्धकी इच्छा करनेके समान है। वस्तुतः शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ये पांचों विषय अपने संयोगसे मनुष्यको क्षणिक सुखका अनुभव कराते हैं। और उसमें एक ऐसे नकली सुखकी लालसा उत्पन्न कर देते हैं जिसके लिए वह सदा भटकता रहता है। ज्यों २ वह उसको प्राप्त करनेके लिए यत्न करता है, त्यों २ उसकी इच्छा बढ़ती ही जाती है और उसका सारा जीवन असन्तुष्ट और अज्ञात हो जाता है। तत्त्वज्ञानी यह भी सोचता है कि यदि विषय सुखसे अतिरिक्त और कोई सुख नहीं है तो बताइये पेट भर जाने पर वही अनेक स्वादिष्ट वस्तुएं मनुष्यके लिए क्यों त्याज्य बन जाती हैं? जिन्हें वह बड़े प्रेम से स्वाद ले लेकर खा रहा था, थोड़ी देर बाद वे उसके लिए क्यों विस्वादु बन गई? वस्तुएं तो वही हैं, उनमें कोई परिवर्तन नहीं होता, वह कहता है यदि मैं और खाऊंगा तो बीमार हो जाऊंगा, मर जाऊंगा। जो वस्तु पहले उसे अत्यन्त प्रिय थी अब उसमें उसे रोग-के कीटाणु दीखने लगते हैं, मौत दीखने लगती है। एक गाना सुननेका शौकीन जब गोष्ठीमें बैठा २ थक जाता है, तन्द्रा उसे सताने लगती है तब वह गोष्ठी, तबले की थपाक, वायलिन का मनमोहक स्वर, गायक का हृदयहारी तराना सब कुछ उसे अखरने लगता है; वह सोचता है कि कब यह गोष्ठी समाप्त हो और मैं सुख की नींद सोऊं। इस प्रकार विचार करने पर सिद्ध होता है कि विषयोंसे सुखकी अपेक्षा दुःख ही अधिक होता है और विषय सुखसे ऊपर भी और कोई सुख है। तत्त्वज्ञानी श्री विद्यारण्य स्वामीने कहा है—

> सुखं वैषयिकंशोक सहस्रे णावृतत्त्वतः।
> दुःखमेवेति मत्वाह नाल्पोऽस्ति सुखमित्यसौ॥

वैषयिक सुख सहस्रों शोकोंसे आवृत है—इस-लिए वह विषमिश्रित मधुके समान त्याज्य ही है। अच्छा तो विषय सुखसे ऊपर और कौनसा सुख है जो नित्य निरतिशय है? इस प्रश्नका उत्तर मैत्रेयी-ब्राह्मणके याज्ञवल्क्य मैत्रेयी सम्वादमें बड़े सुन्दर रूपसे दिया गया है। महर्षि याज्ञवल्क्यजीकी दो पत्नियां थीं; मैत्रेयी और कात्यायनी। चतुर्थाश्रममें प्रवेश करनेसे पूर्व महर्षि याज्ञवल्क्यने मैत्रेयीसे कहा कि मैं सन्यास ले रहा हूँ। मेरी इच्छा है कि मैं इस सम्पत्तिको तुम दोनोंमें विभक्त करदूं। इस पर मैत्रेयीने याज्ञवल्क्यजीसे कहा कि यदि आप मुझे समस्त पृथिवीको सुवर्णसे आच्छादित करके दे दें तो क्या मैं उससे अमर हो जाऊंगी? याज्ञवल्क्यजीने उत्तर दिया-"यथैव धनवतां जीवितं तथैव ते जीवितं स्यात्-अमृतत्त्वस्य तु नाशास्ति वित्तेन।" अर्थात् हे मैत्रेयी! जैसा धनवानोंका जीवन होता है; वैसा ही तुम्हारा भी जीवन होगा। धनसे अमृतत्त्व की आशा नहीं हो सकती। इस पर मैत्रेयी बोली कि महाराज! यदि यही बात है तो जो आप जानते हैं वही मुझे भी बताइए। मैत्रेयीका यह प्रश्न विषय सुखसे अतिरिक्त नित्य निरतिशयके सुखके विषयमें ही है। याज्ञ-वल्क्यजीने उत्तर दिया—

> "न वा अरे! पत्युकामाय पतिःप्रियो भवति;
> आत्मनस्तु कामाय पतिः प्रियो भवति।
> न वा जाया वै कामाय जाया प्रिया भवति,
> आत्मनस्तु कामाय जाया प्रिया भवति।

नवा अरे ! पुत्रस्य कामाय पुत्रः प्रियो भवति,
आत्मनस्तु कामाय पुत्रः प्रियो भवति ।
न वा अरे ! वित्तस्य कामाय वित्तं प्रियं भवति,
आत्मनस्तु कामाय वित्तं प्रियं भवति ।
न वा अरे ! सर्वस्य कामाय सर्वं प्रियं भवति,
आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति ।

याज्ञवल्क्य ऋषिके उत्तरका तात्पर्य यह है कि जाया यदि पतिसे प्यार करती है तो पतिके लिए नहीं किन्तु अपने आपके लिए। इसी प्रकार यदि पति जायासे प्रीति करता है, तो जायाके लिए नहीं किन्तु अपने लिए। पिता जब प्यारसे बालकको चूमता है तो बालकके लिए नहीं, बालक तो उल्टा दाढ़ीके कांटे जैसे बालोंकी रगड़से दुःख ही पाता है, और रोता है, इस लिए पिताका पुत्रसे प्यार अपने ही लिए है। मनुष्य यदि अचेतन धनकी यत्नसे रक्षा करता है उस रक्षासे धनको कोई लाभ नहीं, मनुष्यका वह धन-प्रेम अपने लिए ही है। कोई मनुष्य यदि पापनाश आदि-के लिए शिव, विष्णु आदिकी पूजा करता है तो उससे निष्पाप देवताको क्या लाभ? वह उसकी सारी देवपूजा स्वार्थ ही है। संक्षेपमें तात्पर्य यह हुआ कि हम जिस-जिस विषयके साथ प्रीति करते हैं; वह सब आत्माके लिए ही करते हैं। अर्थात् यह सब जगत् आत्मार्थ है—आत्मा ही प्रियतम है। इसी लिए यह आत्मा परमानन्द रूप है, परमानन्दमें ही प्राणि-मात्रका नैसर्गिक प्रेम है। आत्मा अतिरिक्त वस्तुओंमें प्रेम आत्माके लिए है, परन्तु आत्मामें प्रेम दूसरोंके लिए नहीं है, यहां शङ्का हो सकती है यदि आत्मा ही परम सुख स्वरूप है, तो हमें उसका भान क्यों नहीं होता? यदि उसका भान होता तो क्षणिक सुखके हेतु विषयोंमें कभी मनुष्यकी स्पृहा नहीं होनी चाहिए? इस लिए भान नहीं होता यही मानना ठीक है। और जब यह मान लिया गया कि आत्माकी परमानन्दरूपताका भान नहीं होता तो उसको प्रिय-तम भी कैसे कहा जा सकता है? इस प्रश्नका उत्तर 'विद्यारण्य' स्वामीने इस प्रकार दिया है—

अध्येतृवर्गमध्यस्थ-पुत्राध्ययन-शब्दवत् ।
भानेऽपि भानं भानस्य प्रतिबन्धेन युज्यते ॥

अर्थात् आत्माकी परमानन्द रूपताका भान बिल-कुल नहीं होता यह बात नहीं, भान तो होता है क्योंकि कोई प्राणी किसी भी योनि में क्यों न हो यह नहीं चाहता कि मैं न रहूं, वह चाहता है कि मैं रहूं सदा रहूं। प्रिय वस्तुके विषयमें ही यह इच्छा हो सकती है, और अभी हम ऊपर कह चुके हैं कि दूसरी वस्तुओंमें प्रेम आत्मा ही के लिए है, और आत्मामें प्रेम दूसरोंके लिए नहीं। इस लिए आत्माकी प्रियतमता और परमानन्दता का भान मानना ही पड़ेगा, परन्तु इतना अवश्य है कि वह हथेली पर रक्खे हुए आमलेकी तरह स्पष्ट प्रतीत नहीं होता। यदि होता तो सुखकी अभिलाषासे विषयोंमें मन न दौड़ता। जैसे किसी स्थान पर बहुतसे ब्रह्मचारी वेद घोष कर रहे हैं, उस मिश्रित घोषमें पिता अपने पुत्रके शब्दको पहिचान लेता है परन्तु स्पष्ट रूपसे नहीं, कारण उस वेद घोषमें अनेक ध्वनियां मिश्रित हैं, इस लिए स्वर का भान होने पर भी स्पष्ट भान नहीं होता। इसी तरह आत्माकी परमानन्दरूपता साधारण-तया भासित होने पर भी अज्ञानताके कारण स्पष्ट भासित नहीं होती—

"अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ।"
"नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः ।"

इत्यादि गीताके वाक्योंमें भी आत्माकी परमा-नन्द रूपताको अज्ञानके द्वारा आवृत बताया गया है, इसी परमानन्द रूप आत्माको लक्षित करके भारतीय तत्त्वदर्शी महर्षियोंने आज्ञा दी है, कि—"आत्मा वारे! द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः" श्रवण मननादिके द्वारा आत्माको साक्षात् करो। "तरति शोकमात्मवित्" आत्मज्ञानी सब दुःखोंको पार कर जाता है, उपनिषद् शास्त्रमें इस आत्माको—"न तत्र-वाग् गच्छति न मनो न विद्मो न विजानीमो यथै तदनुशिष्यात्" इत्यादि शब्दोंमें अवाङ्मनसगोचर होनेके कारण दुर्ज्ञेय कहा गया है, इसी दुर्ज्ञेय आत्मा-का विचार "स्थूणारुन्धति" न्यायसे या "शाखाचन्द्र" न्यायसे सब दर्शनोंमें किया गया है। अर्थात् किसी व्यक्तिको यदि अतिसूक्ष्म अरुन्धति तारा अथवा

द्वितीयाका चन्द्रमा दिखाना हो तो एक दम उसकी दृष्टिको तारा और चन्द्रमा पर लेजाना जरा कठिन होता है, इस लिए पहिले उसकी दृष्टि द्रव्य वस्तुकी सीधमें किसी वृक्षकी शाखा आदि पर टिकानी पड़ती है, अर्थात् उससे यह कहा जाता है कि तुम थोड़ी देरके लिए इसे ही तारा या चन्द्र समझो जब उसकी दृष्टि वहां टिक जाती है— तो उसे उसी सीधमें आगे बढ़नेके लिए कहा जाता है, इस प्रकार उसकी दृष्टि मुख्य द्रव्य पर पहुंच जाती है। इसी प्रकार सर्व-प्रथम चार्वाकदर्शनमें अन्नमय कोश जो यह शरीर है इसमें ही आत्मबुद्धि करनेका निर्देश है, शरीरकी रक्षा के विना सांसारिक सब सुख दुर्लभ हैं। आज किसी सङ्गठित समाजको बलवान् और सङ्गठित बनानेके लिए जो कहा जाता है कि व्यायाम करो, दूध, घी आदि पौष्टिक भोजन खाओ, मिलकर रहो– यह सब कुछ शरीर आत्मा पर ही घटता है। सच पूछो तो आजकल यूरोप और एशियामें युद्धकी जो आग धधक रही है, देहात्मभावना ही इसका मूल है, इसके आगे बौद्धदर्शन उपस्थित होता है, वह कुछ और आगे बढ़ता है, वह कहता है कि शरीर ही आत्मा नहीं होसकता— आत्मा शरीरसे पृथक् वस्तु है क्योंकि मृत शरीरमें चेतन्य उपलब्ध नहीं होता इस लिए उन्होंने विज्ञानको ही आत्मा माना है, परन्तु उनके मनसे संसारकी प्रत्येक वस्तु क्षणिक है इस लिए आत्मा भी क्षणिक है जब तक इस क्षणिक विज्ञान रूप आत्माका प्रवाह चलता रहता है, तबतक जीवन है, उसके अनन्तर निर्वाण। जैसे दीपकमें जब तक तैलबिन्दु परम्परा चलती रहती है, तब तक प्रकाश है, उसके अनन्तर दीपक निर्वाण हो जाता है। परन्तु इस क्षणिक आत्मवादमें अतीत वस्तुकी स्मृति नहीं हो सकती। उदाहरणार्थ हमने आजसे कुछ दिन पहले किसी व्यक्तिको देखा, जब हम दुबारा उसे देखते हैं तो हमें यह स्मरण होता है कि यह वही व्यक्ति है जो हमें वहां मिला था। क्षणिक विज्ञानको ही यदि हम आत्मा मान लें तो यह स्मृति नहीं होनी चाहिये, क्योंकि जिस विज्ञानने कुछ दिन पहले उस व्यक्ति को देखा था वह विज्ञान तो नष्ट हो चुका, क्योंकि विज्ञान क्षणिक है। जिस विज्ञानको स्मृति हुई है उसने कभी भी उस व्यक्तिके दर्शन नहीं किये, स्मृति उसीको हो सकती है जिसने अनुभव किया हो। एकने अनुभव किया दूसरेको स्मृति हो जाए ऐसा नहीं होता।

इस लिए यहांसे आगे फिर दृष्टि बढ़ाई तो आर्हन्त मत मिला, अर्थात् जैन दर्शन मिला। जैन दर्शनने स्थिर किया कि आत्मा क्षणिक नहीं है, किन्तु नित्य है। इस मतमें आत्मा नित्य होने पर भी परिणामी है, अर्थात् उसमें परिणाम हो जाता है। परिणाम वाली वस्तु नश्वर होती है। इससे और आगे चले तो वैशेषिकदर्शन पर दृष्टि थमी। इस दर्शनमें आत्माको शरीरातिरिक्त नित्य विभु माना गया है, वह पाप पुण्य करने वाला तथा दुःख सुख भोगता है, ज्ञानवान् है। परन्तु इस मतमें भी एक दोष है, वैशेषिक दर्शनका सिद्धान्त है कि ज्ञान आत्माका आगन्तुक गुण है स्वभावतः वह ज्ञानवान् या ज्ञान-स्वरूप नहीं है, इसलिए सिद्ध हुआ कि वैशेषिक मतमें आत्मा जड़ है। इसे छोड़ कर और आगे बढ़े तो सांख्य शास्त्र मिला, सांख्यमें आत्माको नित्यविभु तो माना ही है परन्तु साथ ही सांख्य मतमें आत्मा ज्ञान-स्वरूप है और नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव है। सत्वरजस्तमोमयी जड़ प्रकृति ही जगत्का स्वतन्त्र मूल कारण है। इस मतमें भी एक दोष है, जड़ प्रकृति को जगत्का स्वतन्त्र कारण मानना ठीक नहीं है, चेतनके बिना जड़में क्रिया हो ही नहीं सकती। यदि बिना चेतनके क्रिया मान भी ली जाय तो भी जड़ प्रकृतिके कार्योंमें जो हमें नियमबद्धता दीखती वह नहीं होनी चाहिये, बिना ड्राइवरके एञ्जिन नहीं चल सकता।

इस लिये इसे भी छोड़ कर आगे बढ़े तो ब्रह्म मीमांसा या वेदान्तदर्शन पर पहुंचे। वेदान्तका सिद्धा-न्त है कि जगत्में केवल एक तत्त्व है वही अपनी शक्तिसे जगत्की उत्पत्ति-स्थिति-प्रलय करता है। वह उसकी शक्ति उससे स्वतन्त्र नहीं है। वह ब्रह्म सच्चिदा-नन्द रूप है। निखिल विश्वकी आत्मा है —

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानां
एको बहूनां यो विदधाति कामान् ।
तमात्मस्थं ये नु पश्यन्ति धीरा—
स्तेषां शन्तिः शाश्वती नेतरेषाम् ॥

जो नित्योंका भी नित्य है, चेतनोंका भी चेतन है—जो अकेला ही बहुतोंकी कामनाओंको पूर्ण करता है, उस शरीरस्थ आत्माका जिसको अनुभव होता है उसे ही शाश्वत शांति प्राप्त होती है। इस वेदांतसिद्धांत पर पहुंच कर हम अपने लक्ष्य पर पहुंच जाते हैं। इस प्रकार अधिकारानुसार ये सब दर्शन हमें हमारे लक्ष्य तक पहुंचाने में सहायक बनते हैं। वेदान्त दर्शनकी शाङ्कर व्याख्या पर कई लोग कटाक्ष करते हैं, इस व्याख्याके अनुसार लोग कर्म विरोधी बन जाते हैं। परन्तु यह कटाक्ष शाङ्कर सिद्धान्तको अच्छी तरह न जानने वाले ही करते हैं, वस्तुतः इस आक्षेप में कोई सार नहीं। चित्तकी शुद्धिके लिये निष्काम कर्मकी आवश्यकता भगवान् शङ्करने सर्वत्र स्वीकार की है, यदि उन्होंने कहीं कर्मका खण्डन किया भी है तो सकाम कर्मका ही खण्डन किया है, क्योंकि सकाम कर्म रागादिका उत्पादक होनेसे बन्धक है, चित्त शुद्धिका हेतु नहीं है। शङ्कराचार्यजीको नैष्कर्म्यवादी इस लिए नहीं कहा जाता कि वे कर्म विरोधी थे। उनके नैष्कर्म्यवादका तात्पर्य यह नहीं है कि बुद्धिपूर्वक कर्म छोड़ देना चाहिए। कर्म तो कोई छोड़ ही नहीं सकता,

नहि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्म कृत ।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः ॥
"शरीर यात्राऽपि च ते न प्रसिद्ध येदकर्मणः ।"

इत्यादि गीताके वाक्योंसे यही सिद्ध होता है कि कर्म छोड़े नहीं जा सकते। कर्म ही तो जीवनका चिन्ह है, कर्म शून्यता तो शवावस्था हीमें सम्भव है। तो फिर नैष्कर्म्यवादका क्या तात्पर्य है ? सुषुप्ति अवस्थामें कर्म छोड़नेका संकल्प किये बिना भी स्वयं ही कर्म छूट जाते हैं, क्योंकि उस समय कर्मका मूल कारण देहाभिमान नहीं रहता। तात्पर्य निकला कि कर्म स्वयं मनुष्यको छोड़ देता है, मनुष्य कर्मको नहीं छोड़ता। इसीका नाम नैष्कर्म्यावस्था है, इसी नैष्कर्म्यावस्थाको प्राप्त करनेके लिए निष्काम कर्मकी परम आवश्यकता है। कर्मसे ही निष्कर्मता प्राप्त होती है। जैसे कांटा निकालनेके लिये कांटेकी ही आवश्यकता पड़ती है। इसी लिए तो भगवान् कृष्णने अर्जुनको कर्ममें प्रवृत्त किया। इतनी बात स्मरण रहे कि निष्काम कर्मका इतना ही अधिकार है, कि वह चित्त को शुद्ध करके उसमें परमानन्द रूप आत्मज्ञानकी योग्यता उत्पन्न करदे, शाश्वत शान्ति तो आत्मज्ञानके द्वारा ही मिल सकती है, इसी लिये भगवान् कृष्णने कहा है—

सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ।

अर्थात् सर्व कर्मोंका पर्यवसान ज्ञानमें ही होता है।



अनुपम शान्ति साधन

[लेखक—श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी]

पाठकगण! संसारका प्राणिमात्र शान्ति एवं सुखकी इच्छा करता है। कोई भी प्राणी यह नहीं चाहता कि वह दुःखमय अशान्त जीवन व्यतीत करे। किन्तु उनकी यह इच्छा पूर्ण नहीं होती। ज्ञान शक्तिप्रधान नरदेहधारी प्राणी भी लाखों करोड़ोंकी संख्यामें त्रिविध तापोंसे पीड़ित होकर अशान्त दुःखमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं, उन्हें मानसिक शान्ति क्षण भरके लिए भी प्राप्त नहीं होती। जब तक मनुष्यको वास्तविक रूपमें आत्म सन्तोष या मानसिक शान्ति प्राप्त न हो, तब तक बाह्य रूपमें चाहे वह कितना ही ऐश्वर्य सम्पन्न यहांतक कि सार्वभौम सम्राट् (शाहन्शाह) ही क्यों न हो जावे, उसे सच्चा सुख कभी प्राप्त नहीं हो सकता। जिसने आत्म-सन्तोष द्वारा त्रिविध तापोंसे मुक्ति पा ली है वही वास्तव में पूर्णरूपेण सुखी और जीवन्मुक्त है। किन्तु ऐसे पूर्ण आत्मसन्तोषी जीवन्मुक्त महात्मा आप को लाखोंमें कुछ इने गिने ही मिलेंगे।

यद्यपि मनुष्यमात्र इस परमशान्तिको प्राप्त करने की इच्छा करता है। तथापि अधिकांश लोगोंकी तो यह इच्छा पूर्णरूपेण बलवती नहीं होती। रोगीकी भूख की भांति ही उनकी यह इच्छा अदृढ़ एवं अहितकर होती है, इसी कारण पूर्ण नहीं हो पाती। जिनकी पूर्ण दृढ़ इच्छा होती है उनको कभी न कभी सफलता मिल ही जाती है। हां, इतना अवश्य है कि—अपने अपने संस्कारानुसार किसीको शीघ्र और किसीको विलम्बसे सिद्धि मिलती है। क्योंकि जब तक किसी सद्गुरुसे इसे प्रा करनेका ठीक उपाय ज्ञात न हो जावे तवतक तो विलम्ब होगा ही। जैसे रुपया प्राप्त करके धनवान् बननेकी इच्छा तो सभी रखते हैं, परन्तु जबतक रुपया कमानेके उपायोंका अवलम्बन न किया जायगा तब तक केवल रुपया रुपया कहनेसे कभी रुपया प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए सर्वप्रथम जिज्ञासुओंको मानसिक शान्ति प्राप्त करनेके उपाय जाननेकी परम आवश्यकता है। तदनन्तर (जानकर) उसे धीरे धीरे प्राप्त करें और प्राप्त की हुईका सदुपयोग तथा संरक्षण करें, तभी आत्मकल्याणके साथ साथ संसारका भी कुछ कल्याण कर सकेंगे।

आज जिज्ञासुजनोंको मानसिक शान्ति प्राप्त करने का एक अद्भुत अनुपम उपाय हम बतला रहे हैं। भारतके एक तपोनिष्ठ वीतराग महात्माजीने लोक-कल्याणार्थ इसे श्रीस्वाध्यायमें प्रकाशित करनेकी हमें आज्ञा दी है। इससे न केवल मानसिक शान्ति ही प्राप्त होती है अपितु सांसारिक सभी संकल्पित कार्यों की सिद्धि भी हो सकती है। कई विद्यार्थियोंने इसके द्वारा परीक्षा में सफलता प्राप्त की है, रोगियोंके रोग नष्ट हुए और आपत्तिग्रस्तों की आपत्तियां भी निवृत्त हुई हैं। किन्तु पूज्यपाद महात्माजीकी आज्ञा है कि इसको सकाम न करके केवल निष्काम भावसे भगवत्प्रीत्यर्थ ही करना चाहिये, इससे अधिक कल्याण होता है।

इस प्रासादिक विधानका इतिहास पूज्यपाद महात्माजीने यों सुनाया था —

"सं० १९९० के वैशाखमें एक दिन हम अपने नित्य कृत्य अभ्यासमें प्रातःकाल बैठे हुए थे, उसी दिन अभ्याससे उठते उठते सहसा कुछ प्रेरणा हुई तो १० बजे हमने पेन्सिलसे एक कागज पर यह प्रार्थना (श्लोक) लिख डाली। तदनन्तर भोजनादिसे निवृत्त होकर मध्यान्हके पश्चात् जब आराममें बैठे तब पुनः हम अपने लिखे हुए इस श्लोकको देखने लगे तो हमें शंका हुई कि यह तो अशुद्ध बन गया, इसको बदल कर शुद्ध बनाना पड़ेगा, अस्तु। यह बात तो हो गई, इसके उपरान्त उसी दिन सायंकालको जब हम अपनी एकान्त भजन कुटीमें पुनः नित्य कृत्यके लिए बैठे तो उसी समय क्या देखते हैं कि एक भव्यमूर्ति तेजस्वी वृद्ध महात्मा (जिनका वर्ण गौर, श्वेत घनी लम्बी दाढ़ी,

मूंछें बड़ी बड़ी, चमकीली आंखें, चौड़े कान, गुच्छाकार श्वेत बालोंसे ढके हुए कर्ण-विवर, चढ़ी हुई भ्रकुटी) सामने खड़े हैं। वे बिजली की भांति कड़क कर यों कहने लगे कि—'क्यों अशुद्ध है ? क्या ऐसा समास नहीं होगा ? यह जो लिखा गया है बिल्कुल शुद्ध है बदलना नहीं' इतना कहकर वह दिव्य मूर्त्ति तो वहीं अदृश्य हो गई और हमारे भी उसी क्षण ध्यानमें आ गया कि ठीक है, यह तो शुद्ध ही है, केवल हमारा भ्रम ही था। उसी समय हमें यह भी निश्चित हो गया कि यह श्लोक भगवत्प्रदत्त प्रासादिक वस्तु है, इससे लोगोंका बहुत कल्याण हो सकता है। इसके अनन्तर हमने कुछ अपने प्रेमी जनोंको इसका जप करनेके लिए कहा, उन्होंने करके पर्याप्त लाभ उठाया।"

पाठकवृन्द ! अब आप उक्त महात्माजीका परिचय तथा साधनको जाननेके लिए उत्कण्ठित अवश्य होंगे, अतः यह भी हम आपको बताए देते हैं कि ये महात्माजी भारतकी छिपी हुई अद्भुत विभूतियोंमेंसे हैं। इनको वास्तविक रूपमें तो वही लोग जान सकते हैं जो कुछ दिन इनकी सेवामें रह कर उपदेशामृत पान करनेका सौभाग्य प्राप्त कर चुके हैं। अथवा कुछ-कुछ वे लोग भी आपके सार्वदैशिक पाण्डित्य और महान् दार्शनिकताको जान सकते हैं जिन्होंने आपके ग्रन्थों (**श्रीआत्मविलास, श्रीमहानुभव शक्तिस्तव, मन्दाक्रान्ताशतक देवीस्तव, श्रीराष्ट्रालोक, श्रीराष्ट्रसञ्जीवन, श्रीपरशुरामस्तोत्र, श्रीसप्तपदीहृदय** आदि २) का भलीभांति अध्ययन किया हो। आपका वह प्रासादिक अनुभूत मंत्र (प्रार्थना श्लोक) और उसका विधान यह है:—

प्रार्थना—

प्रभो ! शम्भो ! दीनं विहितशरणं त्वच्चरणयो-
र्भवारण्यादस्माद्विषमविषयाशीविषवृतात् ।
समुद्धृत्य श्रद्धाविधुरमपि बद्धादरकरं
दयादृष्ट्या पश्यन्निजतनयमात्मीकुरु शिव ! ॥१॥

अर्थ—हे सर्वशक्तिमन् ! समस्त संसारका कल्याण करने वाले कल्याणरूप शिव भगवन् ! आप के चरणोंमें दीनभावसे शरण आए हुए मुझको विषयरूपी भयङ्कर विषधर सर्पोंसे भरे हुए इस संसार रूपी जंगलसे बाहर निकाल कर अपनी दया-दृष्टिसे देखते हुए अपने पुत्रको अपना आत्मीय बनाओ। यद्यपि श्रद्धा आदिका मुझे ज्ञान नहीं है, तथापि चारों ओरसे भयभीत होकर हाथ जोड़े हुए शरणमें आया हूं अतः अपने इस दीन पुत्रको हे शिव ! अपने आप स्वीकार करो ॥१॥

यह प्रार्थना कल्याणके योगाङ्क पृष्ठ ६१८ पर और आत्मविलासमें भी प्रकाशित हो चुकी है। किन्तु वहां केवल मूल श्लोकमात्र ही छपा है, न श्लोकार्थ है और न इसका कोई विधान ही है। एतदर्थ अब उक्त महात्माजीने अपना अनुभूत विधान बतलानेकी कृपा की है। इसका सरल अनुभूत विधान यह है—

जब रात्रिके समय आप शयन करनेके लिए शुद्ध बिस्तर पर लेट जावें और निद्रा आनेको बिल्कुल तैयार हो, उस समय अपने इष्टदेवका ध्यान करके तीन बार इस मंत्र (ऊपर लिखे हुए प्रार्थना श्लोक) को श्रद्धा-भक्ति पूर्वक अर्थज्ञान सहित उच्चारण करके सो जावें। प्रातःकाल उठते ही उपर्युक्त प्रकारसे पुनः तीन बार प्रार्थना करके फिर भूमि पर पैर रक्खें।

इस प्रकार कुछ दिन नित्य अभ्यास करनेसे साधकको परम शान्ति प्राप्त होगी। चाहे कितनी ही विपत्तियां साधक पर क्यों न आवें उनका उस पर कोई प्रभाव नहीं होगा। साधकका जीवन सर्वथा सुखी और शान्तिमय बन जाएगा। साधक जितना श्रद्धालु भगवद्भक्त सदाचारी एवं संयमी होगा उतना ही अधिक उसे शीघ्र लाभ होगा। इस साधनके करने वालेको कभी दुःस्वप्न नहीं आते, अभिचार भूतप्रेतादिकी कोई बाधा नहीं होती, रोग शत्रु आदि नहीं सताते। अधिक क्या साधकका कोई भी अकल्याण नहीं हो सकता। केवल दृढ विश्वास और श्रद्धापूर्वक नियमित रूपसे साधन करनेकी आवश्यकता है। ऐसा अद्भुत अमूल्य और इतना सरल

साधन जिज्ञासुओंको और कहीं नहीं मिलेगा। इतने पर भी यदि कोई इसका अभ्यास करके लाभ न उठा सके तो उसके प्रारब्धका ही दोष समझना चाहिए।

वैसे तो कई भक्तजन अपनी २ श्रद्धानुसार इस प्रार्थनाका कई प्रकारसे पाठ करते हैं। कोई त्रिकाल सन्ध्यामें एक, तीन, पांच, सात या ११ बार जपते हैं। कोई एक ही बार जपते हैं। कोई भगवान्के मन्दिर में जाकर यथा सामर्थ्य जपते हैं। उन सबको अपनी-अपनी श्रद्धानुसार प्रत्यक्ष फल भी अवश्य मिलता ही है। एक अज्ञात स्थानमें अपरिचित भक्तको उक्त महात्माजीने देखा था—वह मन्दिरमें खूब तार-स्वर से यह प्रार्थना कर रहा था और उसकी आंखोंसे अश्रुधारा बह रही थी।

तात्पर्य यह है कि यह प्रासादिक प्रार्थना है, अतः इसका आप जितना अधिक जप करेंगे उतना ही अधिक लाभ होगा। परन्तु यदि आपको अधिक अवकाश नहीं है और मानसिक शान्ति प्राप्त करना भी आप अवश्य चाहते हैं तो ऊपर बतलाया हुआ रात्रिका सरल साधन अवश्य करिये, इसीसे आपको बहुत कुछ लाभ होगा, यह निश्चित है।

जिन जिज्ञासुओंको कोई अध्यात्मतत्त्व या पारमार्थिक दार्शनिक ग्रन्थ समझमें न आता हो तो वे ११ बार इस प्रार्थना मंत्रको पढ़ कर पुनः ग्रन्थाध्ययन आरम्भ करें, सब रहस्य समझमें आने लग जाएंगे। "आत्म-विलास" ग्रन्थकी तो यह प्रार्थना कुञ्जी ही समझिए। इसी लिए श्री १०८ पूज्यपाद आचार्य चरणोंने आत्मविलासके पहले पृष्ठ पर ही यह मूल प्रार्थना दी है। अतः नित्य पहले ११ बार भक्तिभाव-युक्त तार-स्वरसे यह प्रार्थना करके पुनः "श्रीआत्म-विलास" का अध्ययन आरम्भ करें तो इसके सभी गूढ़ तत्त्व आपको स्वयं समझमें आते जाएंगे।

अन्तमें सभी श्रद्धालु जिज्ञासुजनोंकी सेवामें हमारी विनम्र प्रार्थना है कि — इस साधनके द्वारा जिन-जिन महानुभावोंको जो-जो लाभ हो वह सब सम्पादक "श्रीस्वाध्याय" सोलन (पंजाब) के पते पर अवश्य लिखनेकी कृपा करें।

मदहोशी

[कवयिता — श्री पं० नन्दकुमारजी शर्मा, कविभूषण विशारद]

तेरी इस मादक मृदुताने मन पर जब से किया प्रभाव।
तबसे तव सान्निध्य प्राप्तिका दिनदिन दूना बढ़ता चाव॥
भय लज्जा कुलकान मान सब लगे किनारा करने आप।
साथ निभा अरमान कुछ दिनों वह भी खिसक दिये चुपचाप॥

प्रियतम-मय जीवन है फिर सब दूंर दुईका नाता है।
इस जगके अणु-अणुमें व्यापक वह सर्वत्र दिखाता है॥
भुजा उठा कर जिसको भेंटू वही जेट में आता है।
दर्पणमें प्रतिबिम्ब उसीका देखूं जभी दिखाता है॥

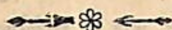
तारी दे-दे कर हंसते हैं देख दशा मेरी सब लोग।
ज्यों ज्यों सुहृद दवा करते हैं त्यों त्यों बढ़ता जाता रोग॥
मैं प्रसन्न मतवालेपन पर फूला नहीं समाता हूं।
जब चाहूं बस तभी पास निज जीवन-धनको पाता हूं॥

बढ़ते बढ़ते रोग अगर निज सीमा कर जाता है पार।
बन जाता है स्वयं औषधि इसको क्या समझे संसार॥
पागल कहते हैं सब मुझको लेकिन अपना ध्यान नहीं।
मैं हंसता हूं इन लोगोंको मणि-पाहन पहचान नहीं॥

विभो ! साङ्ग हो इसी तरहसे मेरा तो यह जीवन यज्ञ।
रहें समझते दुनिया वाले इसी तरहसे मुझको अज्ञ॥
अपने बेगाने सब मिलकर कहें भले मुझको दोषी।
जन्म जन्म यह रहे मुबारिक मुझको मेरी मदहोशी॥

क्या कलियुग समाप्त हो रहा है ?

[लेखक—विद्याभूषण विद्यावागीश श्री पं० दीनानाथ शर्मा शास्त्री सारस्वत]



श्रीयुत राजनारायण षट्शास्त्रीने 'चेतावनी' नामक पुस्तक प्रकाशित करके यह सिद्ध करनेका साहस किया था कि— 'कलियुगकी समाप्ति सं० २००० में हो जाएगी। कलियुग १२०० दिव्यवर्षोंका नहीं, किन्तु ४८०० वर्षोंका है। दिव्यवर्षसे देवताओं का वर्ष अभीष्ट नहीं, किन्तु सूर्यवर्ष अभीष्ट है, फलतः ४८०० मनुष्य वर्षोंका कलियुग है।' उक्त पुस्तक बहुत संख्यामें छापी जानेके कारण बहुत प्रचलित होगई है। इधर क्रान्तिका युग होनेसे इसका कुछ प्रभाव भी यत्र-तत्र पड़ गया है। परन्तु वस्तुतः यह पक्ष निर्मूल है।

इसका खण्डन यदि पाठक सर्वाङ्गीणतया देखना चाहें तो 'श्रीस्वाध्याय' के सम्पादक **श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी** द्वारा लिखित **'चेतावनी समीक्षा'** देखें, जिसका मूल्य ।।) है। उक्त पुस्तक या तो श्री सम्पादक महोदय द्वारा सोलनसे मिल सकती है, अथवा— 'श्रीसत्यसन्देश कार्यालय, गुड़गावां (पञ्जाब)' इस सङ्केतसे मिल सकती है।

मैं इस सम्बन्धमें पाठकोंके प्रति संक्षिप्तरूपमें दो चार बातें रखनेका प्रयत्न करता हूं। आशा है पाठकगण इधर अवहित होंगे।

कल्किपुराण तथा विष्णुपुराण एवं श्रीमद्भागवत-पुराणादिमें एक श्लोक आता है—

> चत्वारि त्रीणि द्वे चैकं कृतादिषु यथाक्रमम्।
> संख्यातानि सहस्राणि द्विगुणानि शतानि च॥

इसका भाव यह था कि सत्ययुगादिके क्रमसे चार, तीन, दो, एक सहस्र तथा उनसे दुगुने सौ— इस प्रकार दिव्य वर्ष हुआ करते हैं। अर्थात् सत्ययुगके ४८०० तथा त्रेतायुगके ३६००, तथा द्वापरके २४००, तथा कलियुगके १२०० दिव्यवर्ष होते हैं, इसी प्रकार सत्यादि युगोंमें धर्म भी क्रमसे चार पाद, तीन पाद, दो पाद, एक पाद रहता है। अर्थ है भी यह वास्तविक ही, परन्तु श्रीराजनारायणजीने इसको बिलकुल पलट दिया है। वे कहते हैं कि—'४ पाद धर्म वाला सत्ययुग १२०० वर्षोंका, ३ पाद धर्मवाला त्रेता २४०० का, २ पाद धर्मवाला द्वापर ३६०० का और १ पाद धर्मवाला कलियुग ४८०० वर्षोंका है।'

ओह! कितना साहस किया गया है। श्लोक कितना स्पष्ट कह रहा है कि— "कृतादिषु यथाक्रमं चत्वारि सहस्राणि, त्रीणि सहस्राणि, द्वे सहस्रे, एकं सहस्रम्" परन्तु बाबाजीने बिल्कुल ही उलटा कर दिया। उन्होंने ग्रन्थकारके संक्षेपका यों दुरुपयोग कर डाला।

अब हम इस विषयमें महाभारतके सर्वथा स्पष्ट प्रमाण देते हैं, जिससे उनका पक्ष सर्वथा कट जाता है; देखिये बनपर्व में—

> चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां तत् कृतं युगम्।
> तस्य तावच्छती सन्ध्या सन्ध्यांशश्च तथा विधः॥
> १८८।२२

यहां पर कृत (सत्य) युगकी ४००० चार हजार वर्ष संख्या बतलाई गयी है, और ४०० चार सौ उसकी सन्ध्या तथा ४०० उसके सन्ध्यांशके वर्ष बतलाए गए हैं। इस प्रकार यहां पर सत्ययुग ४८०० वर्ष का कहा गया।

अब त्रेतायुगके लिये देखिये—

> त्रीणि वर्षसहस्राणि त्रेतायुगमिहोच्यते।
> तस्य तावच्छतीसन्ध्या सन्ध्यांशश्च तथाविधः॥
> १८८।२३

यहां पर त्रेतायुगको सन्ध्या सन्ध्यांशों सहित ३६०० वर्षका कहा गया है। अब द्वापरके विषयमें देखिये—

तथा वर्षसहस्रे द्वे द्वापरं परिमाणतः ।
तस्यापि द्विशती सन्ध्या सन्ध्यांशश्च तथाविधः ॥
१८८।२४

यहां पर द्वापरयुगको २४०० वर्षोंका कहा गया है । अब कलियुग के विषय में देखिये—

सहस्रमेकं वर्षाणां ततः कलियुगं स्मृतम् ।
तस्य वर्षशतं सन्धिः सन्ध्यांशश्च ततः परम् ॥
१८८।२५

यहां पर स्पष्टतया कलियुगको १२०० वर्षका कहा गया है, अर्थात् एक हजार कलिके वर्ष, एक सौ उस की सन्ध्या, तथा एक सौ सन्ध्यांशके वर्ष । इस प्रकार प्रकृत संख्या हुई ।

यह श्लोक इतने स्पष्ट हैं कि— इनमें श्री राजनारायणजीका इष्ट सिद्ध नहीं हो सकता । यह उन्होंने नहीं सोचा कि जब मन्वादि स्मृतियोंमें सत्ययुगमें मनुष्यकी साधारण आयु चार सौ वर्षकी, त्रेतायुगमें तीन सौ वर्षकी, द्वापरमें दो सौ वर्षकी, कलिमें एक सौ वर्षकी मानी गई है, और सत्ययुगके धर्मके चार पाद, त्रेतामें तीन, द्वापरमें दो, एवं कलिमें एक पाद माना जाता है । इस प्रकार सत्ययुगसे कलियुग तक उत्तरोत्तर ह्रास चला आता है; यह बात वे स्वयं भी मानते हैं; तब सत्ययुगकी आयु १२०० और त्रेताकी २४००, द्वापरकी ३६००, तथा कलियुगकी ४८०० मानी जाए तो क्या यह उत्तरोत्तर अपकर्ष होगा ? वा उत्तरोत्तर उत्कर्ष ? अतएव स्पष्ट है कि उनका पक्ष निर्मूल है । कलियुग प्रारम्भ हुए आजतक ५०४३ वर्ष माने गये हैं । यदि उनके अनुसार कलियुगके ४८०० वर्ष होते हैं, तब तो सत्ययुगको प्रारम्भ हुए अब तक २४३ वर्ष होजाने चाहिये थे, पर ऐसा वे भी नहीं मानते, तब यह उनका निर्मूल पक्ष है ।

दूसरी भूल उन्होंने यह की है कि ऊपर बताए गए वर्ष दिव्य वर्ष हैं अर्थात् देवताओंके वर्ष हैं । मनुष्योंका एक वर्ष देवताओंका एक दिन होता है । तब मनुष्य वर्ष निकालने के लिए उन दिव्य वर्षोंको ३६० से गुणा करना पड़ता है । जैसे कि कलियुगके १२००वर्ष दिव्य हैं । इनके मनुष्यवर्ष निकालनेके लिए ३६० से गुणा करने पर ४,३२,००० चार लाख, बत्तीस हजार वर्ष बनते हैं । यही कलियुगके मनुष्य-वर्ष हुए । परन्तु पं० राजनारायणजीने उक्त वर्षोंको सूर्याब्द मान कर एक दिन रात अर्थ किया है । परन्तु दिव्यका अर्थ सूर्य नहीं, तथा अब्दका अर्थ दिन नहीं । इस कारण उनकी कल्पना ठीक नहीं । कालिकापुराण के २५वें अध्यायमें यह बात स्पष्ट करदी गई है, जैसे—

'नृणां मानेन दशभिर्लक्षैः सप्तभिरुत्तरैः ।
अष्टाशितिसाहस्रै र्मानं कृतयुगस्य तु ॥' इत्यादि

इसमें सत्ययुगके मानव वर्ष १७,२८,००० लिखे गये हैं । ४८०० दिव्य वर्षोंको ३६० से गुणा करने पर यही संख्या मिलती है । इसी प्रकार अग्रिम युगों के लिये भी जानना ।

जहां पर सनातनधर्म इस विषयमें सम्मत है, वहां पर आर्यसमाज भी इसमें सम्मत है । आर्यसमाजी सज्जन भी कल्पकी संख्या ४,३२,००,००,००० चार अरब बत्तीसकरोड़ सालकी मानते हैं । यह संख्या तब उपपन्न हो सकती है, जबकि सत्ययुगादिके ४८०० वर्ष दिव्य माने जाएं, और उनको ३६०से गुणा करके उनके मानववत्सर बनाए जाएं । तभी तो आर्यसमाज की पुस्तक सत्यार्थप्रकाश, संस्कारविधि आदिमें भी 'आर्यसृष्टिसंवत्सर' इसी हिसाबसे लगा रहता है । आजकल १,९७,२९,४९,०४३ वर्ष बीत चुके हैं ।

चेतावनीमें स्वा०दयानन्दजीके गणितपर खूब उपहास किया गया है । यद्यपि यह हम भी मानते हैं कि वहां पर स्वा० दयानन्द भूल गये हैं; उन्हें अपने वर्षों में १,२०,९६,००० सन्ध्यांशके इन भुक्त वर्षोंका; तथा १,३८,२४,००० इन भोग्य वर्षोंका अपने अङ्कोंमें सङ्कलन करना चाहिए था, नहीं तो स्वामी दयानन्दजी के मतमें ४,२९,४०,८०,००० वर्ष जाकर कल्पसंख्या बैठती है । परन्तु वर्तमान आर्यसमाजी भी कल्पसंख्या हमारे ही अनुसार अर्थात् ४,३२,००,००,००० इतने वर्ष मानते हैं । तथापि स्वा० दयानन्दकी युग गणना हमारे शास्त्रोंके अनुकूल ही है, प्रतिकूल नहीं । परन्तु श्री राजनारायणजीने सर्वथा विपरीतता कर दी है । अतः उनका पक्ष माननीय नहीं ।

इस प्रकार जब कलियुगका एक भाग भी समाप्त नहीं हुआ; तब कल्की अवतार भी अभी कहांसे हो जाएगा ? यदि श्रीराजनारायणजीने जनतामें धार्मिक प्रवृत्तिको बढ़ानेके लिए यह विभीषिका दी हो; तथापि उसकी नींव सत्यमूलक न होनेसे यह प्रवृत्ति भी हानिकारक ही है, लाभप्रद नहीं।

वहुतसे पुरुषों पर श्रीराजनारायणजीकी चेतावनी का प्रभाव इस लिए भी पड़ा है कि— इसमें महायुद्ध-का वर्णन किया गया है, परन्तु इस महायुद्धका कलियुगकी समाप्तिसे कोई सम्बन्ध नहीं। इस योगका वर्णन तो 'श्रीस्वाध्याय' के सम्पादक महोदयने पं० राजनारायणजीसे भी पहले ही कर डाला था। अतएव सब सज्जनोंको यह बात निश्चित जान लेनी चाहिए कि—कलियुग अभी ५०४३ वर्ष ही बीता है, शेष इसके वर्ष ४,२६,९५७ रहते ही हैं। तथापि इस समयमें सारे संसार पर सङ्कटका योग अवश्य है। इससे सभी लोगोंको अपनी धार्मिक प्रवृत्ति बढ़ानी चाहिये। उन्हें सात्विक दानकी ओर अभिरुचि बढ़ानी चाहिए, बड़े २ यज्ञादि भी करने चाहियें। इसके साथ ही साथ अपने और प्रबन्ध भी कर लेने चाहियें कि जिससे पांच छः मासके अन्दर सम्भावनीय आपत्तियोंकी चिनगारियोंसे अपने आपको बचा सकें। हम परमात्मासे विनीत प्रार्थना करते हैं कि वह भारतवर्षको जो कि सर्वथा असहाय है— स्वयं ही अपनी छायामें रखकर उसमें शान्ति रखें; भारतवर्षके भङ्ग करनेके इच्छुक लोगोंका समूलोन्मूलन हो। एवमस्तु।❀

❀ सूचना—'चेतावनी समीक्षा' पुस्तक जिसका मूल्य ।।।) है 'श्रीस्वाध्याय' सम्पादकके पाससे मंगाकर पाठक अवश्य पढ़ें। उनकी एतद्विषयक सब शङ्काओंका समाधान होगा।

नागपंचमी

[लेखक—श्री अचिन्त्यराम शास्त्री, बी० ए०]



सनातनधर्म एक ऐसा धर्म है जिसके नियम आत्मिक, मानसिक, सामाजिक, धार्मिक तथा राजनैतिक उन्नतिके पथपर प्राणिमात्रको आगे बढ़ानेकी शक्ति रखता है। यही कारण है कि इसके प्रत्येक नियम तथा आचरणमें उक्त सभी बातें अन्तर्निहित पाई जाती हैं। आज हम नागपञ्चमीके त्यौहारका वर्णन आपके सामने रखना चाहते हैं और बतलाना चाहते हैं कि हमारे योग्य महर्षियोंने इस त्यौहारको बनाकर हमारा कितना कल्याण किया है। संसारमें प्रायः देखा जाता है कि साधारण जनता उपकारीके उपकारका प्रतिदान करनेको तैयार रहती है, परन्तु अपकारी या उदासीनके लिए कोई कुछ करनेको तैयार दृष्टिगोचर नहीं होता। एक सनातनधर्म ही है जो सांप जैसे परम-कष्टदायक प्राणिको भी दूध पिलानेकी आज्ञा देता है। वह सांप जिसके छूते ही मनुष्य उर्वशी अप्सराके नृत्यको भी मात कर देता है और बहुधा प्राणों तकसे भी हाथ धो बैठता है उसे भी सम्मानमें दूध पिलानेकी विधि यदि कहीं है तो वह केवल सनातनधर्ममें ही है। है न यह दया, क्षमा और परोपकारकी पराकाष्ठा। इस धर्म नियमको पालने वाले क्या कभी स्वार्थान्धकारमें पड़कर अपने सरल मार्गको भूल सकते हैं ?

पञ्जावके अन्दर आर्यसमाजकी कृपासे यद्यपि त्यौहारोंका यथार्थ रूप नष्ट होगया है परन्तु यू० पी० सी० पी० में अभी इनका मनाया जाना पाया ही जाता है। श्रावण सुदि पञ्चमी 'नागपञ्चमी' होती है। इस दिन भविष्यादि पुराणोंके अन्दर व्रत तथा नागपूजनका विधान है। घरके सम्मुख द्वारके दोनों ओर गोबरकी पंक्ति खैंची जाती हैं। गुग्गलका धूप तथा मधुर भोजनका विधान है। श्रावण भाद्रपद, तथा

आश्विन तीनों मासकी पञ्चमियोंमें यह कर्तव्य लिखा है। अब हम सर्व प्रथम इसे आयुर्वेदकी दृष्टिसे देखना चाहते हैं। श्रावणसे वर्षाका आरम्भ हो जाता है, घरोंमें सीलावके कारण दुर्गन्ध उत्पन्न होजाती है अनेक प्रकारके जीव जन्तु उत्पन्न हो जाते हैं। मनुष्योंकी पाचनशक्ति कम हो जाती है, नागपूजनके विधानसे ये सभी वाधाएं दूर होजाती हैं। गुग्गलका धूम दुर्गन्धको तथा अनेक प्रकारके कीटाणुओंको नष्ट कर देता है। गोबरकी पंक्ति खैंच देनेसे वाह्य कीटाणु घरोंके अन्दर प्रवेश नहीं कर पाते। अतः गृह निवासियोंका स्वास्थ्य ठीक रहता है। मधुर-भोजन तथा उपवाससे अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। आसोजके अनन्तर भगवान् अंशुमालीकी प्रदीप्त किरणोंसे सीलाव नष्ट हो जाती है और विविध प्रकारके कीटाणु जो वर्षाऋतुमें पनप पड़े थे वे नष्ट हो जाते हैं; फिर इन पञ्चमीव्रतोंकी भी समाप्ति हो जाती है।

नागपञ्चमीमें नाग पूजनसे सर्प क्यों प्रसन्न होते हैं? इसके कारणकी जब गवेषणा होती है तो हमें पुराणोंके पारायणसे ज्ञात होता है कि माता कद्रू के शापसे जब जनमेजयके यज्ञमें सर्पोंका नाश होने लगा तो जरत्कारूके पुत्र महर्षि आस्तीकके यत्नसे वह सर्पयज्ञ पञ्चमीके दिन ही समाप्त हुआ था और सर्प अग्निमें भस्म होनेसे बचे थे। अतः यह दिन उनकी समृद्धिका है; इसमें पूजन तथा दुग्धपानसे वे प्रसन्न होकर पूजककी कामनाओंको पूर्ण कर देते हैं; तथा उसे सर्पके भयसे उन्मुक्त कर देते हैं। भविष्यपुराणमें तो यहां तक लिखा मिलता है तथा मेरा अपना अनुभव भी है कि महर्षि आस्तीकका नाम श्रवण करानेसे सर्प भाग जाते हैं। भविष्यपुराणमें लिखा है कि—

> सर्पापसर्प भद्रन्ते दूरंगच्छ महाविष !
> जनमेजयस्य यज्ञान्ते आस्तीक बचनं स्मर ॥
> आस्तीकवचनं श्रुत्वा यो सर्पो नापसर्पति।
> शतधा भिद्यते मूर्ध्नि शिंशवृक्ष फलं यथा ॥

इस लेखसे भी उक्त बातकी पुष्टि होती है कि आस्तीकने वह सर्पयज्ञ बन्द कराया था और उसके बन्द होनेसे सर्पोंने परम प्रसन्न होकर पूजकको निर्भय करनेका प्रण किया था। यह तो है पौराणिक स्वरूप, अब तनिक लौकिक रीतिकी ओर भी देखिए कि अनेक प्रकारके कीटाणुओंके भक्षणसे सर्पोंके पेटके अन्दर कई प्रकारके रोगोंका होना सम्भव है; दुग्ध-पानसे वह उदर रोगोंसे विमुक्त होकर परम प्रसन्न हो जाते हैं।

सर्पडशनसे जिनकी मृत्यु हो जाती है शास्त्रका विधान है कि उनका अग्रिम जन्म निर्विष सर्पका होता है। नागपूजन तथा नागपञ्चमीके व्रतसे वह सर्पयोनिसे निर्मुक्त हो जाता है। ऐसा शास्त्रका विधान है। जिन्हें शास्त्र पर विश्वास है उन्हें यह फल पूर्णतया प्राप्त होता है और जो शास्त्र पर विश्वास नहीं करते वह कोरेके कोरे रह जाते हैं। क्योंकि विश्वासहीनके लिए कहीं भी स्थान नहीं।

[पृष्ठ २३ का शेष]

वा ऊनी रंगे साफ वस्त्रमें बांध कर पूजन कर ब्राह्मणों का पूजन कर पुरोहितसे रक्षा बन्धवावे। पुरोहित निम्नलिखित मंत्र पढ़ कर रक्षा बांधे—

> येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः।
> तेन त्वामभिबध्नामि रक्ष मा चल मा चल ॥

(रक्षाबन्धनका निषिद्ध काल भद्रा है) इस प्रकार पुरोहित यजमानोंके, बहिनें भाइयोंके, पुत्री पिताके तथा अबलाएं योद्धाओंके रक्षा पोटली बांध कर अपनी रक्षाका भार वर्ष भरके लिए उन पर सौंप देती थीं। वे भी जातीयता राष्ट्रियताके अभिमानी अपनी भगिनियों पुत्रियों और स्त्रियोंकी मानरक्षाके लिये प्राण तक बलिदान कर यश प्राप्त करते थे। यही उपाकर्म तथा रक्षाबन्धनका संक्षिप्त भाव है। हिन्दू जातिको इससे शिक्षा ग्रहण कर स्वाध्याय द्वारा आत्मिकोन्नति तथा शरीर उन्नति प्राप्त करके जातिसेवा देशसेवामें अग्रसर होना चाहिए।

उपाकर्म श्रावणी रक्षाबन्धन

[लेखक — श्री पं० केशवानन्द जी शास्त्री]



श्रावण शुल्क पूर्णिमा तदनुसार ता० २६ अगस्तको उपाकर्म पर्व तथा रक्षाबन्धनका परमपवित्र त्योहार आने वाला है, जिसको सम्पन्न करनेके लिए 'महाजनो येन गतः स पन्था" का उपासक हिन्दू समाज अभीसे तैयारियां कर रहा है। सद्गृहस्थ द्विजातियोंके घरोंमें चरखे चल रहे हैं, जिनसे पवित्र सूत्र कात-कात कर ब्रह्म सूत्र तैयार किए जायेंगे। विधिपूर्वक पूजन पूर्णिमाके दिन होगा। वही संस्कृत यज्ञोपवीत आगामी वर्ष की श्रावणी पूर्णिमा पर्यन्त धारण किए जाएंगे। उसी दिन मध्यान्होत्तर भगिनियें भाइयोंके, पुत्रियां पिताओंके, अबला महाबली योद्धाओं के, तथा पुरोहित यजमानों के हाथों पर माङ्गलिक सूत्रकी रखड़िये (रक्षा) बांधेगे। हिन्दू घरोंमें अच्छी चहल पहल रहेगी।

अब विचार यह करना है कि इस उत्सवके मूलमें क्या तत्त्व निहित है? यह शास्त्रोक्त है या केवल प्रथा है? यही विवेचन करना इस निबन्धका प्रधान उद्देश्य है। श्रौत स्मार्त्त सनातनधर्ममें स्वाध्याय (अध्ययनाध्यापन) की सर्वोपरि प्रधानता तथा महनीय महिमाका बारम्बार वर्णन पाया जाता है। चारों वर्णोंमें प्रथम वर्ण ब्राह्मण का तो स्वाध्याय ही मुख्य कर्तव्य निर्णीत है, क्षत्रिय वैश्यकी द्विजाति संज्ञा भी स्वाध्यायके ही कारण है। चार आश्रमोंमें प्रथम आश्रम ब्रह्मचर्य्यका निर्माण केवल स्वाध्यायके लिए हुआ है। ब्रह्मचर्य समाप्ति पर समावर्तनके समय आचार्य्य शिष्यको "स्वाध्यायान्मा प्रमदः"। 'स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्" आदि उपदेश देकर विदा कर देता है, जिसका स्पष्ट यही भाव है कि गृहस्थाश्रममें रहते हुए भी पढ़ते पढ़ाते रहो। तृतीयाश्रम वानप्रस्थका मुख्य कर्म तप और स्वाध्याय ही रह जाता है। चतुर्थाश्रमी सन्यासीका समय भी परमतत्त्वचिन्तन तथा तदङ्गभूत उपनिषदादि ग्रन्थोंके स्वाध्यायमें व्यतीत होता है। सन्यासी के लिए यहां तक आदेश है—

सन्यसेत् सर्व कर्माणि वेदमेकं न सन्यसेत्"

अर्थात् सन्यासी सब कर्मोंको त्याग दे, केवल वेदको न त्यागे। स्वाध्याय मानसिक उन्नतिके कालमें उतना ही आवश्यक है जितना कि शरीरकी स्थिति और उन्नतिके लिए अन्नादि आहार। मनुष्य जीवनका चर्म लक्ष्य आत्मोन्नति भी मानसिक उन्नतिके बिना नहीं हो सकती। मानसिक उन्नति स्वाध्यायके बिना नहीं होती, अतः यह निर्विवाद सिद्ध हो जाता है कि आत्मिकोन्नतिके लिए भी स्वाध्याय प्रधान साधन है। केवल शारीरिक उन्नति भी मनुष्यको मनुष्यतासे गिरा देती है। दूसरी ओर स्वाध्यायशीलता मानव मानस-मुकुरको शुद्ध-स्फटिक-सा स्वच्छ बना देती है। जिससे कि उसमें ईश्वरीय वेदवाणीका साक्षात्कार हो सके, जिसका दूसरा नाम मन्त्रदर्शन है। मन्त्रदर्शनसे ही मनुष्य—मनुष्य न रह कर ऋषि बन जाता है। इसीकी पुष्टि निरुक्तकार महामुनि यास्काचार्य्य स्पष्ट शब्दोंमें घोषित कर रहे हैं "ऋषयो मन्त्र द्रष्टारः।"

जो वस्तु जिसको प्रिय होती है उसीके द्वारा उस की तृप्ति वा तर्पण होता है। ऊपर बताया जा चुका है कि ऋषियों का अभेद्य सम्बन्ध स्वाध्यायसे बढ़कर और किसी वस्तुसे नहीं है। अतएव मनुजीने भी तृतीयाध्यायमें—

"स्वाध्यायेनार्चयेद् ऋषीन् होमैर्देवान् यथा विधिः।
पितृनाद्यैश्च नृन्नान्नैर्भूतानि बलि कर्मणा॥"

लिखकर ऋषि पूजन अध्ययनाध्यापन द्वारा ही बताया है। प्राचीन कालमें वेदोंके पढ़ने पढ़ानेका प्रचुर प्रचार था। वैसे तो द्विजन्मा सदा वेदपाठमें रत रहते थे, किन्तु वर्षा ऋतुमें वेदके स्वाध्यायका विशेष आयोजन किया जाता था। इसका कारण यह था कि भारतवर्ष वर्षा बहुल तथा कृषक प्रधान देश

है, यहांकी जनता आषाढ़ और श्रावणमें विशेष कर जुताई और बुआईके काममें लगी रहती है। यह कार्य श्रावण मासके अन्तमें समाप्त हो जाता है। इस समय ग्रामीण जनता कृषि कार्यसे निवृत्त होकर शस्यश्यामला पृथिवीको देखती हुई भावी शस्यके आगमनकी आशामें चित्तकी शांति और अवकाश लाभ करती है। राजन्यवर्ग भी विजययात्रासे विरत हो बैठते हैं। वैश्यमण्डल भी मंडी वाणिज्य और कृषिसे विश्राम लाभ करते हैं। उधर तपस्वी ऋषि मुनि महात्मा भी वनोंमें विविध जीव जन्तु उत्पन्न होनेके कारण वनस्थली छोड़ ग्रामोंके निकट आ टिकते थे और वहीं वेदपाठ ज्ञानोपदेश करते थे। श्रद्धालु श्रोता भी समित्पाणि होकर उनके चरणोंमें बैठ कर अपने समयको सुवर्णमय बनाते थे और ऋषियोंके इस प्रिय कार्यसे उनका तर्पण करते थे।

जिस दिन विशेष वेदपाठका आरम्भ होता था, उसी दिनका नाम— उपाकर्म श्रावणी अथवा ऋषि-तर्पणी है। उपाकर्मसे पहले पञ्चगव्यप्राशन स्नान, विभूतिस्नान, हवनादि विशेष कर्म वेदमन्त्रों द्वारा किए जाते थे, तत्पश्चात स्वदेशी सूत्र निर्मित नव्य भव्य यज्ञोपवीत धारण कर द्विजाति लोक वेदाध्ययन आरम्भ करते थे। यह उपाकर्म (आरम्भ) श्रावण शुदी पूर्णिमाको होता था जैसा कि पारस्कर गृह्य सूत्र द्वि० काण्डकी १० क० सूत्र १—२ में—"अथातोऽध्यायो कर्म" "औषधीनां प्रादुर्भावे श्रावणेन श्रावण्यां पौर्णमास्यां श्रावणस्य पञ्चमी हस्तेन वा" इस प्रकार यह विशेष पाठ प्रारम्भ कर चातुर्मास्य (चौमासा) चलता था। और पौषमास में उसका उत्सर्जन संस्कार भी विशेष रूपसे किया जाता था। उपाकर्म और उत्सर्जनके विधान विविध गृह्यसूत्रोंमें नाना अवान्तर भेदोंसे उपलब्ध होते हैं। जिनका विस्तार भयसे उल्लेख नहीं किया जासकता।

उपाकर्मके पश्चात् मध्यान्होत्तर कालमें रक्षा-बन्धन उत्सव भी किया जाता था। जिसका विशेष वर्णन भविष्योत्तरपुराणमें युधिष्ठिर कृष्ण संवाद द्वारा २८ श्लोकोंमें किया गया है। जिसका सार यह है कि इन्द्रके साथ राक्षसोंका बहुत समय तक युद्ध होता रहा। अन्तमें इन्द्र घबराया, गुरु बृहस्पतिके पास जाकर बोला "गुरू महाराज! न तो मैं भाग ही सकता हूं न ठहर ही सकता हूं; कहो क्या करूं? बृहस्पतिजीने भी देश कालकी प्रतिकूलता बता कर उत्साहहीन ही उत्तर दिया; इतनेमें इन्द्राणी आ पहुंची और उसने कहा:—

अद्य भूतदिनं देव! प्रातः पूर्वं भविष्यति।
अहं रक्षां विधास्यामि येन जेयो भविष्यति ॥१॥
इत्युक्त्वा पौर्णमास्यां सा पौलौमी कृत मंगला।
बबंध दक्षिणे पाणौ रक्षा पोटलिकां तदा ॥२॥
बद्ध रक्षास्ततः शक्रः कृतस्वस्त्ययनं द्विजैः।
आकृष्यैरावतं नागं निजगाम सुरारिहा ॥३॥
विद्राव दानवानीक क्षणात् काल इव प्रजाः।
शक्रस्तु विजयीभूत्वा पुनरेव जगत्त्रये ॥४॥
एषः प्रभावो रक्षायाः कथितस्ते युधिष्ठिर।
जयदा सुखदा चैव पुत्रारोग्य धनप्रदा। ॥५॥

युधिष्ठिर उवाच—

क्रियते केन विधिना रक्षाबन्धः सुरोत्तम!।
कस्मिंस्तिथौ कदा देव! ह्येतन्मे वक्तु मर्हसि ॥६॥

कृष्ण उवाच—

संप्राप्ते श्रावणेमासि पौर्णमास्यां दिनोदये।
स्नानं कुर्वीत मतिमान् श्रुति स्मृति विधानतः ॥७॥
देवानृषीं पितृंश्चैव तर्पयेत् परमाम्भसा।
उपाकर्मादि चैवोक्तमृषीणां चैव तर्पणम् ॥८॥
ततोऽपराह्नसमये रक्षा पोटलिकां शुभाम्। इत्यादि

भावार्थः—इन्द्राणीने पूर्णिमाके दिन इन्द्रके हाथ पर रक्षा बांध दी। इन्द्र युद्धमें गया और राक्षसोंको जीत आया; अर्थात् प्रथम यह रखड़ी इन्द्र धर्मपत्नी ने इन्द्रके हाथ पर बांधी थी। युधिष्ठिरने भगवान् कृष्णसे विधि पूछी तो भगवान्ने कहा कि श्रावणकी पूर्णिमाके दिन प्रातः स्नान संध्या देव ऋषि पितृतर्पण कर दोपहर बाद अक्षत, सफेद सरसों, सोना, सूती

[शेष पृष्ठ २१ पर देखिये]

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी और उसका महत्व

[लेखक—श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक "श्रीस्वाध्याय"]

आज आसुरी मनोवृत्तियोंके आतङ्कसे दिगन्त कम्पायमान हो रहा है। उत्पीड़ित मानवताके करुण-क्रन्दनसे माता वसुन्धराका वक्षःस्थल कराह रहा है। दैवी सदाचार नीति और उच्चभावनाओंको आसुरी-दुर्नीति द्वारा पददलित किया जा रहा है। राक्षसीभावापन्न मानवोंके रक्तरञ्जित एवं कलुषित हृदयोंमें लौकिक और वैदिक धर्मकी अवहेलनाका आभास स्पष्ट रूपसे दिखाई दे रहा है। अन्यायी और अविचारपूर्ण शासकोंकी शोषण-नीतिसे प्रजामें त्राहि-त्राहि मची हुई है। ठीक यही स्थिति आजसे पांच-हजार वर्ष पूर्व द्वापरके अन्तमें भी उपस्थित हुई थी। कंस, जरासंध, शिशुपाल आदि शासकोंके जघन्य कुकृत्योंसे प्रजा त्रस्त हो उठी थी। परन्तु उस युगकी और आजकी परिस्थितियोंमें महान् अन्तर है। वहां भारतीय नरेशोंके आततायी होने पर भी निःशस्त्रों पर प्रहार नहीं किया जाता था और न प्रजामें अर्थाभावके कारण ही कोई समस्या उत्पन्न होती थी।

हां, कंसके उत्पीड़नने देशके वातावरणको अत्यन्त क्षुब्ध कर दिया था और ऐसे समयमें किसी ऐसी महान् शक्तिकी आवश्यकता थी जो धर्म, राष्ट्र एवं समाज की रक्षा कर सके। जब मानव बुद्धि-बलसे थक जाता है तो उसे परमात्माका स्मरण आता है और अपनी सम्पूर्ण शक्तियां उस विराट्के आह्वानमें लगा देता है। यही अवस्था तत्कालीन मानव-समाजकी थी। वह आततायी राजाओंका विरोध करके थक गया और ऐसे भयङ्कर समयमें प्रजाको धर्मरक्षक एवं लोक कल्याणकारी व्यक्तरूपकी आवश्यकता थी। उसने विचार किया कि जब भगवान् अनेक बार असुरोंकी जघन्यताको मिटानेके लिए वेद और लोक-धर्मकी रक्षामें प्रवृत्त हो चुके हैं, निरंकुश शासकोंकी कलुषित नीतिका शमन कर संसारमें सुख-शान्तिकी स्रोतस्वती बहा चुके हैं; तब यह कैसे सम्भव है कि वे वर्तमान समयमें मूकप्रजाके हार्दिक आर्त्तनादको न सुनें? भगवान्‌की दयामयी सौम्यमूर्त्ति धर्मको इस पतितावस्थासे बचानेके लिए अवतरित न हों? इन्हीं भावनाओंसे प्रेरित होकर तत्कालीन पीड़ित प्रजा भगवान्‌के उस विश्व-कल्याणकारी दिव्य रूपकी आराधनामें तल्लीन होगई। सच्चे हृदयसे की गई आराधना कभी निष्फल नहीं जाती। भाद्रपद कृष्णाष्टमीकी अंधेरी अर्धनिशामें सहस्रों सैनिकोंसे रक्षित लोहेकी मोटी मोटी शृङ्खलाओंसे जकड़ी हुई माता देवकीके गर्भसे भगवान् कृष्ण अपनी सम्पूर्ण-शक्ति एवं सोलह कलाओंसे युक्त अवतरित हुए थे।

अन्याय, अत्याचार, पाप, पाखण्ड और अधर्मके वक्षःस्थलको चीर कर सुख-शान्ति एवं धर्म राज्य स्थापित करनेके लिए, दुष्ट दानवोंका नाशकर धरा-धामको पवित्र करनेके लिए तथा अपने धर्म, न्याय और शास्त्र-सम्मत कार्यों द्वारा सांसारिक जीवोंको शिक्षा देनेके लिए प्रभु निराकारसे साकार हुए थे। उस दिव्यरूपमें सच्चे पथ-प्रदर्शकको पाकर भारतीय-जनता कृतकृत्य हुई थी। उसी दिव्य-विभूति भगवान् श्रीकृष्णकी स्मृतिमें प्रति वर्ष जन्माष्टमीका उत्सव समस्त भारतमें बड़े समारोहके साथ मनाया जाता है। परन्तु यह कहना पड़ेगा कि इस पर्वके महत्त्वको भलीभांति न समझकर आज एक परम्परा-सी बन गई है, भगवान् कृष्णकी शिक्षाको ग्रहण करके वास्तविक रूपमें कहीं पर भी श्रीकृष्णजन्माष्टमी नहीं मनाई जाती।

यदि वास्तविक रूपमें भगवान्‌की शिक्षाओंको ग्रहण करते हुए जयन्ती मनाई जाती तो यह कभी सम्भव न था कि देश पारतन्त्र्य पाशमें बद्ध होकर उत्तरोत्तर अधोगतिकी ओर पदार्पण करता रहे। जगद्गुरु भगवान् कृष्णके वास्तविक रूपका दर्शन तभी हो सकता है कि जब हम मन्दिरोंकी अपेक्षा मनमन्दिरको सजायें, विद्युत् प्रदर्शनको छोड़कर

उनके उपदेशों द्वारा अपने हृदयके अंधकारको दूर भगानेका प्रयत्न करें और "जीवनं सर्वभूतेषु" के अनुसार प्राणिमात्रके कल्याणकी शुभाशासे प्रेरित हों, अन्यथा हम अपने गुरुका वास्तविक ज्ञान अनन्त-जन्मोंमें भी प्राप्त नहीं कर सकते। इससे मानना पड़ेगा कि जन्माष्टमीके दिन भारतीयोंने मन्दिरोंको सजाना; भांति भांतिकी झांकी बनाकर तथा विद्युत्-प्रदर्शनसे जनताको अपनी ओर आकर्षित करना ही अपना ध्येय समझा है। हम यह नहीं कहते कि मन्दिरोंकी सजावट करना, झांकी निकालना, भजन-कीर्तन करना और व्याख्यान सुनना-सुनाना बुरा है। किन्तु किसी भी देवता या महापुरुषके आदर्शको अपने जीवनमें ढाले बिना वर्षमें केवल एक दो दिन इस प्रकारका कोलाहल करके हम कदापि वास्तविक लाभ नहीं उठा सकते। करोड़ों भारतीय जो अपने आपको कृष्णका अनन्य भक्त बतलाते हैं गोधनका भीषण ह्रास देखकर भी ठण्डी सांस नहीं लेते। कसाइयोंको गऊ बेचने और उन्हें सूद (व्याज) पर रुपया देने वाला कभी गोपालक कृष्णका भक्त नहीं कहला सकता। जहां पहले सद्गृहस्थोंमें गोपालन धर्म समझा जाता था आज उन्हींकी सन्तान श्वान-पालक (कुत्ता पालने वाले) के रूपमें दृष्टिगोचर होती है। भगवान् गोपाल कृष्णने गोवंशकी अद्भुत सेवासे भारतके सम्मुख एक महान् आदर्श स्थापित किया था और गोदुग्ध-दधि-घृत पर्याप्त मात्रामें खानेकी शिक्षा दी थी जिससे हमारी सन्तान किसी भी दृष्टिसे अवनत न होसके। उनकी माखनचोरीका एक रहस्य यह भी है कि जैसे भी हो सके मक्खन, घृत, दूध, दधि खूब खाना चाहिए। विशेषकर बालकोंको तो यह पर्याप्त मात्रामें मिलना ही चाहिए तभी वे शारीरिक, मानसिक उन्नति करके राष्ट्र-निर्माता बन सकते हैं। गोरस (दुग्ध, दधि, घृत, मक्खन) पृथिवीका दूसरा अमृत है। मनुष्यकी आयु, बल, कान्ति इसी पर निर्भर है। इसी लिए ऋषियोंने "आयुर्वै घृतम्" और "गव्यं घृतं विशेषेण चक्षुष्यं वृष्यमग्निकृत्" कहा है। इसी आदर्शकी भगवान्ने पुष्टि की है। अन्यथा लाखों गउओंके स्वामी नन्द बाबाके घरमें दूध दधि और मक्खनकी क्या कमी थी जो भगवान्को चोरी करनी पड़ती? न उनके यहां नौकरोंकी कमी थी जो भगवान्को स्वयं गउएं चरानेके लिए जाना पड़ता। किन्तु ये सब कार्य उन्होंने स्वयं करके भारतके सामने गो-सेवाका महान् आदर्श उपस्थित किया है। गोपाल कृष्णको चारों ओर गऊओंसे घिरा रहना अधिक रुचिकर था। उन्होंने कहा भी है—

गावो मे अग्रत: सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठत:।
गावो मे पार्श्वत: सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम् ॥

गोपालनका इससे अधिक महत्त्व और क्या हो सकता है कि भगवान् कृष्णने अपने निवास स्थानका नाम 'कृष्णलोक' न रखकर 'गोलोक' रक्खा। ऐसा गोभक्त संसारमें दूसरा कौन होगा! क्या कभी गोपालकृष्णकी जय बोलने वाले करोड़ों भारतीयोंने गोपालके इस महान् आदर्शको अपने जीवनमें ढालने का प्रयत्न किया है? महाभारतमें भगवान् श्रीकृष्णने गोमाताके पूजनका फल अर्जुनके प्रति यों कहा है—

गाव: श्रेष्ठा पवित्राश्च पावना जगदुत्तमा:।
ऋते दधिघृताभ्यां च नेह यज्ञ: प्रवर्तते ॥
पयसा हविषा दध्ना शकृताप्यथ चर्मणा।
अस्थिभिश्चोपकुर्वन्ति बालै: शृङ्गैश्च भारत ! ॥
गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किंचिदिहाच्युत !
कीर्तनं श्रवणं दानं दर्शनं चापि पार्थिव ! ॥
गवां प्रशस्यते वीर ! सर्वपापहरं परम्।
गावो लक्ष्म्या सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते ॥
मातर: सर्वभूतानां गाव: सर्वसुखप्रदा: ॥

अर्थात् गौएं सर्वश्रेष्ठ, पवित्र तथा पूजा करने योग्य और संसार भरमें सबसे उत्तम हैं, क्योंकि गउओंके दधि-घृतके बिना यज्ञकार्य नहीं होते। हे अर्जुन! गौएं दूध, दधि, घृत, गोबर, चर्म, अस्थि, बाल और सींगोंसे हमारा उपकार करती हैं। अत: हे पार्थ! गौके समान न तो कोई धन है, न कोई कीर्ति है और न गौके समान किसीके दर्शनको देखता हूं। हे वीर! मैं गउओंकी प्रशंसा करता हूं क्योंकि गौएं लक्ष्मीका मूल कारण हैं और सम्पूर्ण पापोंको हरनेवाली हैं; तथा गौमातामें कोई

भी पाप विद्यमान नहीं है और वे सम्पूर्ण प्राणियोंको प्रत्येक सुखके देनेवाली माताके समान मानी जाती हैं।

जो करोड़ों भारतीय प्रति वर्ष गोपालकृष्णकी जन्माष्टमी मनाते हैं, उन्हें चाहिए कि भगवान्के इस उपदेशको ग्रहण करके राष्ट्र तथा आत्मकल्याणके लिए गोमाताका पालन करें। प्रत्येक सद्गृहस्थ अधिक न सही तो कमसे कम एक एक गौपालनका व्रत करलें और भैंस बकरी या बाजारका दूध पीना सर्वथा त्याग दें। इसी लिए हम कहते हैं कि गोमाता-की रक्षाके लिए, हिन्दुत्वकी रक्षाके लिए, आर्यसंस्कृति की रक्षाके लिए, कृषि और उद्योग-धन्धोंकी रक्षाके लिए और यदि इनमेंसे कोई भी बात आपके हृदयको स्पर्श न करती हो तो अपने प्राणाधार बाल-गोपालोंकी रक्षाके लिए, उन्हें स्वस्थ और दीर्घजीवी बनानेके लिए गोपालन अत्यन्त आवश्यक है। परोपकार यदि बुरी चीज़ है तो अपने स्वार्थके लिए ही गोमाताका पालन करना प्रत्येक व्यक्तिका धर्म है।

गोपालकृष्णकी गो-सेवाको अपने जीवनका लक्ष्य बनाए बिना केवल तोतेकी भांति "गोपालकृष्णकी जय" बोलने और प्रति वर्ष धूम-धड़ाकेसे उत्सव मनाने पर भी वे हमारे कभी सहायक नहीं हो सकते। गोपालन नीतिके साथ साथ वर्तमान महायुद्ध में विजयी होनेके लिए श्रीकृष्णकी राजनीति एवं युद्ध-नीतिको भी पूर्णरूपसे अपनाना होगा। संसारमें मानवताके महानाशका जो नग्न-नृत्य हो रहा है उसका प्रतिकार भी भगवान्के उपदेशोंसे हो सकता है। महाभारतके युद्धमें अकेले अर्जुनको मोहने घेरा था किन्तु आज तो लाखों अर्जुन (भारतवासी) युद्धकी विभीषिकाओंसे भयभीत होकर अपनी रक्षाके लिए इधर उधर भाग रहे हैं। नगरोंसे ग्रामोंकी ओर, ग्रामोंसे पर्वत प्रदेशोंमें भागनेसे कोई लाभ नहीं हो सकता। ऐसे विकट समयमें भगवानके प्रकाशकी आवश्यकता है, उनके नेतृत्व और नीति पर चलने-की आवश्यकता है, तभी देशका कल्याण हो सकता है। भगवान् कृष्णने गुरु, मित्र, बन्धु और पूर्वजोंकी हिंसासे भयभीत हुए अर्जुनको मार्ग दिखलाया था। उसके हृदयमें समाये हुए विषमान्धकारको ज्ञानके प्रकाशसे प्रकाशित कर कल्याणका मार्ग बतलाया था। युद्धमें भयभीत एवं मोह ग्रसित अर्जुनके लिए भगवानका यह उपदेश कितना हृदयग्राही और नीतिपूर्ण है—

> क्लैब्यं मास्मगमः पार्थ ! नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
> क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप !

हे पार्थ ! तू कायर न बन, यह तेरे योग्य नहीं है। हे परंतप ! हृदयकी इस क्षुद्र दुर्बलताको छोड़ कर खड़ा हो।

भगवान् कृष्णकी इस नीतिसे स्पष्ट भासित होता है कि अपने अधिकारों पर मर मिटो और शत्रुको परास्त करो, चाहे शत्रुदलमें अपने सगे सम्बन्धी और कुटुम्बी जन ही क्यों न हों। यद्यपि भगवान् कृष्णकी नीति विश्वकल्याणकी भावनाको लिए हुए है; तथापि वे आधुनिक अहिंसावादी नेताओंकी भांति यह नहीं कहते कि "अर्जुन ! ले चलो पांचों भाइयोंका एक जत्था और लेट जाओ दुर्योधनके महलके सामने। यदि दुर्योधन फिर भी न माने तो सत्याग्रह या २१ दिनका अनशन करदो।" दैवयोगसे यदि वहां श्रीकृष्ण ऐसे सत्याग्रह या अनशनका उपदेश देते तो बिचारे भीमसेनके लिए तो एक दिनका व्रत रखना भी दूभर था। हो सकता है कि युधिष्ठिर इस आयोजना को स्वीकार कर लेते परन्तु अन्य भाई इसे कदापि स्वीकार न करते। श्रीकृष्ण जानते थे कि रोग क्या है और उसकी औषधि क्या होनी चाहिए। इसी लिए वे अन्तमें फिर कहते हैं कि—

> "हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
> तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय ! युद्धाय कृतनिश्चयः ॥"

हे अर्जुन ! यदि तुम युद्धमें मारे गए तो स्वर्ग प्राप्त होगा और जीवित रहने पर इस पृथ्वीका उप-भोग करोगे। अतः हे कौन्तेय ! युद्ध करनेका निश्चय करके खड़े होजाओ।

भगवान् कृष्ण विश्वशान्ति और अहिंसाके विरोधी नहीं थे; किन्तु जिस शान्ति और अहिंसासे

देश जाति और समाजका अकल्याण होता हो या अन्यायकी वृद्धि होती हो उसे वे धर्म (शान्ति अहिंसा) नहीं मानते थे। महामहिम श्री १०८ अमृतवाग्भवाचार्यजी महाराजने भी अपने 'राष्ट्रालोक' नामक ग्रन्थमें लिखा है—

यया शान्त्या पराधीनं राष्ट्रं भवति सा नहि।
शान्तिः, किन्तु नितान्तं सा केवलं क्लीबता मता॥

इसी उद्देश्यको सामने रखकर महाभारतसे पूर्व स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण पाण्डवोंका सन्धिप्रस्ताव लेकर दुर्योधनके समीप गये थे। परन्तु जब भलीभांति समझाने पर भी उन्मत्त दुर्योधनने केवल पांच ग्राम देना भी स्वीकार नहीं किया; तब भगवान्ने उन्हें युद्धकार्यमें प्रवृत्त किया; क्योंकि वे इस बातको भलीभांति जानते थे कि आततायीका वध कर देना धर्म है, चाहे वह गुरु, बालक, वृद्ध, वेदपाठी और बहुश्रुत ब्राह्मण ही क्यों न हो, उसे बिना विचारे मार देना चाहिए। ऐसे आततायीको मारनेमें कोई दोष या हिंसा नहीं मानी गई है। इसी लिए आपने महाभारत के युद्धकी घोषणा कराकर वास्तविक पथ-प्रदर्शन किया था। भगवान् मनुने भी लिखा है—

"गुरुं वा बालवृद्धौ वा ब्राह्मणं वा बहुश्रुतम्।
आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन्॥
नाततायिवधे दोषो हन्तुर्भवति कश्चन।
प्रकाशं वाऽप्रकाशं वा मन्युस्तं मन्युमृच्छति॥

धर्मशास्त्रने आततायीके लक्षण यों किये हैं—

अग्निदो गरदश्चैव क्षेत्रदारापहारकः।
धनापहः शस्त्रपाणिः षडेते आततायिनः॥

१—आग लगाने वाला अर्थात् किसीके भवनादि को जलानेवाला या किसी प्रकार भी अग्नि-द्वारा राष्ट्रको क्षति पहुंचाने वाला।

२—विषका प्रयोग करनेवाला

३—भूमि छीननेवाला

४—स्त्रीका अपहरण (अथवा अपमान) करनेवाला।

५—धनका अपहरण करनेवाला

६—शस्त्रों द्वारा आक्रमण या अत्याचार करनेवाला।

इन छः प्रकारके आततायिओंको मारनेमें कोई पाप नहीं लगता। वास्तवमें भगवान् कृष्ण विश्वमें सच्ची शान्ति स्थापित करना चाहते थे। उनके मतमें सद्उद्देश्यकी सिद्धिके लिए यदि बड़ेसे बड़ा बलिदान करना पड़े तो भी कर देना चाहिए। महाभारतके युद्धमें अपनी प्रतिज्ञाके विरुद्ध शस्त्र उठाना, युधिष्ठिरको असत्य भाषणके लिए विवश करना तथा इसी प्रकारके और भी कितने ही ध्रुवसत्य हमारे सामने हैं, जिनके आधार पर यह कहा जासकता है कि उनकी नीति इतनी स्पष्ट थी कि जिसको अपनाते हुए राष्ट्र, जाति अथवा व्यक्ति कभी पतनकी ओर जा नहीं सकता। अतः हमें इस जन्माष्टमीके अवसरसे यह शिक्षा लेनी चाहिए कि जैसे भी हो सके हम भगवान कृष्णकी भांति प्राणिमात्रका कल्याण करते हुए आगे बढ़ सकें और भगवान्का आदर्श विश्वके कोने कोनेमें प्रसारित कर उसे नाशसे बचा सकें।

बांसुरीकी तानमें

[कवयिता—श्री पं० गोविन्द जी मिश्र]

तेरी ज्योति जागत है अखण्ड ब्रह्माण्ड मध्य प्रकाश शक्ति रूपा सो भासै भासमानमें।
ब्रह्म विष्णु रुद्र आदि ध्याई औ मनाई सदा ऋग् यजु अथर्व और तू ही सामगानमें॥
भुवनेश्वरी मातंगी काली छिन्नमस्ता तुही बगुला कमलादिक दशहू विधानमें।
बाला रूप तू ही जग या सों प्यारे बालकृष्ण बाला रिझावन गाई बांसुरीकी तानमें॥

श्राद्ध-विवेचन

[लेखक—साहित्याचार्य पं० रामेश्वर शास्त्री विद्यालंकार]

हिन्दू समाजमें मृत-पितरोंका उद्देश्य लेकर श्रद्धा-पूर्वक जो स्वात्मप्रिय भोज्यवस्तु ब्राह्मणको दी या खिलाई जाती है, हमारे शास्त्रकार उसको "श्राद्ध" के नामसे पुकारते हैं, क्योंकि श्रद्धा बिना विहितकर्म स्वफल सम्पादनमें अयोग्य होता है। श्रद्धासे किये हुए कर्मसे ही अभीष्टकी प्राप्ति हो सकती है, क्योंकि स्वयं परमात्मा श्रद्धामय है और श्रद्धायुक्त कर्म भगवत्प्रीतिकारक है—

'श्रद्धामयोऽयं पुरुषः यो यच्छ्रद्धः स एव सः।'

परन्तु आजकलके स्कूली-शिक्षा-प्राप्त कई लोग श्राद्ध शब्दकी 'श्रद्धया यत्क्रियते तच्छ्राद्धम्' ऐसी व्युत्पत्ति करके श्रद्धा द्वारा निष्पादित प्रत्येक कर्मको श्राद्धके नामसे पुकार कर अनाथालय, विधवाश्रम आदिमें प्रदेय धनको ही श्राद्ध मान बैठे हैं और वे ऐसा करते हुए शास्त्रकी भी दुहाई दे दिया करते हैं। परन्तु शास्त्रोंमें श्राद्ध शब्दको 'अकालमृत्यु' शब्दकी तरह पारिभाषिक माना है। जैसे 'अकालमृत्यु' इस शब्दका अर्थ असामयिक मृत्यु न होकर पशु, पक्षी, मगर, हिंस्रजन्तु, पतन, अनशन, वज्र, अग्नि, विष, जल आदिसे होने वाली मृत्यु है। अन्यथा 'सजातो यावदायुषं जीवति' इस वेद वाक्य तथा 'नाकाले म्रियते जन्तुः प्राप्ते काले न जीवति' आदि शास्त्रीय वाक्योंसे विरोध होगा। अतः वैसे ही श्राद्ध शब्दका अर्थ देश काल और पात्रका विचार करके जो श्रद्धापूर्वक पितरोंका उद्देश्य लेकर ब्राह्मणोंको भोजन कराया जाता है या जो कुछ भी दिया जाता है उसी-का नाम 'श्राद्ध' है। पितृ-कृत्यके अतिरिक्त दत्त अन्य दान श्राद्धके नामसे नहीं पुकारा जा सकता। जैसा कि ब्रह्मपुराणमें लिखा है—

देशे काले च पात्रे च श्रद्धया विधिना च यत्।
पितॄनुद्दिश्य विप्रेभ्यो दत्तं श्राद्धमुदाहृतम्॥

ऐसा ही पृथ्वी चन्द्रोदयमें मरीचिने लिखा है—

प्रेतं पितॄंश्च निर्दिश्य भोज्यं यत्प्रियमात्मनः।
श्रद्धया दीयते यत्र तच्छ्राद्धं परिकीर्तितम्॥

इन वचनोंसे भली-भांति यह विदित हो जाता है कि पित्रुद्दिष्ट कृत्यका नाम ही श्राद्ध है।

ऐसे तो शास्त्रोंमें १—नित्य, २—नैमित्तिक, ३-काम्य, ४-वृद्धिश्राद्ध, ५—सपिण्ड, ६—पार्वण, ७—गोष्ठी, ८—शुद्धि, ९—कर्माङ्ग, १०—दैविक, ११—यात्रा भेदसे श्राद्ध ११ प्रकारके माने गए हैं, परन्तु हम उन सब पर विचार न करके केवल श्राद्धको लेकर आर्यसमाजियों एवं सुधारकों द्वारा उपस्थापित शङ्काओंका निराकरण एवं अधुना-संप्राप्त महालय श्राद्धके विधि निषेधों पर ही कुछ विचार व्यक्त करेंगे।

प्रेतलोक है या नहीं ?

पितरोंके लिए किए जाने वाले कृत्यको लेकर कई लोग ऐसा कहा करते हैं कि "वेदोंमें कहीं पितृ-लोकका उल्लेख नहीं है, यह तो ब्राह्मणोंने अपनी उदरपूर्तिके लिए स्वर्ग नरककी कल्पनाकी तरह बना लिए हैं। वास्तवमें जैसे सुखका नाम स्वर्ग और दुःख का नाम नरक है, वैसे ही पितृ-लोक भी अपने जीवित माता-पिताओंके रहनेके ही स्थानका नाम है, और कोई पितृलोक नहीं है।"

परन्तु वास्तवमें ये बातें उस अन्धेकी बातकी भांति समझनी चाहिए जो स्वयं अन्धा होनेसे किसी पत्थरकी ठोकर खाके गिर पड़ता है, और फिर उस पत्थरको दोष देता है कि यह मुझे दिखाई क्यों नहीं पड़ा। स्वयं न गुरु द्वारा वेद पढ़ेंगे और न वेदोंका आद्योपान्त दर्शन करेंगे और ऊपरसे यह कहेंगे कि वेदोंमें ऐसा नहीं है। यदि आंखों पर ज्ञानका चश्मा चढ़ाकर वे देखेंगे तो उन्हें ज्ञात होगा कि वेद स्पष्टतया इस लोकसे भिन्न पितृ-लोकका वर्णन करता है—

"कर्मणा वै पितृ-लोकः" (बृहदारण्यक)
"दक्षिणाप्रवणो वै पितृ-लोकः" (बृहदारण्यक)
"अथ ये शतं पितृणां जित लोकानामानन्दाः
स एको गन्धर्वलोकानामानन्दः" (बृहदारण्यक)
"उदन्वती द्यौरवमा पीलुमतीति मध्यमा।
तृतीयाह प्रद्यौरिति यस्यां पितर आसते॥
—अथर्व १८।२।२

आकाशके उदन्वती, पीलुमती, प्रद्यौ नामके तीन विभाग हैं, जिनमें अन्तिम प्रद्यौ नामके विभागमें पितर निवास करते हैं। अर्यमा प्रभृति इस लोकके अधिष्ठातृ देवता हैं। इसके अतिरिक्त आजकलके परलोक विद्या-विशारदोंने मृतात्माओंका आह्वान करके उनसे तत्तत् लोकोंके भोज्य पदार्थ सम्बन्धी प्रश्न करके यह वैज्ञानिक रीतिसे प्रमाणित कर दिया है कि इस लोकके अतिरिक्त पुराण वर्णित प्रत्येक लोक और हैं और जीवात्मा को अपने कर्मानुरूप तत्तत् लोकोंमें जाकर उन भोगोंको भोगना पड़ता है।

श्राद्ध जीवित पितरोंका होता है या मृतोंका ?

कुछ आधुनिक शिक्षा प्राप्त लोग यह कहा करते हैं कि श्राद्ध वास्तवमें जीवित पितरोंका ही होता है, उनकी अच्छी तरहसे सेवा सुश्रुषा और भोजन-व्यवस्था आदि ही 'श्राद्ध' है। मरे हुए पितरोंके लिए 'श्राद्ध' का विधान वेदोंमें नहीं है। हम ऐसे लोगोंके लिए कुछ वेदमन्त्र देकर उनसे पूछना चाहते हैं कि क्या आप इन मन्त्रोंको देख और पढ़कर यह सिद्ध कर सकते हैं कि 'श्राद्ध' जीवित पितरोंका ही होता है ?

इदं पितृभ्यो नमोऽस्त्वद्य ये पूर्वासो य उपरास ईयुः।
ये पार्थिवे रजस्यानिषत्ता ये वा नूनं सुवृजना सुविक्षु॥

(शुक्ल यजुर्वेद अ० १९ मं० ६८)

जो पितर स्वर्गमें चले गए हैं और जो ब्रह्मको प्राप्त हो गए हैं जो कि हमारे बड़े और छोटे पूर्वज पितृ-लोकको प्राप्त हो गए हैं उनके लिए यह आहुति प्रदानपूर्वक नमस्कार है।

ये निखाता ये परोप्ता ये दग्धा ये चोद्धताः।
सर्वांस्तानग्न आवह पितॄन्हविषे देवहे॥
अथर्व० कां० १८।२।३४।

जो गाड़े, जो नदीमें बहाए और अग्निमें जलाए एवं जो पृथ्वीसे वापिस निकाल कर फिर जलाए गए हैं। हे अग्निदेव ! तुम इन सब पितरोंको हवि-खानेके लिए बुलाओ। इस तरह यजुर्वेदका भी एक मन्त्र है—

आयन्तुनः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः।
अस्मिन्यज्ञे स्वधयामदन्तोऽधिब्रुवन्तु ते ऽवन्त्वस्मान्॥
यजु० १९।५८।

सोम पीने योग्य अग्निसे जलाए हुए हमारे पितर देवताओंके गमन योग्य मार्गोंसे आवें और इस यज्ञमें अन्नसे तृप्त होके ज्ञानोपदेश करते हुए हमारी रक्षा करें।

क्या, जीवित पितर अग्निमें जलाये जाते हैं ? या गाड़े जाते हैं ? जीवित पितरोंका श्राद्ध बताने वाले हमारे अबोध भाई क्या कभी अपने मां-बापोंसे ऐसा व्यवहार तो नहीं कर बैठते हैं !! क्या उनके पितर कभी आकाशसे गिरकर यहां आते हैं, या उन्हें "आयन्तुनः पितरः" इस मन्त्रको सार्थक करनेके लिए ऊपरसे गिराकर पीछे अन्न खिलाया जाता है !!! जब वे लोग वैदिक मतको मानते हैं, तब किस बूते पर जीवित पितरोंका श्राद्ध बता रहे हैं। श्राद्ध जीवितोंका नहीं किन्तु मृत-पितरोंका ही होता है। इस विषय में अन्य सैकड़ों प्रमाण दिए जा सकते हैं, स्थानाभाव से ऐसा नहीं किया गया है, जिसे देखनेकी अभिलाषा हो, वे अथर्ववेदके अठारहवें काण्डको देखकर इस विषयके कई प्रमाण प्राप्त कर सकते हैं। सामवेद में भी "स्वाहा सोमाय पितृमते" इत्यादि १८ मन्त्रोंमें मृत-पितरोंके श्राद्धका विधान किया है।

पितरोंको भोजन कैसे मिलता है ?

जब कि हम मानते हैं कि मृत-पितरोंका ही श्राद्ध होता है और उनको उद्दिष्ट करके ब्राह्मण-भोजन करानेसे वह उनको प्राप्त हो जाता है, तो स्वतः ही

हमारे मनमें यह शङ्का उत्पन्न हो जाती है कि यहां ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे वहां पितरोंको कैसे मिल जाता है ? यदि ऐसा होता है तो प्रवासमें जाने-वाले व्यक्तिके उद्देश्यसे किसीको कराये हुए भोजनसे उसकी तृप्ति हो जानी चाहिए ? दीपकके बुझ जाने पर भी तैल डालनेसे उसमें ज्योति आ जानी चाहिए ? परन्तु ऐसा न तो कहीं होता है और न कहीं देखा गया है, फिर ब्राह्मण-भोजनसे मृत-पितर कैसे तृप्त हो जाते हैं ?

ऐसी शङ्काएं आजकी ही हों, यह बात नहीं है। इनका उल्लेख पद्मपुराणके मत्स्यखण्डमें, विष्णुपुराण और स्कन्दपुराणके नागरखण्डमें भी पाया जाता है और इसका उत्तर भी वहां पर इस प्रकार दिया गया है—

नामगोत्रं तु पितृणां प्रापकं हव्यकव्ययोः।
श्राद्धस्य मन्त्रास्तद्वच्च उपलभ्यानि भक्तितः॥

(पद्मपुराण)

पितरोंके नामगोत्र और श्राद्धके मन्त्रोंमें ही यह शक्ति है कि वे मृतात्माके उद्देश्यसे कराये ब्राह्मण-भोजनसे तृप्त हो जाते हैं। विष्णुधर्मोत्तरमें भी ऐसा ही लिखा है—

एते श्राद्धं सदा भुक्त्वा पितृन्संतर्पयन्त्युत।
यत्र क्वचन धर्मज्ञाः वर्तमानान् हि योगतः॥

अर्थात् हर कहीं रहने वाले पितरोंको ब्राह्मण श्राद्ध खाकर तृप्त कर देता है।

यह शक्ति ब्राह्मणोंमें ही है कि उनका खाया हुआ अन्न अग्नि, वायु आदिकी विद्युच्छक्तिसे तत्तत् पितरोंको प्राप्त हो जाता है। अतएव दूसरे को भोजन करानेसे पितरोंकी तृप्ति होनेमें सन्देह ही है, क्योंकि मनुस्मृतिके तीसरे अध्यायके १८९वें श्लोकमें लिखा है—

निमन्त्रितान्हि पितरः उपतिष्ठन्ति तान्द्विजान्।
वायुवच्चानुगच्छन्ति तथासीनानुपासते॥

निमन्त्रित पितर ब्राह्मणोंके साथ-साथ वायुरूपसे आकर उनके साथ बैठ कर भोजन करते हैं।

इतने पर भी यह शंका रह जाती है कि मृत पितरोंको भी कर्मानुसार जीवयोनि अवश्य मिलती है, फिर उनको उस २ रूपमें अन्न कैसे मिल जाता है ? स्मृतिकार देवलने इस शंकाका निवारण इस प्रकार किया है—

देवो यदि पिता जातः शुभकर्मानुयोगतः।
तस्यान्नममृतं भूत्वा देवत्वेऽप्यनुगच्छति॥१॥
गान्धर्वे भोग्यरूपेण पशुत्वे च तृणं भवेत्।
श्राद्धान्नं वायुरूपेण नागत्वेऽप्यनुगच्छति॥२॥
पानं भवति यक्षत्वे राक्षसत्वे तथामिषम्।
दानवत्वे तथा मासं प्रेतत्वे रुधिरोदकम्॥३॥
मनुष्यत्वेऽन्नपानादि नाना भोगरसो भवेत्॥

अर्थात् पितरोंके उद्देश्यसे दिया हुआ अन्न पितरों को देवरूपमें अमृत, गन्धर्वरूपमें भोग, पशुरूपमें तृण, नागरूपमें वायु, यक्षरूपमें पान, राक्षस और दानव-रूपमें मांस, प्रेतरूपमें रुधिर और मनुष्यरूपमें अन्न होकर मिल जाता है।

श्राद्धकर्ता और भोक्ताके कर्त्तव्य

संक्षेपमें श्राद्ध सम्बन्धी प्रधान शंकाओंका निरा-करण करनेके अनन्तर श्राद्धकर्ता और भोक्ताके कर्तव्यों पर दृष्टि डाल देना भी अप्रासंगिक न होगा। आजकल जैसे अन्य धार्मिक कृत्योंका रूप विकृत हो गया है, वैसे ही शास्त्रीय ज्ञानके अभावके कारण इसमें भी कई विचारणीय त्रुटियां होने लग गई हैं। श्राद्धकर्ता और भोक्ताके लिये जो नियम शास्त्रकारोंने बतलाये हैं, वे नियम या तो पाले ही नहीं जाते, यदि पालन किया जाता है तो दो-एक रूढ़िप्राप्त नियमोंका ही। ऐसी अवस्थामें हम अपने आपको बड़ा भारी धोखा देते हैं। इसलिए श्राद्धकर्ता और भोक्ताको कमसे कम निषिद्ध कर्म परित्यागका ज्ञान होना आवश्यक है।

श्राद्ध करनेवालेको क्षौरकर्म, मैथुन, मादकद्रव्य-सेवन, क्रोध, झूठ बोलना और शामको भोजन छोड़ देना चाहिए। उसे पहलेदिन एकाशन करके द्वितीय-दिन प्रातःकाल स्नान, संध्यादि नित्य नैमित्तिक कृत्य कर तर्पण करना कराना चाहिए। ब्राह्मणोंके पास

पहले दिन जाकर और उनमें अपने पितरोंकी भावना करके निमंत्रित करना चाहिए। दूसरे दिन भोजन-कालमें उपस्थित ब्राह्मणोंका पाद-प्रक्षालन करके भोजन-विधिसे उन्हें भोजन करवाना चाहिये। भोजन करते हुए ब्राह्मणोंको 'भोजन कैसा बना है ?' ऐसे प्रश्न नहीं करने चाहिये, क्योंकि ऐसा करनेसे पितर निराश होकर लौट जाते हैं और न ब्राह्मणोंको ही इस विषयका उत्तर देना चाहिए! हां, भोजनोत्तर भुक्त वस्तुके गुणावगुण पूछे जा सकते हैं। फिर उनको दक्षिणा द्वारा संतुष्ट करके श्राद्धकर्ताको "शेषान्नेन किं कार्यम् ?' याने बचे हुए अन्नका क्या करें ? ऐसा प्रश्न करना चाहिये। ब्राह्मणोंको इसके उत्तरमें "इष्टैः सह भोक्तव्यम्" अर्थात् "अपने इष्टजनोंके साथ खाइये।" ऐसा कहना चाहिये। श्राद्धमें केवल तीन ब्राह्मणोंको ही भोजन करानेका विधान है। फिर अपनी शक्तिके अनुसार अधिक लोगोंको करानेमें भी कोई दोष नहीं माना है। परन्तु जहां तक हो सके वहां तक संक्षेपमें ही कार्य करना चाहिये। किन्तु ब्राह्मणोंको निमन्त्रित करते हुए इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि वह वैदिक कर्मकांडी एवं विद्वान् हों, उनके अंग विकृत और किसी रोगसे ग्रस्त न हो।

इसके अतिरिक्त जैसा कि आजकल वैश्य-समुदाय अपने यहां काम करने वाले रसोइये एवं पनिहारोंको ही भोजन कराकर अपने को कृत-कृत्य मान लेते हैं, वैसा कदापि न होना चाहिए। श्राद्धके लिए निमन्त्रित तीन ब्राह्मण तो विद्वान् होने ही चाहियें। पीछे उनके जिमानेमें कोई आपत्ति नहीं है। क्योंकि शास्त्रोंमें—

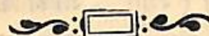
श्राद्धेषु विनियोज्यास्ते ब्राह्मणाः ब्रह्मवित्तमाः ।
ये योनि गोत्रमंत्रान्ते वासिसंबन्ध वर्जिताः ॥

ऐसा लिखकर हर प्रकारसे अपनेसे असंबद्ध ब्राह्मणोंको ही भोजन करानेका विधान है। श्राद्धीय ब्राह्मणोंको भोजन कराके पीछे अन्य लोगोंको भोजन कराया जा सकता है।

इस प्रकार श्राद्धभोक्ताको भी उस दिन शाम को भोजन करना, किसी दूसरी जगह सवारीपर चढ़ कर जाना, भार ढोना, पढ़ना, मैथुन, दान लेना और होम करना छोड़ देना चाहिये।

श्री देवी नवरात्र और शक्ति संचय

[लेखक—श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक "श्रीस्वाध्याय"]



देवी नवरात्रका अर्थ है भगवतीकी ६ रात्रियां। जगदम्बा रात्रिरूपा हैं और जगत् पिता महेश्वर दिवारूप हैं। जैसे—

निशि भ्रमन्ति भूतानि शक्तयः शूलभृष्टयः ।
रात्रिरूपा यतो देवी दिवारूपो महेश्वरः ॥

हमारे एक मानव-वर्षमें देवताओं का एक (दिव्य) दिन होता है। दिनमें चार सन्धिःकाल होते हैं— प्रातः, मध्यान्ह, सायं और अर्धरात्रि। इन्हीं चारों सन्धिकालोंमें जप पूजापाठादि भगवद् आराधनका विशेष महत्त्व है। इसी लिए आर्य महर्षियोंने हमारे मानव दिनके इसी सन्धिकालमें सन्ध्यापूजनादिका विधान बतलाया है। हमारे एक मानव-वर्ष या दिव्य-दिनकी इन्हीं चारों सन्धियोंमें देवीनवरात्र आते हैं। प्रथम नवरात्र वर्षारम्भमें चैत्र शुक्ल १ से प्रारम्भ होते हैं; यही दिव्य-दिनका प्रातःकाल है। दूसरे नवरात्र आषाढ़ शुक्ल १से प्रारम्भ होते हैं, यह दिव्य-दिनका मध्यान्ह है। तीसरे नवरात्र आश्विन शुक्ल १ से प्रारम्भ होते हैं, यह दिव्य-दिनका सायं समय है। ऊपर हम बतला चुके हैं कि जगदम्बा स्वयं रात्रिरूपा हैं और यहींसे दिव्य दिनकी रात्रि आरम्भ होती है. इसी कारण आश्विनके नवरात्र विशेषप्रसिद्ध हैं। चौथे नवरात्र पौष शुक्ल १ से आरम्भ होते हैं, यह देवताओंका निशीथ काल है।

जिस प्रकार अब मध्यान्ह और निशीथ (अर्ध-रात्रि) की सन्ध्योपासना करनेवाले सज्जन कहीं कहीं इने गिने ही प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार आषाढ़ और पौषके नवरात्र महत्त्वको जाननेवाले महात्मा भी कहीं कहीं ही रह गये हैं। मध्यान्ह और अर्धरात्रिकी सन्धिमें सचेत रहना सर्वसाधारणका काम भी नहीं।

प्रातःकाल और सायङ्कालके समय समस्त संसार सचेष्ट (जागृत) रहता है. इसीलिए प्रतिवर्ष दो बार मैय्याका पूजनोत्सव विशेष रूपसे मनाया जाता है। एक शरत्कालमें और दूसरा वसन्त-कालमें। कहा भी है—

शरत्काले विशेषेण कर्तव्यं मम पूजनम्।
वसन्ते च प्रकर्तव्यं तथैव प्रेमपूर्वकम्॥

आयुर्वेदके दृष्टिकोणसे भी इस कथनकी पुष्टि होती है "द्वावृतू यमदंष्ट्राख्यौ वसन्तशरदाविह।" अर्थात् वसन्त और शरद् ऋतुएँ यम (काल) की दाढ़ें हैं। इन यमकी दाढ़ोंसे जिन्हें बचना और निर्भय रहना है वे मैय्याकी आराधना करें। भक्ति-मुक्ति पानेके लिए भी मैय्या का प्रेम प्राप्त करें।

यम दंष्ट्राके रूपमें शारदीय नवरात्र समीप आ रहे हैं और उधर संसारसे अन्याय एवं आसुरीभावना का विनाश करनेके लिए मैय्याने महाकाली (रण-चण्डी) का रूप धारण किया हुआ है। ऐसे संकटापन्न भीषण समयमें प्राणिमात्रको मैय्याकी शरणमें जाकर निर्भय हो जाना चाहिए। आसुरी-वृत्तिके मनुष्य कभी भी मैय्याकी कृपा प्राप्त नहीं कर सकते, अतः उनका विनाश होना तो अवश्यम्भावी है।

जो भक्तजन हैं, उनके लिए यह देवी नवरात्र और विजयोत्सव महिषासुरमर्दिनी, त्रिभुवनेश्वरी, विजयलक्ष्मी मैय्याकी कृपा प्राप्त करनेका परमानन्दप्रद सुअवसर है। मूलतः यह उसी पुनीत पुराण प्रसिद्ध प्रसंगका स्मरण कराता है जिस प्रसंग पर भयत्रस्त अन्योपाय अक्षम सुरगुणोंका त्राण मैय्याने असुरगणों से किया था।

मैय्या चारों पदार्थ देने वाली हैं। वे शिवा हैं, कल्याणी हैं, करुणामयी हैं और हैं भक्तवत्सला। वे भक्तोंके दुःखको जितनी शीघ्रतासे दूर कर सकती हैं उतनी शीघ्रतासे भक्तोंका त्राण करने वाली दूसरी कोई शक्ति नहीं है। दुःख-दारिद्र्य-नाशके लिए, संग्राम-विजयके लिए और शत्रु-विनाश जैसे उग्रकार्यों के लिए माता दुर्गाकी ही पूजा की जाती है। कलियुग में विशेषतः चण्डीकी पूजा इसी लिए ऋषि-मुनियोंने बतलाई है। चण्डीका रूप भयङ्कर अवश्य है, परन्तु मैय्याके भक्त तो उनको प्यारे रूपमें भजते हैं और भीषण रूपमें भी ध्याते हैं। वे भक्तजनोंके शत्रुओं के लिए तो महाभीषण और भयंकरी हैं, सिंहवाहिनी हैं, काली हैं और भक्तोंकी कोमल भावनाओंके लिए वे कल्याणी हैं, शिवा हैं, सरस्वती हैं, जगदम्बा हैं और अन्नपूर्णा हैं।

देवियोंमें वे काली हैं और देवोंमें श्याम प्यारे काले हैं। श्याम प्यारे और श्यामा मां एक ही हैं। यह बात सुन कर लोग चौंकेंगे, पर सत्य बात यही है। श्यामवर्ण आकाशका भी है और वह अनन्तताका द्योतक है। श्याम-श्यामा, कृष्ण और कालीके नामोंसे पता चलता है कि इस रूपका ध्यान करने वाले भक्त पर दूसरा रङ्ग नहीं चढ़ता। "सूर श्याम कारी कमरी पै चढ़त न दूजो रङ्ग" यह परमभक्त महात्मा सूरदास जीका कथन भी इसी बातको सिद्ध करता है। वैसे सात रङ्ग कहनेके लिए हैं, परन्तु जोड़-तोड़ मिलाते-मिलाते अनेक रंग बन जाते हैं और उन सब रंगोंको मिलाते हैं तो अन्तमें 'काला' रङ्ग ही शेष रह जाता है। श्यामा मांमें सातों प्रकाश रश्मियां विलीन हो जाती हैं। क्योंकि ये सब प्रकाश-रश्मियां उन्हींकी तो हैं।

श्याम प्यारेके चारों आयुध श्यामा मां भी तो धारण करती हैं। शंख, चक्र, गदा, पद्म धारिणी हैं मां दुर्गा। इसके अतिरिक्त और भी कितने ही आयुध उनके पास हैं। घण्टा है, त्रिशूल है, परशु है, पाश है और तलवार है। तलवार तो वे स्वयं ही हैं और उसी रूपमें वे भवानी हैं, क्योंकि भवके पाशोंको मां

के अतिरिक्त और कौन काट सकता है ? संस्कृत-साहित्यमें 'भव' नाम शिवका है और संसारका भी। भव अर्थात् भगवान् शिव या संसारको सम्पूर्ण प्रकारसे जीवित रखने वाली महाशक्तिका नाम भवानी है, अस्तु।

दिव्यशस्त्रास्त्रोंके अतिरिक्त मां स्वयं शक्तिरूपा ही हैं। वे सदा अपनी शक्तिसे आसुरीवृत्तियोंका नाश और दैवीवृत्तियोंके उत्थानमें प्रयत्नशील दृष्टिगोचर होती हैं। सिंहवाहिनी मां दुर्गाकी प्रतिमा इसी ध्रुव सत्यको प्रकट करती है कि जिस व्यक्ति, जाति अथवा राष्ट्रमें शक्ति नहीं रह जाती, वह प्रस्तर मूर्त्ति की तरह जड़ हो जाता है। शुम्भ और निशुम्भका कथानक उस शक्तिका परिचायक है जिसका संकेत दुर्गासप्तशतीमें किया गया है—

यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति।
यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्ता भविष्यति॥

इस गम्भीर गर्जनाको मां वसुन्धराकी प्रतिध्वनि और राष्ट्रको अनन्त कालतक सम्मानित जीवन प्रदान करने वाला शक्तिका सन्देश कहा जा सकता है। जिसके अभावमें प्रत्येक राष्ट्रको दुःख दौर्भाग्य और पारतन्त्र्य आदि अनेक कष्टोंका सामना करना पड़ता है।

परन्तु फिर भी मां अपनी शक्तिके अभिमानमें दूसरोंका नाश नहीं करना चाहती, अपितु वह उसके बल पर संसारकी रक्षामें प्रयत्नशील दृष्टिगोचर होती हैं। शुम्भ और निशुम्भने जब अपनी अनन्त सेना को लेकर देवी पर आक्रमण किया तब भी उनके मनमें दया थी, वे इस बातको नहीं चाहती थी कि मेरे हाथसे किसीका वध हो। मांने भगवान् शंकरको दूत बना कर शुम्भ निशुम्भके पास भेजा और कहा कि हे भगवन्! गर्वित शुम्भ निशुम्भ तथा अन्य जो दानव युद्धके लिए उपस्थित हैं उनसे कहो कि—

त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः।
यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ॥

अर्थात्— यदि तुम अपना जीवन चाहते हो तो इन्द्र तीनों लोकोंका राज्य प्राप्त करे, देवता यज्ञके भागी हों और तुम सब पातालमें चले जाओ।

मांकी प्रत्येक वाणीमें शक्तिका सन्देश है। मां का कथन है कि शक्ति-सञ्चय कर लेने पर तुम्हारी समस्त विघ्न-बाधा शुम्भ और निशुम्भके नाशकी भांति विलीन हो जाएँगी और फिर तुम संसारमें अमरकीर्ति प्राप्त कर सकोगे।

हमारा विश्वास है कि यदि इन नवरात्रोंमें सच्चे हृदयसे अपनी बिखरी हुई शक्तियोंको एकत्रित कर मांकी आराधना करें तो संसारमें ऐसा कौन-सा महान् कार्य है जिसे हम न कर सकें ? ऐसी कौन-सी वस्तु है जिसे हम न पा सकें ?

"आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा।"

मां जिस प्रकार शक्ति-बल और जीवनप्रदातृ हैं, उसी प्रकार वे मानवोंको भोग स्वर्ग और मोक्ष भी प्रदान करने वाली हैं। अतः हमारा कर्तव्य है कि हम सच्चे हृदयसे मांकी आराधना करते हुए अभिलषित वस्तुओंको प्राप्त करें और संसारकी भलाईके लिए अपने आपको हंसते हंसते मांके चरणों पर न्यौछावर करदें।

(पृष्ठ ३४ का शेष)

चाहिए। गोस्वामी तुलसीदासजी भगवान्के विजय-रथका निम्न शब्दोंमें वर्णन करते हैं—

"सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्यशील दृढ़ ध्वजा पताका॥
बल विवेक दम परहित घोरे। क्षमा कृपा समता रिजु जोरे॥
ईश भजन सारथी सुजाना। विरति चर्म सन्तोष कृपाना॥
दान परशु बुधि शक्ति प्रचण्डा। वर विज्ञान कठिन कोदण्डा॥
अमल अचल मन त्रोण समाना। शम-यम-नियम शिलीमुख नाना॥
कवच अभेद विप्र-गुरु-पूजा। यहि-सम विजय उपाय न दूजा॥
सखा धर्ममय असरथ जाके। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके॥

इस प्रकारके अजयरथसे यदि हम अपनी विजय-यात्रा प्रारम्भ करेंगे, तभी इस संसार रूपी समरक्षेत्र-में विजय प्राप्त कर सकेंगे। ईश्वर हमें इस प्रकारका बल बुद्धि दें कि हम इस विजयादशमीके वास्तविक महत्त्वका ज्ञान प्राप्त कर संसार तथा अपनी आत्माका कल्याण कर सकें।

विजयादशमी

[लेखक — एक 'श्रीस्वाध्याय' प्रेमी]

आश्विन शुक्ल ६ रविवार ता० १८ अक्टूबर १६४२ ई०को विजयादशमी है। यह भगवान्की स्मृतिका पुण्य दिवस है, जो अतीत गौरवकी घटनाओंको प्रति वर्ष नवीन रूपमें उपस्थित करता है। यह वह दिन है, जब धर्मने अधर्म पर, नीतिने अनीति पर, सत्यने असत्य पर, प्रकाशने अन्धकार पर,,आत्मबलने पशुबल पर और सुरोंने असुरों पर विजय प्राप्त की थी। इस पवित्र दिनकी स्मृति आज भी हम पतितोंको बल देती है, हममें स्फूर्त्तिका सञ्चार करती है और अमित उत्साह देती है।

विजयादशमीका अर्थ है—विजय दिलानेवाली दशमी। अब यह देखना है कि इस तिथिको किसने किस पर विजय प्राप्त की थी। पुराणोंके अवलोकनसे ज्ञात होता है कि महिषासुर नामका एक महा भयङ्कर दैत्य था। वह देवताओं को अत्यन्त कष्ट देता था उनके दुःखको दूर करनेके लिए मांने दुर्गाका अवतार धारण कर महिषासुरका संहार किया था। उसी दिनसे विजयकी स्मृतिमें यह त्यौहार मनाया जाता है।

इसके अतिरिक्त बहुत विद्वानोंका यह भी मत है कि श्रीरामचन्द्रजीने आजके दिन लङ्का पर आक्रमण किया था और आज ही के दिन भगवान्की वानरी सेनाने एक महान् उत्सव मनाया था। उसी विजयकी पुण्य स्मृतिमें आजका यह विजय-दिवस है। इस दिन राजा लोग अपनी अपनी सैना सजाते हैं, अस्त्रों-शस्त्रोंका विधिवत् पूजन कर शक्तिकी उपासना करते हैं।

श्रीरामचन्द्रजीने इस विजयादशमीको ही युद्धके लिए प्रस्थान किया था। इस कथनका रामायणादि ग्रन्थोंमें स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता, अतः समग्र रूपसे इस विवादग्रस्त विषयको सुलझानेके लिए अन्य ग्रन्थों की सहायता लेनी होगी। कालिका पुराणमें लिखा है—

> व्यतीते सप्तमे रात्रे नवम्यां रावणं ततः।
> रामेण घातयामास महामाया जगन्मयी॥

इस मतसे रावणवध नवमीके दिन होता है और उत्सवादि मनाना उचित न समझकर दूसरे दिन यह उत्सव मनाया गया होगा जिसके फलस्वरूप इस उत्सवकी परिपाटी प्रारम्भ हुई। इस दिन अधिकांश लोग नीलकण्ठ नामक पक्षीका दर्शन करते हैं। कुछ लोगोंको यह विश्वास है कि जब भगवान् राम रावण से युद्ध करने जारहे थे; तो उन्हें नीलकण्ठ पक्षीके दर्शन हुए और उसी दिन वे विजयी होगये। तभीसे इस पक्षीके दर्शन शुभ समझे जाते हैं। कुछ नीलकण्ठका यह अभिप्राय बताते हैं कि समुद्रमन्थनके समय भगवान् शङ्करने अपने गले में गरल धारण किया था और उससे भगवान्का कण्ठ नीला होगया था, अतः उन्हें नीलकण्ठके नामसे सम्बोधित किया और आज भगवान् शङ्करके दर्शन न होनेके कारण अन्धपरम्परासे नीलकण्ठ पक्षीको ही उनका प्रतिनिधि मान लिया गया।

हम सदाकी भांति इस वर्ष भी विजयादशमीका शुभ उत्सव मनानेके लिए प्रस्तुत हुए हैं। परन्तु आज हमें उत्सव ही नहीं, अपितु सचमुच विजयकी आवश्यकता है। शत्रु हमारे सिर पर मँडरा रहा है, चारों ओरसे 'त्राहि त्राहि' का चीत्कार सुनाई देता है। संसारयात्रामें सफलता औरविजय प्राप्त करनेके लिए आजके दिन हमें ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि संसारसे निराशाके बादल छिन्न-भिन्न होकर विश्व-शान्तिके साथ साथ पुनः रामराज्यकी स्थापना हो सके।

यदि हमें यथार्थ में दृढ़ होना है; संसारयात्रामें सफल और विजयी होना है तो हमें भी श्रीरामचन्द्र-जीके समान अजेय विजयरथमें यात्रा करनी

[शेष पृष्ठ ३३ पर देखिये]

विनाशकाल

दैवज्ञकी दृष्टिमें संसारचक्र

रोहिणी शकटभेद, तीनग्रहण और पंचग्रहयोग

[लेखक—श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक "श्रीस्वाध्याय"]



समस्त संसारके लिए सृष्टि स्थिति और संहार उतना ही आवश्यक है जितना कि प्रत्येक वस्तुमात्रको अपने आपकी स्वाभाविक परिस्थितिमें रहना। स्वभाव क्या है इसका विवेचन पूर्ण रूपसे करनेके लिए यदि शिव-महिम्नका निम्न श्लोक पाठकोंको सुना दिया जाय तो पर्याप्त होगा—

असितगिरिसमं स्यात्क.जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥

[समुद्रमें काजलका पहाड़ घोलकर स्याही बनाली जावे और कल्पवृक्षकी लेखनीसे अनन्त समय तक पृथ्वी रूपी कागज पर स्वयं सरस्वती इस स्वभावका गुणगान अङ्कित करे तो भी इस स्वभाव का पार पाना कठिन है]

किन्तु असम्भव बातोंको भी सांसारिक पुरुष सम्भव कोटिमें लानेकी चेष्टा करते ही रहते हैं; यह कोई नई बात नहीं, न यह आश्चर्यकी ही बात है; कारण यह सब स्वाभाव ही तो है। जिस प्रकार शिवजीकी परिक्रमा पूरी नहीं हो सकती या अपनी छायाको कोई भी लांघ नहीं सकता उसी प्रकार इस स्वभावसे परली पार कोई जा ही नहीं सकता। प्रत्येक समयमें तथा प्रत्येक राष्ट्रमें इसी स्वाभाविक नियमानुसार परिवर्त्तन होते ही रहते हैं। इसी कारण विनाशकाल भी स्वाभाविक ही है; फिर इससे भयभीत होनेकी बुद्धिमानोंको तो आवश्यकता ही नहीं। भगदड़ मचाना मूर्खोंका स्वभाव हो सकता है, विद्वानोंका नहीं! भगवान् कहते हैं कि पण्डित तो वे ही हैं जो मरे हुओंके तथा जीवितोंके पीछे शोक नहीं किया करते--

"गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिता:"

श्रीस्वाध्यायके गताङ्कोंमें संसारकी परिस्थिति पर ज्योतिशास्त्रकी दृष्टिसे थोड़ा २ विचार किया गया था। इस अङ्कमें भी आधिदैविक परिस्थितिको देखते हुए भौत्तिक सृष्टि पर इसका क्या परिणाम होगा इस सम्बन्धमें कुछ विचार प्रकाशित किए जारहे हैं। आकाशीय ग्रहोंके हलचलसे उत्पन्न होनेवाले भूलोकके परिणामोंके विषयमें "इदमित्थं" करके निश्चय करना सामान्य मनुष्यके लिए साधारण बात नहीं। फिर भी गताङ्कोंमें हमने जो विचार प्रकट किये थे उनमेंसे ६५ प्रतिशत बातें ठीक मिली हैं ऐसा 'श्रीस्वाध्याय' के पाठकोंका कहना है। हमारे प्रेमी पाठक प्रतिदिन हमसे प्रश्न करते रहते हैं कि—"पण्डितजी हमें क्या करना चाहिए? कौनसा स्थान सुरक्षित है? महायुद्धका क्या परिणाम होगा?" आदि आदि।

इन सब बातोंका यथार्थ उत्तर देना एक परतन्त्र-राष्ट्रमें रहनेवाले व्यक्तिके लिए बहुत ही कठिन है। फिर हम भी तो मनुष्य ही हैं; सर्वज्ञ नहीं। ग्रहगणनाके आधार पर ज्यौतिशशास्त्रसे हमें जो शुभाशुभ परिणाम या सङ्केत दिखाई देते हैं उसीको हम कुछ स्पष्टरूपमें प्रकट कर देते हैं। यह बात अवश्य है कि भगवत्कृपासे वह बहुत अंशोंमें ठीक हो जाता है; इसी कारण प्रेमी पाठक प्रत्येक अङ्कमें इस विषय पर अधिक स्पष्टरूपमें लिखनेके लिए आग्रह करते हैं। उनके सन्तोष-विधानार्थ ही 'श्रीस्वाध्याय' में हमने

अपने विचार व्यक्त करनेका निश्चय किया है। किन्तु हम चाहे कितने ही शास्त्रीय प्रमाण देकर लिखें या कैसे भी लिखें–सत्य बात लिखने या कहनेके लिए हम लोगों पर बड़े भारी प्रतिबन्ध लगे हुए हैं, इसको एक भुक्तभोगी ही जान सकता है। ऐसी परिस्थितिमें अभी कुछ समय पर्यन्त इस विषय पर हम अधिक स्पष्टरूपमें नहीं लिख सकेंगे, पाठक क्षमा करें।

वर्तमानकालकी ग्रहगणनासे ज्ञात होता है कि संसारमें विनाशकाल उपस्थित होनेवाला है। आकाशमें जैसी ग्रहस्थिति ५००० वर्ष पूर्व महाभारतयुद्धके महाविनाशसे पूर्व आई थी; वैसी ही अब उपस्थित हो रही है। अर्थात् इसी आषाढ़ मासमें शनि द्वारा रोहिणी शकटका भेदन, श्रावण कृष्ण ३० से भाद्रपद कृ० ३० पर्यन्त एक मास या ३० दिनमें सूर्यचन्द्रके ३ ग्रहण और आगे आश्विन कार्तिक मार्गशीर्षकी अमावस्याओंको पांच पांच ग्रह एकत्र हो रहे हैं। नभोमण्डलमें होने वाले इन ग्रहनक्षत्र-जन्य उत्पातोंके परिणामसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि समस्त संसारमें घनघोर संग्राम, महामारी, भूकम्प, अनावृष्टि, अतिवृष्टि, दुर्भिक्ष आदि भांति भांतिके सङ्कटोंसे असंख्य प्राणी कालके गालमें समा जावेंगे। भौतिक विज्ञानके विनाशकी यह पूर्व सूचना है। इन्हीं अशुभ योगोंका परिणाम हम क्रमशः नीचे दे रहे हैं—

रोहिणी शकटभेद

श्रीवराहमिहिराचार्यजीने तथा अन्यान्य संहिताग्रन्थोंमें शनिरोहिणी शकटभेदका फल यों लिखा है—

यदि भिन्ते सूर्यपुत्रो रोहिण्याः शकटमिहलोके।
द्वादश वर्षाणि तदा नहि वर्षति वासवो भूमौ॥

यदि सूर्यका पुत्र शनैश्चर रोहिणी नक्षत्रके शकटको भेदन करता है तब इन्द्र इस संसारमें भूमि पर १२ वर्ष पर्यन्त वर्षा नहीं करता। [१२ वर्ष पर्यन्त वर्षा न होनेका भावार्थ यह है कि बहुत दिन तक संसारमें सुभिक्ष और शान्ति स्थापित नहीं हो सकती।]

प्राजापत्ये शकटे भिन्ने कृत्वैव पातकं वसुधा।
भस्मास्थिशकलकीर्णा कापालिकमिव व्रतं धत्ते॥

प्रजापतिदेवताके अर्थात् रोहिणी नक्षत्रके शकटको शनैश्चर द्वारा भङ्ग करने पर पृथ्वी पाप करके भस्म (चिताकी राख) अस्थि (मुर्दोंकी हड्डियों) के टुकड़ोंसे व्याप्त हो कापालिक (सरभङ्ग) व्रत धारण कर लेती है।

रोहिणीशकटमर्कनन्दन श्चेद्भिनत्ति रुधिरोऽथवा शशी।
किं वदामि तदनिष्टसागरे सर्वलोक उपयाति संक्षयम्॥

यदि शनैश्चर वा मङ्गल अथवा चन्द्रमा रोहिणी नक्षत्रके शकटको भेदन करें तो क्या कहूं उस अमङ्गलरूप समुद्रमें समस्त संसार ही नाशको प्राप्त हो जाता है।

कुछ मित्रोंने हमसे पूछा है कि—"यह शनि रोहिणी शकटभेद योग प्रति ३० वर्षके अनन्तर जब शनि रोहिणीनक्षत्र पर उतने ही शर पर आता है तब नहीं होता क्या? यह योग तो ३० या ६० वर्षके पहिले भी आचुका था।"

इसका उत्तर यह है कि केवल वृषभके १३॥ अंशका ग्रह और दक्षिण शर होनेसे ही ग्रह रोहिणीशकटभेद नहीं कर सकता, अपितु इस योगके साथ ही राहु (पात) का पुनर्वसुसे आठ नक्षत्रोंके अन्तर्गत होना भी परमावश्यक है। यदि राहु इन आठ नक्षत्रोंमें न हो तो शर भोग समान होने पर भी शकटभेद नहीं हो सकता। जैसे श्रीकेतकरजीने लिखा है—

सदलरामयुगांशमिते ग्रहे यदि खतिथ्यधिको यमदिक् शरः।
स शकटं च भिनत्ति विधुः सदाऽदितिभतोऽष्टसुभेषु तमे स्थिते॥

उपर्युक्त श्लोकानुसार शरभोगका गणित करके देखें तो ऐसा योग सैकड़ों वर्षोंमें भी नहीं मिलेगा।

ग्रहणोंका फल

१—श्रावण कृष्ण ३० बुधवार ता० १२ अगस्त १६४२ ई०को खण्डग्रास (स्वल्प) सूर्यग्रहण होगा। यह भारतसे बाहर केवल अटार्क्टिकरीजन आदि द्वीपोंमें ही दिखाई देगा।

२—श्रावण शु० १५ बुधवार ता० २६ अगस्त १६४२ को खग्रास चन्द्रग्रहण होगा, यह भारतीय उपसागरके पश्चिममें, यूरोप, अफ्रिका, अतलान्तक-महासागर, दक्षिणोत्तर अमेरिका और प्रशान्त महासागरके पूर्वीय भागमें दिखाई देगा। भारतमें नहीं।

३—भाद्रपद कृष्णा ३० गुरुवार ता० १० सितम्बर १६४२ को खण्डग्रास सूर्यग्रहण होगा। यह यूरोप, एशिया, अमेरिका, उत्तर-अफ्रिका और अतलान्तक महासागरमें दिखाई देगा, भारतमें नहीं।

जिन जिन देशोंमें ये ग्रहण दृष्टिगोचर होंगे उन उन देशों में अत्यन्त अनिष्टफल दिखाई देगा। राजनीतिमें विलक्षण रीतिसे उलटफेर हों, प्रजासत्तात्मक राज्य प्रस्थापित करनेके लिए जनताका विशेष आग्रह हो। संसारमें षड्यंत्र, हत्या, उत्पात, युद्ध, महामारी आदिसे विचित्र हलचल उत्पन्न हो। यों तो पन्द्रह १५ दिनके अन्तरसे एक साथ तीन ग्रहणोंका होना समस्त संसारके लिए ही महान् अनिष्टसूचक है। तथापि विशेषकर जर्मनी, जापान, इंगलेण्ड, फ्रांस, इटली, पश्चिमोत्तर अफ्रिका, यूरोपियन टर्की, स्विटजरलेण्ड, मेसोपेटोमिया, रूमानिया, स्पेन, आस्ट्रेलिया, पुर्त्तगाल आदि देशोंमें भयङ्कर अनिष्ट फल होगा। अमेरिकामें धान्य व कपासकी फसलको भी हानि होगी। नृपवर्ग, अधिकारीवर्ग और एक दूसरे राष्ट्रके सेनानायकोंमें भीषण संघर्ष होकर घनघोर विश्वव्यापी संग्राम हो। वाराही संहितामें लिखा भी है—

> चन्द्रार्कयोरेकमासे ग्रहणं न प्रशस्यते।
> परस्परवधं कुर्युः स्वबलक्षुभिता नृपाः॥

ये तीनों ग्रहण विश्वको विनाशकी ओर लेजानेके लिए उत्पात रूप हैं। इनके परिणाम स्वरूप यूरोप और एशिया खण्डके किसी भागमें धूमकेतु (पुच्छलतारा) के दर्शन भी होंगे।

पञ्चग्रह योग फल

आश्विन कृष्ण ३० शनिवार ता० १० अक्टूबर १६४२ ई० को कन्या राशिमें पांच ग्रह एकत्र हो रहे हैं। तथा आगे कार्तिक मार्गशीर्षकी अमावस्याओंको भी क्रमशः तुला वृश्चिक राशिमें पांच पांच ग्रह एकत्र होंगे यह भी विनाश योग है। इसका फल यों लिखा है—

> अथातः संप्रवक्ष्यामि ग्रहयोगाख्यशान्तिकम्।
> अमावास्यादितिथिषु ग्रहयोगो भवेद्यदि॥
> एकर्क्षे युग्मराशौ च भिन्नर्क्षे एकराशिगे।
> शशिसूर्यसमायोगे पञ्चग्रहसमन्विते॥
> महारोगभयं राष्ट्रं राजयुद्धं भविष्यति।
> नृपवैरिगर्भनाशो हन्ति पञ्च जगत्त्रयम्॥
> जायते जननाशश्च मन्त्रिणो मरणं भवेत्।
> अतिवृष्टिरनावृष्टिः परचक्रभयं तथा॥
> उत्पातादिभयं सर्वं सङ्करादि जनक्षयः।
> जगत्प्रलयमेवापि तदा निर्मानुषं जगत्॥
> भूकम्पादिमहोत्पातो नानादुःखसमाकुलम्।
> पश्वाश्वादिभयं सर्वं वशिष्ठवचनं तथा॥

निष्कर्ष यह है कि इन पांचग्रह योगोंके परिणामसे समस्त संसारमें युद्धका दावानल भीषणरूपसे धधकेगा। अतिवृष्टि, अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, अराजकता (लूटमार) भूकम्प, धूमकेतु-उदयादि उत्पातों द्वारा प्रजाका भीषणरूपसे संहार होगा। इन योगोंका अनिष्ट प्रभाव चीन, तिब्बत, आस्ट्रेलिया, रूस, जर्मनी, जापान, इंगलेण्ड, आस्ट्रिया, अमेरिका, बल्गेरिया, नारवे, ट्रान्सवाल, अफ्रिका, अरबस्थान, इटली, हङ्गरी, स्पेन तथा भारतमें विन्ध्यपर्वत एवं भागीरथी कृष्णा-गौतमीके समीपवर्त्ती नगर, पूना नागपुर, कानपुर, दक्षिण भारत, सीमाप्रान्त, सिन्ध, पञ्जाब, बम्बई, उड़ीसा, आसाम और बङ्गाल प्रान्तमें विशेषरूपसे होगा। साधारण अशुभफल सर्वत्र दिखाई देगा।

सुरक्षित स्थान

"इस सङ्कट समयमें कौनसे स्थान सुरक्षित रहेंगे ?" यह प्रश्न प्रायः सभी लोग किया करते हैं; अतः इस पर भी कुछ लिखना अप्रासङ्गिक न होगा, यद्यपि राष्ट्रकी विपत्तिके समय पूर्णरूपेण तो कोई भी स्थान सुरक्षित नहीं कहा जा सकता। कहीं सैनिक

आतङ्क तथा युद्धाग्निसे असुरक्षितता होगी तो कहीं पारस्परिक झगड़े लूट खसोट आदिसे। इस प्रकार पूर्णशांति तो कहीं भी सम्भवित नहीं। तथापि सैनिक आतंक और युद्धाग्निसे कुछ अंशोंमें सुरक्षित रहनेके लिए मध्यभारतके ग्राम व नगर, राजस्थान मेवाड़ मारवाड़ जयपुर बीकानेर आदिके कुछ स्थल नगर ग्रामादि और पंजाबका कुछ ग्राम्यभाग ठीक रह सकेगा। मध्यभारत सर्वथा रक्षित रहेगा। हिम-उपत्यकाका पर्वत प्रदेश शिमला, अल्मोड़ा, कांगड़ा, काश्मीर आदि प्रान्त पूर्णरूपेण सुरक्षित नहीं हैं। इनमें पर-चक्रसे अथवा प्रकृति कोपसे भयकी सम्भावना है। सीमाप्रान्तवर्त्ति नगर ग्राम और भारतके कुछ सैनिक शिविर, बड़े २ कारखाने और प्रधान २ नगरोंमें पूर्ण शान्ति रहना असम्भव है।

इसके अतिरिक्त अन्य विशेष फल वही होगा जो हम "श्रीस्वाध्याय" के गतांकोंमें लिख चुके हैं। हमारा भविष्यफल कहां तक यथार्थ मिलता जारहा है–यह जाननेके लिए नए ग्राहकोंको भी "श्रीस्वाध्याय" के गतांक अवश्य देखने चाहिएँ। गत तीनों अंकोंसे भी पाठकोंको संसारका भविष्य जाननेमें बहुत कुछ सहायता मिल सकती है।

ग्रहयोग प्रतियोग और केन्द्रादि दृष्टियां

[लेखक— गणकभास्कर पं० सखाराम पुरुषोत्तमजी जोशी]

अगस्त मासमें

ता० १ चं० शु० चं० गु० केन्द्रयोग।
२ शु० गु० व सू० बु० युतियोग, बुध शनि तृतीयैकादश।
३ सू० श० तृती०; चं० मं० त्रिकोण, चं० सू० केन्द्रयोग।
४ चं० गु० तृती०; चं० बु० केन्द्र; चं० शु० तृतीयैकादश।
५ चं० नेपच्यून त्रिकोण; चं० मं० केन्द्र०; चं० हर्शल युतियोग।
६ चं० श० युति; चं० सू० तृतीयैकादश।
७ चं० बु० तृतीयैकादश; मं० ह० केन्द्रयोग; चं० ने० केन्द्रयोग।
८ चं० मं० तृतीयैकादश।
९ चं० गु० युति०; चं० शु० युति०।
१० चं० ने० चं० ह० चं० श० तृतीयैकादश।
१२ चं० बु० युति।
१३ चं० ने० चं० श० केन्द्रयोग।
१४ चं० गु० तृतीयैकादश।
१५ चं० शु० तृतीयैकादश; बु० हर्शल केन्द्र०; चं० ह० त्रिकोण; शु० ने० तृतीयैकादश।
१६ चं० श० त्रिकोण; चं० गु० केन्द्र०।
१७ चं सू० तृतीयैकादश; चं० शु० केन्द्रयोग।
१८ चं० बु० चं० मं० तृतीयैकादश; चं० गु०–त्रिकोण योग।
१९ मं० श० केन्द्र०; बु० श० केन्द्र०; चं० सू० केन्द्र०; बु० मं० युति; चं० ने० तृतीयै०।
२० चं० शु० त्रिकोण; ह० चं० प्रतियोग; श० चं० मं० केन्द्र०; च० बु० केन्द्र।
२१ चं० सू० त्रिकोण; चं० ने० केन्द्र०।
२२ बु० गु० तृतीयैकादश; चं० मं० त्रिकोण; चं० गु० प्रति०।
२३ चं० बु० ने० त्रिकोण।
२४ चं० ह० त्रिकोण; चं० शु० प्रतियोग; चं० श० त्रिकोण।
२६ चं० सू० प्रतियोग; चं० ह० केन्द्रयोग; शु० श० तृतीयैकादश; चं० श० केन्द्रयोग।
२७ च० मं० प्रतियोग; चं० गु० त्रिकोण; चं० बु० प्रतियोग।

२८ चं० ने० प्रतियोग; मं० शु० तृतीयैकादश; सू० ह० केन्द्रयोग; चं० ह० तृतीयैकादश।
२९ चं० श० तृतीयैकादश; चं० शु० त्रिकोण; चं० गु० केन्द्र।
३० बु० ने० युति०; चं० सू० त्रिकोण।
३१ चं० गु० तृतीयैकादश, चं० शु० केन्द्र; चं० मं० त्रिकोण।

सितम्बर मासमें

ता० १ चं० ने० त्रिकोण; चं० बु० त्रिकोण।
२ चं०ह० युति; चं०सू० केन्द्र; चं०श० युति।
३ चं० मं० केन्द्र; बु० ह० त्रिकोण; चं० शु० तृतीयैकादश।
४ चं० ने० बु० केन्द्रयोग।
५ सू० ह० केन्द्र; चं० सू० तृतीयैकादश; चं० गु० युति।
६ चं० मं तृतीयैकादश; चं० ने० तृतीयैकादश।
७ चं० बु० तृतीयैकादश; चं० श० तृतीयैकादश।
९ चं०शु० युति० चं०ह० केन्द्र; बु०श०त्रिकोण।
१० चं० श० केन्द्रयोग; चं० गु० तृतीयैकादश।
११ चं०मं०युति०; चं०ने० युति; चं०ह० त्रिकोण
१२ चं० श० त्रिकोण; चं० बु० युति।
१३ चं० गु० केन्द्र; सू० गु० तृतीयैकादश।
१४ चं० शु० तृतीयैकादश; शु० ह० केन्द्रयोग।
१५ चं०गु० त्रिकोण योग; चं०सू० तृतीयैकादश; चं०मं० तृतीयैकादश; चं०ने० तृतीयैकादश।
१६ चं० ह० प्रतियोग; मं० ने० युति; चं० शु० केन्द्र०; च० श० प्रतियोग।
१७ चं० बु० तृतीयैकादश; बु० गु० चं० सू० केन्द्रयोग।
१८ चं० ने०चं०मं० केन्द्रयोग; चं०शु० त्रिकोण।
१९ चं० बु० केन्द्र; चं० सू० त्रिकोण।
२० चं० ने०, मं० ह० केन्द्र; शु०श० केन्द्र।
२१ चं० श० त्रिकोण; चं० बु० त्रिकोण।
२२ चं० ह० केन्द्र।
२३ चं० श० केन्द्र; सू० ने० युति; चं० शु० प्रतियोग, चं० गु० त्रिकोण।
२४ मं० ह० त्रिकोण; चं० ने० प्रतियोग; चं० सू० प्रतियोग; चं० मं० प्रतियोग।
२५ चं० श० तृतीयैकादश।
२६ चं० गु० त्रिकोण।
२८ सू० ह० त्रिकोण, शु० गु० चं० गु० तृतीयैकादश; चं० शु० त्रिकोण।
२९ चं० ने० त्रिकोण; चं० ह० युति; चं० सू० त्रिकोण; चं० मं० त्रिकोण।
३० चं० श० युति।

अक्टूबर मासमें

ता० १ चं० बु० त्रिकोण; चं०शु० केन्द्र, चं०ने०के०।
२ चं० सू० चं० मं० केन्द्रयोग।
३ चं० गु० युति०; चं० बु० केन्द्र०।
४ चं०बु०ने० ह० तृतीयैकादश; शु०ने० युति।
५ चं० सू० मं० श० तृतीयैकादश।
६ सू० मं० युति, चं० बु० तृतीयैकादश; सू० चं० त्रिकोणयोग, मं० श० त्रिकोण।
७ चं० ह० केन्द्रयोग, चं० श० केन्द्रयोग।
८ शु० ह० त्रिकोण; चं० गु० तृतीयैकादश; चं० ने० युति।
९ चं० ह० त्रिकोणयोग चं० शु० युति।
१० चं० मं० चं० सू० युति; चं० बु० युति०; चं० गु० केन्द्र०।
११ सू० बु० युति०; बु० मं० युति०।
१२ चं० गु० त्रिकोण।
१३ चं० ने० तृतीयैकादश; चं० ह० प्रतियोग।
१४ चं शु० तृतीयैकादश; चं० श० प्रतियोग; चं० बु० मं० तृतीयैकादश; शु० ह० त्रिकोण; चं० सू० तृतीयैकादश।
१५ बु०शु०युति;चं० ने० के०, बु०श० त्रिकोण।
१६ चं० बु० शु० केन्द्रयोग; चं० मं० सू० के०।
१७ चं० गु० प्रतियोग; चं० ने० ह० त्रिकोण०।
१८ सू० गु० केन्द्र०; चं० बु० त्रिकोण; चं० श० त्रिकोण; चं० शु० चं० मं० त्रिकोण०।

त्रैमासिक पर्व व्रतादि निर्णय

[लेखक— — श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक "श्रीस्वाध्याय"]



मास	पक्ष	तिथि	वार	तारीख	विवरण
आषाढ़	शुक्ल	१०	गुरुवार	ता० २३ जुलाई	मन्वादि चतुर्मासारम्भ नक्तव्रत श्रीस्वाध्याय सदन स्थापना-दिवस
,,	,,	११	शुक्रवार	ता० २४ जुलाई	देवशयनी ११ व्रत
,,	,,	१२	शनिवार	ता० २५ ,,	शनिप्रदोषव्रत
,,	,,	१५	सोमवार	ता० २७ ,,	व्यास पूजा, वायु परीक्षा, सत्यव्रत।
श्रावण	कृ०	३	गुरुवार	ता० ३० ,,	श्रीगणेश ४ व्रत
,,	,,	११	शुक्रवार	ता० ७ अगस्त	कामिका ११ व्रत
,,	,,	१३	रविवार	ता० ९ ,,	प्रदोषव्रत
,,	,,	३०	बुधवार	ता० १२ ,,	हरियाली अमावस्या
श्रावण	शुक्ल	१	गुरुवार	ता० १३ ,,	चन्द्रदर्शन नक्तव्रतारम्भ
,,	,,	४	रविवार	ता० १६ ,,	सिंह संक्रान्ति मु० ३० पुण्यकाल अगले दिन
,,	,,	५	सोमवार	ता० १७ ,,	नागपञ्चमी
,,	,,	११	शनिवार	ता० २२ ,,	पुत्रदा ११ व्रत
,,	,,	१२	रविवार	ता० २३ ,,	प्रदोषव्रत
,,	,,	१४	मंगलवार	ता० २५ ,,	सत्यव्रत
,,	,,	१५	बुधवार	ता० २६ ,,	ऋषितर्पण, रक्षाबन्धन, अमरनाथयात्रा (काश्मीर)
भाद्रपद	कृ०	३	शनिवार	ता० २९ ,,	श्रीगणेश ४ व्रत कज्जली ३
,,	,,	५	सोमवार	ता० ३१ ,,	चन्दनषष्ठी हल ६
,,	,,	७	बुधवार	ता० २ सितम्बर	श्रीकृष्णजन्माष्टमी व्रत स्मार्त्तोंके लिए चन्द्रोदय स्टेण्डर्ड टाइम घं० १२ मि० २
,,	,,	८	गुरुवार	ता० ३ ,,	श्रीकृष्णजन्माष्टमी वैष्णवोंकी चन्द्रोदय स्टे० टाइम घं० १२ मि० ५०
,,	,,	९	शुक्रवार	ता० ४ ,,	गुग्गानवमी
,,	,,	११	रविवार	ता० ६ ,,	अजा ११ व्रत
,,	,,	१२	सोमवार	ता० ७ ,,	वत्स १२
,,	,,	१३	मंगलवार	ता० ८ ,,	भौमप्रदोषव्रत
,,	,,	३०	गुरुवार	ता० १० ,,	कुशोत्पाटिनी ३०
भाद्रपद	शुक्ल	२	शनिवार	ता० १२ ,,	चन्द्रदर्शन सामवेदियोंका उपाकर्म।
,,	,,	३	रविवार	ता० १३ ,,	हरितालिका ३ व्रत, मंगलागौरीव्रत, वाराह जयन्ती, पत्थर (कलङ्क) ४ चन्द्रदर्शन निषेध चन्द्रास्त स्टे०टा० घं० ८ मि० २८
,,	,,	५	मंगलवार	ता० १५ ,,	ऋषिपञ्चमी, जैन पर्यूषणारम्भ

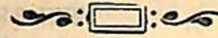
,,	,,	६	बुधवार ता० १६ ,,		कन्या संक्रान्ति मु० १५ पुण्यकाल अगले दिन
,,	,,	७	गुरुवार ता० १७ ,,		श्री दधीचि जयन्ती
,,	,,	८	शुक्रवार ता० १८ ,,		श्रीराधाजयन्ती श्रीमहालक्ष्मीव्रतारम्भ
,,	,,	११	रविवार ता० २० ,,		पद्मा ११ व्रत स्मार्त्तोंके लिए
,,	,,	१२	सोमवार ता० २१ ,,		पद्मा ११ व्रत वैष्ण० वामनजयन्ती
,,	,,	१३	मंगलवार ता० २२ ,,		भौमप्रदोषव्रत
,,	,,	१४	बुधवार ता० २३ ,,		अनन्त चतुर्दशी व्रत
,,	,,	१५	गुरुवार ता० २४ ,,		सत्यव्रत प्रौष्ठपदी श्राद्ध
आश्विन	कृष्ण	१	शुक्रवार ता० २५ ,,		महालया (पितृपक्ष) रम्भ
,,	,,	३	रविवार ता० २७ ,,		श्रीगणेश ४ व्रत
,,	,,	८	शुक्रवार ता० २ अक्टूबर		श्रीमहालक्ष्मीव्रत समाप्ति, जीवत्पुत्रिका व्रत
,,	,,	१०	रविवार ता० ४ ,,		पुष्यार्कयोग
,,	,,	११	मंगलवार ता० ६ ,,		इन्दिरा ११ व्रत
,,	,,	१२	बुधवार ता० ७ ,,		प्रदोषव्रत
,,	,,	३०	शनिवार ता० १० ,,		महालय समाप्ति पितृविसर्जन शनैश्चरी ३०
आश्विन	शुक्ल	१	रविवार ता० ११ ,,		शारदीय नवरात्रारम्भ मातामहश्राद्ध चन्द्रदर्शन
,,	,,	५	बुधवार ता० १४ ,,		शान्ति पञ्चमी ललिता ५
,,	,,	६	गुरुवार ता० १५ ,,		श्रीसरस्वत्यावाहन
,,	,,	७	शुक्रवार ता० १६ ,,		श्रीसरस्वतीपूजन
,,	,,	८	शनिवार ता० १७ ,,		तुलासंक्रान्ति मु० ४५ पुण्यकाल घ० १०।१ उपरान्त सरस्वती बलिदान दुर्गा ८ महा ६
,,	,,	६	रविवार ता० १८ ,,		विजया १० (दशहरा) अपराजिता पूजन राजचिन्ह-पूजा, श्री सरस्वती विसर्जन, बौद्धजयन्ती ।

महापुरुषोंकी जयन्तियां, निर्वाण दिन और प्रसिद्ध मेले

श्रावण	शुक्ल	७	मंगलवार ता० १८ अगस्त	श्री गो० तुलसीदास निर्वाण दिन
,,	,,	८	बुधवार ता० १६ ,,	मेला श्री नयनादेवी और चिन्तपूर्णी
,,	,,	१५	बुधवार ता० २६ ,,	काश्मीरमें अमरनाथयात्राका मेला
भाद्रपद	कृष्ण	११	रविवार ता० ६ सितम्बर	दादाभाई नौरोजी जन्मदिवस
,,	,,	१४	बुधवार ता० ६ ,,	महाराणी अहल्याबाई पुण्यदिवस
भाद्र०	शु०	५	मंगलवार ता० १५ ,,	श्री १०५ मान् बघाट नरेशजीका जन्मोत्सव
,,	,,	१२	सोमवार ता० २१ ,,	मेला अम्बाला पटियाला वामनद्वादशी
,,	,,	१४	बुधवार ता० २३ ,,	मेला छपार, अनन्त १४, श्री १०५ मान् रावराजा गिरिधारीशरणसिंहजीका जन्मोत्सव
आश्विन	कृ०	८	शुक्रवार ता० २ अक्टू	महात्मा गान्धी जन्मदिन
,,	,,	१०	सोमवार ता० ५ ,	सर फिरोजमहता निर्वाण दिन
,,	,,	१४	शुक्रवार ता० ६	श्रीनानासाहब पुण्यदिन

त्रैमासिक भविष्य और राशिफल

[लेखक—गणकभास्कर पं० सखाराम पुरुषोत्तमजी ज्योतिश्शास्त्री]



श्रावण मासका भविष्य

यह मास आरोग्यदृष्टिसे समाधानकारक नहीं है; सिंह राशिमें मंगल और राहु होनेके कारण जनतामें मलेरिया रोगका अधिक उपसर्ग रहेगा। सामाजिक-सुधार, लोकोन्नति, देश-संगठन इत्यादिके लिये यह समय अच्छा है। संसारमें शान्ति स्थापित करनेके लिये अधिकारारूढ़ पक्ष व नेताओंमें प्रयत्न हो; भारतके लिये यह समय कुछ महत्त्वकारक होगा। अधिकारारूढ़ पक्षके लिये शारीरिक कष्ट, चित्तव्यग्रता, अनिष्टफलप्रद रहेगा। इस समयमें कुछ बड़े २ लोगों की मृत्यु हो। जागीरदार तथा सरदार लोगोंको यह समय अत्यन्त कष्टकारक है। किसान लोगोंको यह मास चिन्तापूर्वक जायगा। मजूरवर्गको इसमें अनेक आपत्तियां भुगतनी पड़ेंगी। जनता के लिये सांपत्तिक कष्ट हो। सर्वप्रकारके धान्योंमें महर्घता हो। रोकड़की कमी, घास (चारा) न मिलनेसे पशुओंकी मृत्यु-संख्या अधिक हो। दुष्कालके चिन्ह दिखाई दें।

श्रावण मासका राशि-फल

मेष इस मासमें लाभखर्च बराबर रहेगा, कुटुम्बमें अनबन, शत्रुपीड़ा, लेखन व काव्य-कलाके लिये यह काल उत्तम है।

वृषभ प्रकृति स्वास्थ्य ठीक न रहे। व्यवहार, व्यापार, गृहकृत्य इत्यादिमें झगड़े हों। अतः इस मासमें उपर्युक्त बातोंसे सावधान रह कर सब कार्य करें, सञ्चित द्रव्यमेंसे व्यय करना पड़े, कौटुम्बिक पीड़ा हो।

मिथुन बौद्धिक कार्यमें वृद्धि, धन संपादनकार्य में यशप्राप्ति, उद्योग धंधेसे लाभ, इष्ट मित्रोंसे सहानुभूति, चित्त प्रसन्न।

कर्क यह मास अनुकूल नहीं है, अभिमानके कारण विरोधी वातावरण बढ़नेकी सम्भावना है, अतः सावधान होकर सबके साथ नम्रताका व्यवहार श्रेयस्कर होगा, कुटुम्ब संतति सुख उत्तम, संग्रह योग्य वस्तु व नूतन वस्त्रादिकोंमें द्रव्यका व्यय विशेष हो।

सिंह सांपत्तिक हानि, प्राप्तिमें कष्ट, जनताकी सहानुभूतिका अभाव, इस मासमें स्वार्थी दुनियाका अनुभव प्राप्त हो, संतति कष्ट, कुटुम्बमें असंतोष, मानसिक चिन्ता, व्याकुलता।

कन्या किसी भी कार्यमें मनकी प्रवृत्ति न हो। निराशा, विश्वासीजनोंसे हानि, असंतोष, संततिकष्ट, इष्टमित्रोंसे उपसर्ग, प्रवास, चातुर्यसे वर्ताव करना ठीक है।

तुला सांपत्तिक लाभ साधारण, अधिकारियों की प्रसन्नता, इष्टमित्रोंकी सहानुभूति, नया धंदा या नौकरीमें अपयश, लेखक साहित्यसेवकों की टीका टिप्पणी, व्यय थोड़ा, लाभ अधिक, संतति पीड़ा, कुटुम्ब सुख।

वृश्चिक कार्यकी सफलतामें वाधा, इष्टमित्रोंसे मतभेद, मनोवृत्तिसे दुष्परिणाम, गृह-भेद, भृत्यवर्ग तथा सहकारियोंसे हानि, संतति सुख, आरोग्य वृद्धि।

धनुः मनस्थिति ठीक न रहे, शरीर स्वास्थ्य ठीक रहे, गृहसौख्य लाभ, भूमि वाहन नौकर इष्टमित्रादि द्वारा सौख्य, लाभ, मंगल कार्य, नौकरीमें सुख, व्यय अल्प, कुटुम्ब तथा संतति सुख उत्तम।

मकर उत्साहवृद्धि, व्यापार उद्योगधंदोंसे लाभ, कौटुम्बिक जनोंसे यश व सम्मानप्राप्ति, सर्वसाधारण जनताकी श्रद्धा तथा विश्वास बढ़े,

संपत्ति हानि, प्रवास योग, कार्य-व्यवसायमें गड़बड़, संतति सुख।

कुम्भ प्रकृतिस्वास्थ्य उत्तम, भाई बन्धुओंसे झगड़ा, मानसिक अशान्ति, गृहसौख्य उत्तम, संततिसुख आनन्ददायक, नौकरीसे कष्ट।

मीन लाभ व यश प्राप्ति, शारीरिक तथा कुटुम्ब सौख्य उत्तम, संतति सुख, इष्टमित्रों से लाभ, घरमें मंगलकार्य हो।

भाद्रपद मासका भविष्य

इस मासमें वायु दूषित रहे। प्रजामें भय चिन्ता अशान्तिकी वृद्धि, पशुओंमें महामारी आदि वृद्धि, देशमें साम्पत्तिक स्थिति ठीक न रहे। इस मासमें परराष्ट्रोंसे बहुतसे झगड़े आदि होकर उभय पक्षको लाभ होगा। भारतको परराष्ट्रोंसे पूर्ण सहानुभूति प्राप्त होगी। अधिकारारूढ़ तथा राजवर्ग को यह समय झगड़े तथा विचारविनिमयका है। संस्थानोंमें प्रजाकी ओरसे झगड़ा हो। राजनीतिज्ञ धुरन्धर लोगोंकी मृत्यु होना भी संभव है। डाकखाने तार तथा रेलवे विभागोंमें कई प्रकारकी सुधारणाएं हों। कृषकवर्गको यह समय अत्यन्त चिन्ताजनक है। लोकोपयोगी संस्थाओंको श्रीमानोंसे सहायता मिलने का अच्छा अवसर है। किसी महान्‌राष्ट्रको महाभीषण आपत्तिमें फंसना होगा। मत-भेद और जाति-भेदका भूत जनता पर पूर्ण रूपसे सवार होगा।

भाद्रपद मासका राशि-फल

मेष साम्पत्तिक कष्ट, कौटुम्बिक पीड़ासे मनमें असन्तोष, संतति स्वास्थ्य उत्तम, बौद्धिक-व्यवसायमें प्रतिकूलता, इष्टमित्रोंकी भेंट, परिश्रम अधिक, विश्वासपात्रोंसे हानि, आर्थिक हानि।

वृषभ विकार उत्पन्न हो, मनइच्छित कार्यमें विलम्ब, नौकरोंसे पीड़ा, भ्रातृकष्ट व कुटुम्ब पीड़ा, व्यापारमें हानि, संततिको यश, अधिकारीवर्गके रोषसे अशान्ति।

मिथुन परिवारसे आनन्द, संततिको आनन्द, अधिकारीवर्गसे तथा राजपक्षसे सन्मान व सहानुभूति प्राप्त हो। भूमिसे धन लाभ, साहित्य सेवा, संतति सुख।

कर्क मन विचारग्रस्त, स्वास्थ्य साधारण, कार्यों में बाधा, व्यापारसे हानि, लाभ कम, खर्च अधिक, भूमिके विषयमें झगड़ा हो परन्तु अन्तमें विजय होगी।

सिंह प्रवास करनेकी इच्छा उत्पन्न हो, स्वास्थ्य-उत्तम, नौकरोंसे सुख, खेती तथा ब्याज-बट्टेके व्यवसायसे हानि, शत्रुपीड़ा, उत्साह व धैर्यवृद्धि, नौकरीमें श्रम अत्यधिक करना पड़े। अधिकारीवर्ग की अप्रसन्नता, कुटुम्ब सुख, सन्तति पीड़ा।

कन्या गृहसौख्यमें आनन्द, मनस्वास्थ्य उत्तम, नौकरीसे लाभ, अधिकारीवर्गकी प्रसन्नता, शत्रुनाश, कुटुम्बमें संतोष।

तुला भाग्योदय, स्वकार्यमें यश, परोपकार, नौकरोंसे लाभ, भ्रातृसुख, स्वकार्यसे जनतामें संतोष-सम्मान, व्यापारसे लाभ, मित्रोंसे सहायता, संतति सुख।

वृश्चिक वात-विकारसे कष्ट, घरमें मतभेद, नौकरोंसे हानि, भूमिसे कुछ लाभकी सम्भावना है, अपयश, कुटुम्ब त्रास, वादविवाद, व्यापारसे हानि।

धनुः कार्यमें यशप्राप्ति, शरीर आरोग्य उत्तम, उत्साहवृद्धि, भ्रातृसुख, व्यापार उत्तम, शत्रुनाश।

मकर मतभेद, गृहसौख्य समाधानकारक, अधिकारीवर्गकी प्रसन्नता, नौकरीसे पीड़ा, साहित्य सेवा, संतति सुख, मनोरञ्जक वार्ताओंसे उदासीनता।

कुम्भ कार्य व्यवसाय प्रतिकूल परिस्थितिमें। खेतीसे कुछ लाभकी आशा, नौकरोंसे झगड़ा। लेख व्यवसायमें बाधा। गृहस्थसौख्य उत्तम। संतति कष्ट, शत्रुपीड़ा, भ्रातृ दुःख।

मीन शरीरसुख उत्तम, इच्छितकार्य सिद्धि, उत्साह व धैर्यवृद्धि, गृहसौख्य उत्तम, संतति व कुटुम्बसौख्य उत्तम, जनतासे सम्मान, लाभ कम, खर्च अधिक।

आश्विन मासका भविष्य

यह सम्पूर्ण मास कलहवर्धक है। वायु अधिक चले, मृत्युसंख्या अधिक हो, नेत्रपीड़ा, वातव्याधि, स्त्रीरोगोंकी वृद्धि, अकाल और महर्घतासे जनताके चित्तमें चिन्ता वृद्धि, आंधी तूफान, बादल, महापूर (जलकी बाढ़) अतिवृष्टि आदिसे महाहानि, सरकारी कर व बजटमें सुधारणा हो। सैन्य, लड़ाईका सामान आदिकी परिस्थिति समाधानकारक रहे। पार्लियामेण्ट में इस समय महत्त्वपूर्ण चर्चा हो। मजदूर व नौकरी पेशा लोगोंमें लड़ाई झगड़े हों। राजा-प्रजामें सहानुभूति बढ़े। भारतकी भावी आशाएं पूर्ण होनेके लिये यह समय अनुकूल है। शास्त्रीय विषय, वाङ्मय तथा बौद्धिक उन्नति हो।

आश्विन मासका राशि-फल

मेष नौकरीपेशा लोगोंको कष्ट, शत्रुओंसे उपसर्ग, संततिपीड़ा व अपयश, भ्रातृसुख सन्मानवर्धक, व्यापारसे लाभ, अधिकारीवर्गसे प्रसन्नता, जनतासे सहानुभूति।

वृषभ आनन्दकी वार्ता सुनाई दें, उत्साह व मानसिक बलकी न्यूनता, जनताकी सहानुभूति, साम्पत्तिक अड़चन, बौद्धिक व्यवसायसे हानि, इष्टमित्रों द्वारा हानि, मानसिक व्यथा, संतति कष्ट, स्त्री लाभ।

मिथुन वाहनसौख्य, गृहिणीकी प्रकृति असमाधानकारक, साधारण रोगग्रस्त, मानसिक व्यथा, न्यायसे विजय, नौकरोंसे हानि, खेतीमें हानि, अधिकारीवर्गकी अप्रसन्नता, ज्ञानवृद्धि।

कर्क स्वास्थ्य साधारण, व्यापारसे हानि, नौकरी तथा गृहकृत्यमें समाधान, सार्वजनिक कार्यमें अपयश, बौद्धिक उन्नति, कुटुम्ब सुख तथा संतति सुख, सट्टे या लौटरीसे हानि।

सिंह मन चलायमान हो, व्यापारमें अनुकूल परिस्थिति, द्रव्यलाभ साधारण, लेनदेन में उन्नति, यहां धोखा होनेकी सम्भावना है अतः सावधान रहना चाहिये, संतति कष्ट, समाजसे सम्मानप्राप्ति।

कन्या उद्योगसे लाभ, इष्टमित्रोंसे हानि, खेती से हानि, नौकरोंसे लड़ाई-झगड़ा उत्पन्न हो, कुटुम्बसुख, संतति हानि।

तुला उद्योग-धंदा साधारण, कार्यमें दक्षता रखना आवश्यक है, खेतीमें साधारण लाभ, नौकरोंसे सुख, अपयशका टीका माथे लगेगा, अतः इस समय कोई नया कार्य करनेका साहस न करें।

वृश्चिक शांतता भंग, मन चञ्चल, इष्टमित्रोंकी सलाहसे लाभ, कुटुम्ब सुख, सन्तति लाभ, आय कम, खर्च अधिक, भ्रातृसुख।

धनुः गृहसौख्य, लाभ, शत्रुवर्गसे उपसर्ग, भ्रातृकलह, नौकरोंसे लाभ, सार्वजनिक कार्य में यश, कुटुम्ब सुख, संतति सुख।

मकर सम्मानवृद्धि, गृहमें आनन्द, इष्टमित्रोंसे विचारविनिमय, स्थावर संपत्ति प्राप्ति, नौकरोंसे समाधान, भृत्यवर्गसे सौख्य लाभ, संतति कष्ट।

कुम्भ बालबच्चों तथा गृहिणीको यह समय आरोग्यवर्धक है, सौख्यलाभ, साहसिककार्य उद्योग-धंदेसे लाभ होकर स्थायी उन्नति हो, लॉटरीमें कदाचित् लाभ होना सम्भव है, अतः प्रयत्न करना उचित है।

मीन इष्टमित्रोंसे लाभ, चित्त प्रसन्न रहे, महत्वाकांक्षा, धार्मिक प्रवृत्ति उज्वल, शरीर आरोग्य, कुटुम्ब सुख, संततिसुख, सार्वजनिक कार्यमें भाग लेना पड़े।



त्रैमासिक मुहूर्तादि विचार

[लेखक — श्री पं० जगन्नाथप्रसादजी ज्यौतिषी (जगनजी)]

[गताङ्क में जो मुहूर्त्तादि छपे हैं उनमें कहीं २ कुछ अशुद्धि छप गई है। सारे 'वसन्ताङ्क' के प्रूफ संशोधन सम्पादनका भार अकेलेपर आपड़नेके कारण दश दिनकी स्वल्प अवधिमें शीघ्रता वश श्री ज्योतिषीजीकी कापीके साथ मुहूर्त्तादिके प्रूफ हम दूसरी बार अक्षरशः भली भांति नहीं मिला सके, इसी कारण छपने में ऐसा हुआ है। यद्यपि विज्ञ पाठक यह भली-भांति जानते हैं कि प्रेसमें इससे भी कई भयङ्कर भूलें हो सकती हैं, तथापि हम अपनी यत्किञ्चित् त्रुटिको न छिपाते हुए श्री० पूज्य ज्यौतिषीजी तथा विज्ञ पाठकोंसे क्षमा प्रार्थी हैं। —सम्पादक]

विवाह मुहूर्त

श्रावण कृष्ण पक्षमें

ति० ४ शुक्रवार ३१ जुलाई उ०भा०न०रेखा ६ ल०१-३
५ शनिवार १ अगस्त उ० भा० न० रे० ८ ल० ६ सम।
१० गुरुवार ६ अगस्त रो०न० रे० ६ ल० १ अंश ८ उप०, ल० ३ आवश्यके।
११ शुक्रवार ७ अगस्त मृ० न० रे० ७ ल० ६ १२-१

श्रावण शुक्ल पक्षमें

ति० २ शुक्रवार १४ अगस्त उ० फा० न० रे० ६ ल० १-३
८ बुधवार १९ अगस्त अनु० न० रे० ८ ल० ४
६ गुरुवार २० अगस्त अनु० न० रे० ८ ल० ६ अं० १६ या०।
१२ रविवार २३ अगस्त उ० षा० न० रे० ७ ल० १-१२ ल० ४ सम।

भाद्रपद कृष्ण पक्षमें

ति० ७ बुधवार २ सितम्बर रो० न० रे० ८ ल० १-३ आवश्यके।
८ गुरुवार ३ सितम्बर रो० न० रे० ८ ल० ६ आवश्यके, उप० मृ० न० रे० ६ ल० १-३।
६ शुक्रवार ४ सितम्बर मृ० न० रे० ६ ल० ६-७

भाद्रपद शुक्ल पक्षमें

ति० २ शनिवार १२ सितम्बर ह०न०रे० ६ ल० ३-७
६ शनिवार १९ सितम्बर उ० षा० न० रे० ८ ल० ४ सम
११ रविवार २० सितम्बर उ० षा० न० रे० ६ ल० ७ ल० ६ सम।

आश्विन शुक्ल पक्षमें

ति० ४ मंगलवार १३ अक्टूबर अनु० न० रे० १० ल० १० सम।

नोट—ऊपर लिखित विवाह मुहूर्त देशाचारानुसार केवल पञ्चाम्बु (पञ्जाब) देशके लिए ही हैं।

गृहारम्भ मुहूर्त

आषाढ़ शुक्ला १० गुरुवार २३ जुलाई ल० ६ आवश्यके
,, ,, १५ सोमवार २७ जुलाई लग्नं चिन्त्यम्
श्रावण कृष्ण २ बुधवार २९ जुलाई ल० ६ [आवश्यके
,, शुक्ला १५ बुधवार २६ अगस्त ल० ६ चन्द्र-दानात् ७ घ० या० लग्न १९ अंशयावत्।
भाद्रपद कृष्णा २ शुक्रवार २८ अगस्त ल० ६
आश्विन शुक्ला १० चन्द्रवार १९ अक्टूबर ल० ८

सामान्य यात्रा मुहूर्त

आषाढ़ शुक्ल पक्षमें

१० गुरुवार २३ जुलाई उत्तर पश्चिम घ० ५ उपरान्त
१५ सोमवार २७ जुलाई दक्षिण घ० २१ उप०

श्रावण कृष्ण पक्षमें

१ मंगलवार २८ जुलाई दक्षिण मध्यम
२ बुधवार २९ जुलाई पश्चिम घ० १०उप०, दक्षिण पूर्व घ० १० या०
७ सोमवार ३ अगस्त उत्तर मध्यम
१० गुरुवार ६ अगस्त पूर्व १० घड़ी यावत्
११ शुक्रवार ७ अगस्त पूर्व दक्षिण ३० घ० यावत्

श्रावण शुक्ल पक्षमें

२ शुक्रवार १४ अगस्त पूर्व उत्तर म०
४ रविवार १६ अगस्त पूर्व दक्षिण घ० ४ उप०
१० शुक्रवार २१ अगस्त पूर्व घ० १७ उप म०।
१३ सोमवार २४ अगस्त दक्षिण घ० १७ यावत्।

भाद्रपद कृष्ण पक्षमें

१ गुरुवार २७ अगस्त पश्चिम म०।
२ शुक्रवार २८ अगस्त उत्तर घ० ३१ यावत्।
५ रविवार ३० अगस्त पूर्व उत्तर।
११ रविवार ६ सिम्बर दक्षिण घ० १८ यावत् म०।
१२ सोमवार ७ सितम्बर उत्तर।

भाद्रपद शुक्ल पक्षमें

२ शनिवार १२ सितम्बर दक्षिण।
११ रविवार २० सितम्बर पूर्व दक्षिण सम।
१२ सोमवार २१ सितम्बर दक्षिण सम।
१३ मंगलवार २२ सितम्बर पश्चिम।
१५ गुरुवार २४ सितम्बर उत्तर सम।

आश्विन कृष्ण पक्षमें

१ शुक्रवार २५ सितम्बर उत्तर।
२ शनिवार २६ सितम्बर पश्चिम उत्तर घ०१५ यावत
७ गुरुवार १ अक्टूबर पश्चिम घ० १८ उप०।
१० रविवार ४ अक्टूबर उत्तर घ० ३० यावत्।

आश्विन शुक्ल पक्षमें

७ शुक्रवार १६ अक्टूबर पूर्व उत्तर घ० ३३ यावत्
९ रविवार १८ अक्टूबर पूर्व दक्षिण घ०२२ उप०

अन्य आवश्यक मुहूर्त

आषाढ़ शुक्ला १० गुरुवार २३ जुलाई प्रसूतास्नान, जलपूजा अन्नप्राशन घ० ५ उप०।

श्रावण कृष्णा १ मंगलवार २८ जुलाई पुंसवन सीमन्तोन्नयन।

श्रावण कृष्णा २ बुधवार २९ जुलाई अन्नप्राशन।

श्रावण कृष्णा ७ सोमवार ३ अगस्त अन्नप्राशन।

श्रावण कृष्णा १० गुरुवार ६ अगस्त प्रसूतास्नान पुंसवन सीमन्तोन्नयन अन्नप्राशन घ० १० यावत्।

श्रावण कृष्णा ११ शुक्रवार १० अगस्त जलपूजा प्रसूतास्नान।

श्रावण शुक्ला ४ रविवार १६ अगस्त प्रसूतास्नान घ० ४ उपरान्त पुंसवन सीमन्तोन्नयन।

श्रावण शुक्ला ७ मंगलवार १८ अगस्त प्रसूतास्नान

श्रावण शुक्ला १० शुक्रवार २१ अगस्त जलपूजा।

श्रावण शुक्ला १३ सोमवार २४ अगस्त जलपूजा पुंसवन सीमन्तोन्नयन अन्नप्राशन घ० १७ यावत्।

भाद्रपद कृष्णा २ शुक्रवार २७ अगस्त प्रसूतास्नान सम पुंसवन, सीमन्तोन्नयन अन्नप्राशन।

भाद्रपद कृष्णा ५ रविवार ३० अगस्त प्रसूतास्नान

भाद्रपद कृष्णा १२ सोमवार ७ सितम्बर जलपूजा

भाद्रपद शुक्ला ११ रविवार २० सितम्बर प्रसूता स्नान पुंसवन सीमन्तोन्नयन।

भाद्रपद शुक्ल १२ सोमवार २१ सितम्बर जलपूजा घ० २१ प० ३७ यावत्।

भाद्रपद शुक्ल १३ मंगलवार २२ सितम्बर प्रसूता स्नान सम।

आश्विन कृष्णा १ शुक्रवार २५ सितम्बर प्रसूतास्नान सम।

आश्विन कृष्णा १० सोमवार ५ अक्टूबर प्रसूतास्नान सम।

आश्विन शुक्ला १ रविवार ११ अक्टूबर घ० ८। २२ उप० प्रसूतास्नान।

आश्विन शु० ६ गुरुवार २५ अक्टूबर जलपूजा।

त्रैमासिक ग्रहयोग प्रतियोग चमत्कार

[लेखक—श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक "श्रीस्वाध्याय"]

मङ्गल नेपच्यून युतिका परिणाम

इन तीन महीनोंमें महत्त्वपूर्ण युति योग भाद्रपद शु० ६ बुधवार ता० १६ सितम्बर १९४२ ई० को मध्यान्होत्तर स्टे० टा० ४-२८ पर है। इस समय मङ्गल नेपच्यूनकी युति हो रही है। युतिके समय पूर्वक्षितिज पर कुम्भराशि (सायन) का उदय है उसका अधिपति शनि इसी दिन षष्ठेश चन्द्रमासे प्रतियोग कर रहा है। पाश्चात्त्य मतानुसार भारतकी राशिका स्वामी भी यही है अतः यातायातमें बड़ी विषम समस्या उत्पन्न होगी। शत्रु द्वारा समुद्री मार्गोंमें भी भीषण व्यवधान डाला जावेगा और चन्द्र-शनिके कारण महा भयङ्कर जल (समुद्री) युद्ध और वायु एवं व्योमयुद्ध होगा। स्त्रीसमाजमें क्रान्ति होगी। शनि द्वादशेश भी है इस कारण भारतको असह्य हानि उठानी पड़ेगी। भारतकी राशिसे नवम स्थानमें यह युति होरही है, साथ ही वहां राहु और सप्तमेश सूर्य तथा नवमेश चतुर्थेश शुक्र भी है, इस कारण यह दिखाई देता है कि यहां शीघ्र ही किसी नवीन प्रकार की शासन-व्यवस्थाका सूत्रपात होगा। तात्कालिक लग्नसे अष्टम राशिमें यह युति होनेके कारण अत्यन्त हानि उठानेके अनन्तर भारतको किसी विशिष्ट लाभ की सम्भावना है।

इस युतिके प्रभावसे संसारकी शासन व्यवस्थामें बड़े २ उलटफेर हो जावेंगे। शान्ति स्थापनार्थ कई प्रकारकी सन्धिचर्चाएं भी चलेंगी किन्तु स्थायी परिणाम कुछ नहीं होगा, परिस्थिति सुलझनेकी अपेक्षा अधिकाधिक उलझती दिखाई देगी। भयङ्कर आर्थिक हानि होगी। यूरोपीय राजनीति पर घोर आपत्ति आवेगी। युद्ध, अग्निप्रलय, असन्तोष, सन्ताप, क्षोभ, भयानक घरेलू झगड़े, साम्प्रदायिक संघर्ष और सेना-सम्बन्धी उलटफेर अधिक होंगे। कुम्भ लग्न और शनि मङ्गल नेपच्यून तथा चन्द्रमाके दूषित प्रभावसे संसारमें भूकम्प, ज्वालामुखीस्फोट, जलप्लावनादि उत्पात होनेकी सम्भावना अधिक है।

प्रशिया, रूस, स्वीडन, अफ्रिका, तुर्कस्थान, अरब, स्विटजरलेण्ड, अबीसीनिया, मेसोपेटोमिया आदि बाहरी देशोंमें तथा भारतमें शोण, नर्मदा, भीमरथीका पश्चिम प्रदेश, वेत्रवती (वेतवा) गोदावरीके बीचके प्रदेश, सह्यपर्वत तथा विन्ध्यपर्वत और कावेरी नदीके आसपासके प्रदेश, विदेह (मिथिला) आन्ध्र (तैलङ्ग) अश्मक कुन्तल (महाराष्ट्रका कुछ प्रदेश) केरल (ट्रावन्कोर कोचीन आदि) इन सब प्रदेशों तथा नागरिक लोग, किसान, व्याध, व्यापारी, अग्निजीवि (सुनार लुहारादि) शस्त्रधारी, दम्भी, पाखण्डी, झूठ बोलनेवाले, मादकद्रव्य सेवन करनेवाले और धूम्रपान करनेवालों पर इस युतिका विशेष अनिष्ट प्रभाव पड़ेगा।

गुरुशुक्र युतिका फल

यह युति श्रावण कृ० ६ रविवारको होगी। गङ्गा-यमुना मध्यदेश, आसाम, उड़ीसा, कृष्णातीर, कटक, बङ्गाल, मथुराप्रान्त, राजपूताना, मद्रास, मध्यदेश, सिन्ध, पंजाब, सीमाप्रान्तमें अशान्ति। प्रजामें भय, धान्यनाश।

मङ्गल राहु युतिका फल

श्रावण कृ० १२ शनिवारको यह योग होगा। सेनापति, योद्धा, डाक्टर, सर्जन, युद्धपोत (जहाजीबेड़ा) के अधिकारियों पर बुरा प्रभाव पड़े। युद्ध-मारकाट अग्निप्रलयादि द्वारा प्रजामें असन्तोष।

बुध राहु युतिका फल

श्रावण शु० ३ शनिवारको यह योग होगा। ग्रन्थकार, लेखक, पत्रसम्पादक, प्रकाशक, परराष्ट्रिय-

वकील, बौद्धिक परिश्रम करनेवाले लोक और व्यापार पर इस युतिका अनिष्ट प्रभाव पड़ेग।

मङ्गल बुध, बुध नेपच्यून युतिका फल

श्रावण शु० ८ और भाद्रपद कृष्ण ५ को क्रमशः यह युति होंगी। शूरसेन और कलिंग देश (मथुराप्रान्त जगन्नाथपुरी उड़ीसा आदि) में अशान्ति बढ़े। संसारमें अत्याचार, विषप्रयोग, गुप्तषड्यन्त्रादि अधिक हों।

सूर्यनेपच्यून युतिका फल

भाद्रपद शु० १५ गुरुवारको यह योग हो रहा है। देशमें अशान्ति, प्रसिद्ध व्यक्ति पर सङ्कट, यूरोपियन टर्की, और पूना नागपुरादि स्थानों पर इस युतिका अनिष्ट परिणाम होगा।

शु० ने०, सू० मं०, बु० मं० और बु० शु० युतिका फल

आश्विन कृ० १०, आश्विन शु० ११, आश्विन शु० २, और आश्विन श० ६ को क्रमशः ये युति होंगीं। सैन्य युद्धपोतादिकी प्रगति, कूटनीतिका भण्डाफोड़, व्यापार व्यवसाय में खलबली, पशुहानि, तपस्वी, राजवर्ग, उत्तरदेशीय जनता और पर्वतीयलोगोंको सन्ताप हो।

——

शुक्रास्त कब होगा ?

शुक्रास्तोदयका गणित श्रीकेतकरजीकी उन्नतांश पद्धतिका जितना ठीक बैठता है उतना अन्य किसी गणितका नहीं। इसीकारण जयपुर वेधशालाके राजकीय पञ्चाङ्ग, उज्जयिनीके 'श्रीमहाकाल पञ्चाङ्ग' तथा काशी आदिके कई सुप्रसिद्ध पञ्चाङ्गोंमें विद्वान् पञ्चाङ्गकार दृक्में संस्कार देकर इसी उन्नतांश पद्धतिके अनुसार शुक्रास्तोदय लिखते हैं। शुक्र नेत्रोंसे भी दिखाई देता है और अस्तोदयके समय कई वार वेधशालाओंमें सूक्ष्मयन्त्रों द्वारा भी परीक्षा की जा चुकी है। इस सम्बन्धमें समाचारपत्रोंमें हमारे कई विस्तृत लेख प्रकाशित हो चुके हैं और कलकत्ते के एक प्रसिद्ध विद्वान्के साथ बहुत दिनों तक हमारा लेखबद्ध शास्त्रार्थ भी हो चुका है। मारवाड़ी ब्राह्मणपत्रमें वह शास्त्रार्थ छपा है, अस्तु।

इस वर्ष पूर्वमें शुक्रास्त हो रहा है। कुछ प्राचीन गणितके पञ्चाङ्गोंमें आश्विन कृ० ३० और कुछमें नवरात्रमें शुक्रास्त लिखा हुआ है। इस कारण पंजाबके कई मित्रोंने "श्रीस्वाध्याय" द्वारा हमारी सम्मति चाही है। अतः उन सज्जनोंसे हम निवेदन कर देना चाहते हैं कि इस वर्ष पंजाब, राजपूताना, सिन्ध, काश्मीरादि प्रान्तोंमें आश्विन शु० १५ शनिवार ता० २४ अक्टूबर १६४२ ई० को शुक्र पूर्वमें अस्त होगा इससे पहले नहीं। आश्विन शुक्लपक्ष और नवरात्रमें होने वाले सभी माङ्गलिक कार्य निस्सन्देह हो सकते हैं।

आश्विन मासमें प्रायः आकाश निर्मल ही रहता है अतः विज्ञ पाठक आश्विन शु० पक्षमें प्रातः सूर्योदयसे पहिले पूर्व क्षितिजके ऊपर शुक्रको स्वयं देखकर अपना सन्तोष कर सकते हैं! प्रमाणके लिए जयपुर वेधशालाके राजकीय पञ्चाङ्गमें कार्तिक कृष्ण १ रविवार ता० २५ अक्टूबरको "पूर्वास्तो भृगुः २७।००" लिखा है। काशीके सुप्रसिद्ध सूर्यसिद्धान्तीय "विश्वपञ्चाङ्ग" में आश्विन शु० १३ गुरुवारको "शुक्रोस्तः पूर्वस्याम् ३८।००" लिखा हुआ है। पंजाबके लिए कुरालीके सुप्रसिद्ध "श्रीमार्तण्ड पञ्चाङ्ग" में जो आश्विन शु० १५ को "शुक्रास्त प्राच्यां ४८।०" लिखा हुआ है वह सर्वथा शुद्ध है। यदि आवश्यकता समझी गई तो आगामी अङ्कमें इसका विस्तृत विवेचन और गणित भी प्रकाशित किया जा सकेगा।

—ह० श० त्रिवेदी सम्पादक

संक्षिप्त व्रतोत्सव परिचय

[लेखक—श्री पं० रामजीलाल जी वेदपाठी]

—※—

आषाढ़ शु० १५ सोमवार ता० २७ जुलाईको व्यासपूर्णिमा है। इस दिन त्रितापसे छुड़ाने वाले तथा अज्ञानान्धकारको दूर करने वाले अपने २ गुरुदेवका विधिवत् पूजन करना मनुष्यमात्रका कर्तव्य है। गुरुदेवका कितना ऊंचा स्थान है यह पाठकोंसे छिपा नहीं है। इस दिन जो अपने गुरुका पूजन नहीं करता वह महान् कृतघ्न है, अस्तु।

इसी दिन सूर्यास्तके समय वायु-परीक्षा भी की जाती है। इससे आगामी वर्ष भरके सुभिक्ष दुर्भिक्ष का ज्ञान होता है। जिस देशमें इस पूर्णमासीको ठीक सूर्यास्त समयमें पूर्वकी वायु चले उस देशमें सुभिक्ष हो। अग्निकोणकी चले तो अग्निभय, स्वल्पवृष्टि और महर्घता। दक्षिणकी चले तो प्रजापीड़ा,महर्घता, स्वल्पवृष्टि। नैर्ऋत्यकोणकी चले तो महादुर्भिक्ष। पश्चिम अथवा वायव्यकोणकी चले तो साधारण समय हो। उत्तर या ईशानकोणकी चले तो उस देश में सुभिक्ष हो।

श्रावणमासमें प्रत्येक सोमवारको भगवान् शिवका पूजन करना मनुष्यमात्रका कर्तव्य है। इस दिन व्रत रख कर दूसरे दिन भोजन करें अथवा सोमवारको रात्रिमें भी भोजन कर सकते हैं। धर्मसिन्धुमें लिखा है—

सोमवार व्रतं कार्यं श्रावणे वै यथाविधिः।
शक्तेनोपोषणंकार्यमथवा निशिभोजनम्॥

भाद्रपदकृष्णमें कुशोत्पाटिनी अमावस, शुक्लपक्ष में श्रीगणेशचतुर्थी, भाद्र० शु० ६ बुधवारको बलरामजन्मोत्सव, भा० शु० ८ शुक्रवारको श्रीराधाष्टमी, तथा वामनद्वादशी और अनन्तचतुर्दशीका व्रत पूजनोत्सव होता है। स्थानाभावके कारण इन व्रतोत्सवोंका विशेष विवरण नहीं दिया गया।

पर्जन्य (वृष्टि) विचार

[लेखक — श्री पं० गोविन्द जी मिश्र]

—※—

श्रावण भाद्रपद मासमें सिन्ध, पञ्जाब, राजस्थान, गुजरात, कच्छ, आसाम बङ्गाल, निजाम हैदराबाद, विन्ध्य, गोदावरी, मध्यदेश आदि कुछ प्रान्तोंमें अतिवृष्टिसे प्रजाको कष्ट होगा। श्रावण कृष्णा ७ को सूर्य बुधकी युतिके कारण १३ दिन आगे पीछे सर्वत्र सुवृष्टि हो जावेगी। आश्विन कृ० ११ को रवि मंगल युति और आश्विन शु० १ को रवि बुध युतिके कारण दक्षिण भारत, विन्ध्य, जान्हवी कृष्णा गौतमी मध्यदेश नागपुर बराड़ आदिमें विपुल वृष्टि होगी। श्रावण कृष्णा १, ७, १४, ३० और श्रावण शु० ३, १४ भाद्र० कृ० ११, ३०, भा० शु० १२, आश्विन कृ० ११, १२ और आश्विन शु० ६, १०को उत्तम वर्षाका योग है।

भूकम्प

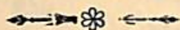
श्रावण भाद्रपद मासमें संसारके कई भागोंमें भूकम्पके छोटे बड़े धक्के आवेंगे। विशेषतः यूरोपियन तुर्किस्तान, स्विटजरलैण्ड, पुर्त्तगाल, गलेशिया, जापान और जर्मनीमें अधिक हानि होगी।

छुट्टियाँ हाईकोर्ट पंजाब और युक्तप्रान्त

व्यासपूजा ता० २७ जुलाई सोमवार।
शबेमैराज ता० ११ अगस्त मंगलवार।
नागपञ्चमी ता० १७ अगस्त सोमवार।
रक्षाबन्धन (सलोनो) ता० २६ अगस्त बुधवार।
शबेबरात ता० २७ अगस्त गुरुवार।
जन्माष्टमी ता० ३ सितम्बर गुरुवार।
वामनद्वादशी ता० २१ सितम्बर सोमवार।
अनन्त चतुर्दशी ता० २३ सितम्बर बुधवार।
जुमा-उल-विदा ता० ६ अक्टूबर शुक्रवार।
महालय अमावस ता० १० अक्टूबर शनिवार।
ईदउलफितर ता० १२ अक्टूबर सोमवार।
दशहरा ता० १५ से १८ अक्टूबर गु० शु० श० तथा रविवार।

विश्वशान्ति और ग्रहशान्ति

[लेखक—विद्यारत्न श्री पं० विद्याधर जी शास्त्री एम० ए०]



इस युगके मानव इतिहासका एक अद्वितीय संघर्ष चल रहा है। युद्ध-विशारद युद्ध-सामग्री एवं राज-नीति-विशारद राजनैतिक दाव पेचोंसे इसको शान्त करनेका प्रयत्न कर रहे हैं, परन्तु क्योंकि वे अब तक इस युद्धरोगका कोई वास्तविक निदान नहीं कर सके, इसलिए उनकी वर्तमान औषधियां निष्फल और भविष्यमें और भी अधिक दोषवृद्धिकी हेतु बन रही हैं।

आधुनिक विचारककी सबसे बड़ी निर्बलता यही है कि वह जब किसी घटनाके कारणोंकी खोजमें प्रवृत्त होता है तब आस-पासकी दो-तीन स्थूल बातोंके अतिरिक्त वह उस घटनाकी मौलिक बातोंसे परिचित नहीं होता। जिस समस्त ब्रह्माण्डमें प्रत्येक कण एक दूसरेके साथ निरवच्छिन्न रूपमें परस्पर सम्बद्ध है उसमें भी वह भूलोकको और विशेषतया भूलोकवासी मनुष्यको समस्त विश्वसे अपनी एक पृथक् ही सत्ता रखनेवाला समझता है। वह यही विचारता है कि इस भूमण्डल पर जो कुछ हो रहा है उसका विधाता यहांका यह मनुष्य ही है। इसकी स्वार्थपरता, निर्धनता और अज्ञता आदिका ही यह फल है कि यह प्रायः अपने लिए एक अशान्त वातावरणको उत्पन्न कर लेता है।

मनुष्यकी इस पुरुषार्थशक्तिका मैं भी स्वागत करता हूं; पर इसके साथ ही मैं मनुष्यकी इस पुरुषार्थशक्तिको केवल भूमण्डल मात्रमें ही सीमित रखना नहीं चाहता। प्राचीन भारतीय विचारककी यही विशेषता थी कि वह किसी एक काल अथवा किसी एक ही लोकमें अपने आपको सीमित न रखकर त्रिकाल एवं त्रिलोकीके साथ अपनेको सम्बद्ध समझता था। इस व्यापक दृष्टिका ही यह फल था कि वह अपनी शान्तिके लिए समस्त विश्वकी शान्तिके उपायोंको पूर्ण करनेमें प्रवृत्त होता था।

ग्रहशान्ति इस व्यापक शान्तिका ही एक अङ्ग है। भूलोककी अशान्तिका कारण केवल भूलोकमें ही नहीं है। समस्त प्राचीन युद्धों एवं अन्यान्य भयङ्कर घटनाओंके समयकी ग्रह-परिस्थितिके अनुसार विवेचना करनेसे प्रत्यक्ष प्रतीत हो रहा है कि उस समय ग्रहोंका पारस्परिक सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण नहीं था। ज्योतिषशास्त्रने सदा इन घटनाओंकी सूचना पहलेसे ही दी है, पर क्योंकि आजतक मनुष्यने इस ज्ञान विज्ञानका जितना विकास करना चाहिए था उतना नहीं किया, इसलिए वह उनकी परिस्थिति पर अपना कोई प्रभाव न डाल सका, और न अपने आपको ही उसके प्रभावसे बचा सका है। प्राचीन मुहूर्त्तप्रणाली, यज्ञानुष्ठान आदि इस प्रभावसे बचनेके ही साधन हैं। परन्तु अबतक उनका जितना वैज्ञानिक विकास आवश्यक है उतना नहीं हुआ। इनके अधूरे रहनेसे अथवा अज्ञोंके हाथमें इनके चले जानेसे सर्वसाधारणकी इनके ऊपर श्रद्धा नहीं रही। जनताने इस प्रश्नको सनातनधर्म और ब्राह्मणोंका प्रश्न बना लिया; पर यह एक वैज्ञानिक प्रश्न है। वैज्ञानिक रीतिसे इसका अनुसन्धान परमापेक्षित है। शस्त्रास्त्रों पर अरबोंकी आहुति देनेवाले राष्ट्र यदि इस विज्ञानकी उन्नतिके लिए कुछ भी प्रयत्न करते तो इन ग्रहोंके बुरे प्रभावोंसे अपने देशको बहुत कुछ अंशोंमें बचा सकते थे। अनेक ऐसे यज्ञ धूम्र आदि तैयार हो सकते हैं जो अन्य ग्रहोंसे आनेवाली दूषित किरणोंके निराकरणमें समर्थ हो सकते हैं। जब तक इन बाह्य शक्तियों पर मनुष्य अपना प्रभुत्व स्थापित नहीं करेगा तबतक यह अपने ही साम्राज्यवाद, डिक्टेटरशिप अथवा धनियों आदिकी निन्दा करता हुआ अपना कुछ भी कल्याण नहीं कर सकेगा। विद्वानोंका कर्तव्य है कि वे वैज्ञानिक रीतिसे इसका अनुसन्धान अवश्य करें और प्राचीन शास्त्रोंसे वैज्ञानिक ग्रहशान्तियोंके साधनोंको ढूंढ ढूंढ कर व्यक्ति, जाति और राष्ट्रके हितके लिए प्रकाशित करें।

त्रैमासिक समर्घ-महर्घ विचार

[लेखक—दैवज्ञरत्न श्री पं० आनन्दस्वरूप जी ज्योतिषालंकार]

इन आनेवाले तीन मासमें जहां युद्धका वातावरण भयानक रूप धारण करनेवाला है और जिसमें दो देशोंका अधःपतन हो जाना आवश्यक है, वहां व्यापारमें भी भयानक उथल पुथल होगी और लोगोंको अधिक कार्य करनेसे हानिकी सम्भावना है। ऐसे समयमें भी जो व्यापारी मेरे पिछले अंकमें लिखे उद्देश्यों पर संभलकर कार्य करेंगे वह अवश्य लाभ उठावेंगे। इस अङ्कमें रुई और गेहूं के लिए मैं अपने विचार आपके सामने उपस्थित करता हूं और आशा करता हूं कि आप इसका आश्रय लेकर लाभ उठावेंगे।

रुई

इन तीन मासमें रुईकी जनरल लाइन तेजीकी रहेगी और १ जुलाई से २५ सितम्बर तक घटाबढ़ी होतेहुए बाजारमें तेजीका रुख रहेगा। ता० २६से ३० तक मन्दा रहकर १ अक्टूबरसे ८ अक्टूबर तक फिर तेजी रहेगी। इसके उपरान्त रुईका बाजार ९ अक्टूबरसे मन्देकी ओर चल पड़ेगा और १६ अक्टूबर तक मन्देकी ओर ही जावेगा।

इन तीन मासमें विशेष तेजीके दिन निम्नलिखित हैं—

जुलाईमें—

१ से ५, १३, १४, १७ से २३, २७ यह तारीखें तेजी की हैं।

अगस्तमें—

५, १४, २१ से ३१ ये तारीखें तेजीकी हैं।

सितम्बरमें—

१ से ३, १०-११, १४ से १८, २० से २५ ये तारीखें तेजीकी हैं।

नोट—इन तारीखोंमें विशेषकर तेजीका असर रहेगा।

गेहूँ

जुलाईमें—

२३ जुलाई ४२ से ३१ जुलाई ४२ तक बाजारका रुख तेजी पर रहेगा। २६ और २७ यह दोनों तारीखें मन्देकी रहेंगी।

अगस्तमें—

१-८-४२ से ६-८-४२ तक तेजी रहेगी, ७-८-४२ से २१-८-४२ तक मन्दा, २४ से २७ तक तेजी, २८ से १-९-४२ तक मन्दा। इस मासमें ५, ६, १०, ११, १३, १६, २४ यह तारीखें विशेष तेजीकी हैं और ७, ८, १२, २६ विशेष मन्देकी हैं।

सितम्बरमें—

२-९-४२ से ८-९-४२ तक मन्दा, ९-९-४२ से १७-९-४२ तक तेजी, १८-९-४२ से २४-९-४२ तक मंदा, २५-९-४२ से ३०-९-४२ तक तेजी रहेगी।

इस मासमें २, ५, ७, ११, १२, १६, २१, २४, २५, ३० यह तारीखें विशेष तेजीकी हैं और ९, १०, १४, १५, १९, २६, २८, २९ यह विशेष मन्देकी रहेंगी।

अक्टूबरमें—

१ से १५ तक तेजी, १६ से १९ तक मन्दा रहेगा।

इस मासमें २, ५, ६ और १० से १५ यह तारीखें विशेष तेजीकी हैं और १, ३, ८, ९, १६, १९ यह विशेष मन्देकी हैं।

नोट—इन तीन मासमें रुई, जौ, मूंग, माष आदि वस्तु तेज रहेंगी।

यदि किसी पाठकको किसी समय कुछ इस लेखके विषयमें पूछना हो तो "मलेरी गली लुधियाना" इस पते पर लेखकके नाम जवाबी कार्ड लिखकर पूछ सकते हैं।

व्यापारिक तेजी-मन्दी और ज्योतिष

[लेखक—श्री प्रोफेसर बी० सी० महता म्युनिस्पल कमिश्नर]



गत अङ्कमें मैंने पाश्चात्त्य ज्योतिषके आधार पर भविष्य कथनकी पद्धति पर प्रोफेसर सेफेरियलके अनुभवकी तेजी-मन्दीके एक संग्रहके विषयमें प्रकाश डालनेका बचन पाठकोंको दिया था; तदनुसार इस लेखमें उस सम्बन्धकी बातें क्रमशः प्रकाशित हुआ करेंगी। आशा है पाठक महोदय इस "श्रीस्वाध्याय" के आगामी तीन अङ्क बराबर पढ़नेका कष्ट करेंगे। मेरा ख्याल है कि यह लेख तीन अङ्कोंमें पूरा हो जावेगा।

ज्योतिषके आधार पर भारतीय ग्रन्थों द्वारा तेजी-मन्दी विशेषकर ग्रहचार पर निकाली जाती है। किन्तु अंग्रेजी पद्धतिमें तेजी-मन्दी निकालनेका आधार निम्न बातों पर है।

१—ग्रहोंका एस्पेक्टस् (दृष्टि सम्बन्ध) २—ग्रहोंकी पोजीशन ३—ग्रहोंका राशिचार ४—प्रत्येक वस्तुकी अलग २ जन्मपत्री मानी गई है। इनके आधार पर जन्म-पत्रीके घरोंमें ग्रहोंकी स्थिति।

उपर्युक्त चार बातोंके जाननेसे ही व्यापारिक वस्तुकी किसी भी चीजकी तेजी मन्दी बड़ी सरलता से निकल जाती है।

१—ग्रहोंका Aspects दृष्टि सम्बन्ध

ग्रहोंके आपसमें किसी खास अंशोंमें आजानेको दृष्टि कहते हैं। यह दृष्टि दो तरहकी है—(१) मैलेफिक दृष्टि (अशुभ) (२) बैनेफिक दृष्टि (शुभ)। इन दोनों एस्पेक्ट्समें विशेष उल्लेखनीय शुभ १२०, ६०, ३०; तथा अशुभ ९०, १८०, ४५ है। इनके अतिरिक्त युति Con. तथा क्रान्ति साम्य Paral. जो ग्रहोंके तारतम्यसे शुभ या अशुभ फलदायिनी होती है। इन एस्पेक्ट्सका पूरा प्रभाव देश प्रदेशों तथा व्यापारिक नगरोंमें पूर्णतया देखनेमें आता है; जिससे व्यापारिक क्षेत्रोंमें नाना प्रकारकी अफवाहें तथा हलचलें होती हैं, जिससे व्यापारिक वस्तुओंकी तेजी मन्दी पर खूब प्रभाव पड़ता है। आजकल वातावरण एवं अफवाहोंसे जितनी घट बढ़ होती है वह आप लोगोंसे छिपी नहीं है। इस लिए ग्रहोंके दृष्टि-सम्बन्धोंका ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है। तेजी-मन्दी निकालते समय उपर्युक्त ६ दृष्टियां भली-प्रकार नोट कर लेनी चाहिए।

२—ग्रहोंकी पोजिशनसे तात्पर्य यह है कि ग्रहोंका Equator पर Tropic आना। पृथ्वीसे विशेष दूर तथा विशेष समीप आना, उत्तर शर या दक्षिण शरमें रहना, आदि २; इन चीजोंका भी तेजी-मन्दी पर बड़ा अच्छा प्रभाव देखनेमें आता है। जिन २ तारीखोंमें ये पोजिशन बदलें वह लिख लेना चाहिए।

३—ग्रहोंका राशिचार—यह तो बिलकुल सीधा ही है, ग्रह जिन जिन तारीखोंको बदले, वक्र हो, मार्गी हो तथा एक नक्षत्रसे दूसरे नक्षत्रमें प्रवेश हो, उन सब तारीखोंको नोट करलेना चाहिए। इसके अनन्तर प्रत्येक वस्तुकी अलग २ जन्मपत्रीसे तात्पर्य यह है कि हरएककी अलग अलग लग्नकी कुण्डली मानी गई है। रुईके लिए मिथुनके २७ अंशसे लग्न प्रारम्भ होता है। अब किस प्रकार तेजी-मन्दी निकाली जाती है इसका विवरण आगामी अङ्कमें दिया जावेगा।

अब यहां हम आप लोगोंकी सेवामें रुईकी तेजी-मन्दीका आगामी तीन मासका भविष्य प्रकाशित करते हैं।

रुईका भविष्य जुलाई, अगस्त और सितम्बरमें—

जुलाई

इस महीनेमें शनि हर्शल शुक्र और बुध चारों ग्रह मिथुन राशिमें एकत्र हुए हैं, रुईके लिए यह

राशि अत्यन्त महत्त्वकी है क्योंकि रुईकी जन्मपत्री, में इसी राशिका लग्न है। अतः जन्मलग्नमें चार-ग्रहोंका सम्मिलित होना अनायास तेजीका द्योतक है। इस महीनेके प्रथम सप्ताहमें ही तेजीका चमकारा आवेगा। ता० २ को शुक्र स्केस्टायल प्लूटो तथा शुक्र शनिकी युति है यह योग विशेष तेजीका है; इसका प्रभाव ता० ७ तक रहेगाा। पुनः इसके फिर वापिस मन्दी आवेगी। ता० १४ से बुध मिथुन राशिको छोड़ देगा अतः यहांसे मन्दी आवेगी, सो ता० १४ के बाद मन्दीकी तरफ व्यापार करना लाभदायक सिद्ध होगा। ता० २१ को शुक्र नेप० से square केन्द्रयोग होगा। यहां फिर थोड़ा बाजार ऊंचा जावेगा; सो ता० २५ के बाद सूर्य सेक्सटाइल हर्शल तथा राहु-सेक्सटाइल बुध तथा शुक्रसे पुनः मन्दी आजावेगी।

अगस्त सितम्बर

इन महीनोंमें मिथुन राशि पर केवल हर्शल और शनि रहेगा तथा और ग्रह इस घरको छोड़कर फाईनेन्स घरमें अर्थात् कर्क राशिमें चले जावेंगे। ये इङ्गलैंडकी तथा अमेरिकाकी रुईके पाकको एवं मौसमको फेवर करेंगे। जिसका प्रभाव रुई पर मन्दीका होगा। इस महीनेका प्रथम सप्ताह अर्थात् दूसरी तारीखसे शुक्र बृहस्पति युति प्रारम्भ होती है। यह युति खासकर चांदी और रुई दोनों पर एकाएक तेजीका प्रभाव लावेगी। इन दोनोंका प्रभाव ता० ७ तक रहेगा और ता० ७ के बाद बाजार एकदम गिर जावेगा तथा रुईमें अच्छी मन्दी आनेकी सम्भावना है। आश्चर्य नहीं कोई राजनैतिक परिस्थितिका प्रभाव इस पर पड़े, कुछ भी हो यहां रुईमें अच्छी मन्दी आनेकी सम्भावना है।

यह मन्दी तारीख १७ तक चलेगी, अनन्तर बाजार रुकेगा और तेजीके उछाले आने आरम्भ होंगे सो अन्तिम सप्ताह तक इसी प्रकार घटबढ़में बाजार चलेगा। ता० २० को शनि मङ्गलका square केन्द्र होगा जिससे एकबार रुईमें मोटा उछाला आवेगा। सितम्बरमें मङ्गल कन्याराशिमें तथा शुक्र भी कन्यामें ता० ११ को आजावेगा। यह दोनों योग अमेरिकाके पाकको खराब करते हैं। साथमें राहु केतुका Con. है अतः इस महीनेमें बाजारमें जनरल तेजीका टोन रहेगा। ता० १७ के अनन्तर जबमङ्गल तुला (सायन राशि) राशिको छोड़ देगा तब रूईमें तेजी कुछ समाप्त होगी। परन्तु फिर भी समय २ पर तेजी आती ही रहेगी। ता० २५ को शनि मिथुनमें वक्र होगा वहां पर कुछ मन्दी अच्छी करेगा। इस समय स्थान तथा समयकी कमीसे तथा लेख विशेष लम्बा हो जानेकी आशङ्का से दैनिक तेजी-मन्दी नहीं दी जा सकी है, जो सज्जन इसमें विशेष दिलचस्पी रखते हों वो ब्यावर (राजपूताना) लेखकके पतेसे पत्रव्यवहार कर सकते हैं।

——

(पृष्ठ ५५ का शेष)

पके फलों को तोड़नेकी विधि

फल सदा हाथसे ही तोड़े जाते हैं, परन्तु सेवके फलमें यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि इसकी डन्डी सदैव फलके साथ रहनी चाहिये।

यदि फलको पकनेसे पहले कोई विषैला मसाला दिया गया हो तो उसको तेजाबके पानीसे धोया जाता है। इसका पूरा वर्णन यहां नहीं किया गया। सेवके फलोंका पेकिङ्ग करना और फलको कागजमें बन्द करना तथा किस प्रकारका कागज लगाया जाता है। इसके पश्चात् फलोंको बन्द कमरोंमें रखना अदिका वर्णन यहां पर नहीं किया गया।

सूचना—यदि किसी सज्जनको सेवके वृक्षके रोग आदिके विषयमें कुछ पूछना हो तो मैनेजर श्री स्वाध्याय सदन सोलन (शिमला) के द्वारा लेखकसे पत्रव्यवहार करें।

—:—

सेवकी खेती

[लेखक — श्री सन्तराम शर्मा]

[गताङ्कसे आगे]

(१२) स्टेमेनवाईनसेप—यह जाति कानसस देशसे मंगवा कर अमेरिकामें लगाई गई।

गुण रूप आदि—फल साधारण बड़ा, गोल चोंचदार होता है। छिलका साफ, मोटा और धब्बेदार, आंतरिक भाग पीला रसदार। किसी स्थान पर भी रंग अच्छा नहीं होता, यह इसमें अवगुण है। पकने पर भूमि पर गिर जाता है। बलेक्स्टेमैन और स्टेमेयर्ड भी इसीकी जाती है, परन्तु रंगमें भेद है। नवम्बर, दिसम्बरमें पकता है।

(१३) रोम ब्यूटी—यह जाति ओहियोसे लाई गई थी।

गुण रूप आदि—फल बड़ा गोल चोंचदार, छिलका मोटा रक्तवर्ण, सूर्यदर्शी भाग पीत धब्बेदार होता है। स्वादमें मीठा, आन्तरिक भाग पीला होता है। फल टहनीके अन्तिम सिरे पर लगते हैं जिससे फलोंके भारसे टहनियां भूमि पर झुक जाती हैं। एफिड नामी कीड़ा भी इसको हानिकारक है। इसकी दूसरी जातिका नाम रेड रोमब्यूटी है। केवल रंगमें भेद है।

(१४) वाईनसैप—उत्पत्तिका ठीक पता नहीं।

गुण रूप आदि—फल सामान्य गोल लम्बोतरा छिलका सख्त साफ, रक्तवर्ण, धब्बेदार, कच्चा पकाने और पक्का खाने योग्य होता है। इस जातिके फल नवम्बरसे अप्रैल तक पकते हैं।

(१५) यलो न्यूटन—यह जाति न्यूयार्कसे अमेरिका में लाई गई थी।

रूप गुण आदि—फल बड़ा, गोल, चपटा, छिलका हरा और पीत होता है। वृक्ष बड़ा, धीरे-धीरे बढ़ता है, देखनेमें सुन्दर नहीं, परन्तु फल शीघ्र देता है। इसके फल दिसम्बरसे मई तक पकते हैं।

पाठकवृन्द! अमेरिकन सेवकी सैंकड़ो जातियां हैं, परन्तु मैंने यहां पर केवल प्रधान २ जातियोंका ही वर्णन किया है।

सेवके वृक्षको लगानेकी विधि

सेवका वृक्ष पैबन्द द्वारा लगाया जाता है, परन्तु पैबन्द भी कई प्रकारसे की जाती हैं। अधिकतर पैबन्द हेमन्त व वसन्त ऋतुओंमें की जाती हैं। यदि उत्तम समय पर पैबन्द करनेका अवसर न मिले तो सेवकी छोटी २ टहनियोंको स्फेगनममोसमें रक्खा जाता है। यदि यह न हो तो रेतमें भी रख सकते हैं।

जब तक सेवके छोटे वृक्ष पर पैबन्द न की गई हो तब तक उसको स्टोक कहते हैं। वृक्षकी आयु केवल उसकी स्टोक पर निर्भर है। स्टोक सेवके ही बीजको लगाकर तैयार करते हैं। फिर दूसरे वर्षमें जब स्टोक उंगली समान हो जाय तब पैबन्द करते हैं। अमेरिकन सेवके लिये डलीशस, वाईनसैप, रोमब्यूटी आदि जातियोंके बीजसे उत्पन्न की हुई स्टोक उत्तम समझी जाती है। इसके अतिरिक्त और भी बहुतसी जातियां हैं, जिनके बीजसे स्टोक उत्पन्न किया जाता है। जब पैबन्द वाला वृक्ष एक-आध इञ्च मोटा हो जाय, तो उसको दूसरे स्थान पर लगाया जाता है।

वृक्षको लगानेसे पहले भूमिकी तैयारी

यदि वृक्षके लगानेसे पहले भूमिको यथाविधि ठीक किया जाय तो वृक्ष शीघ्र बढ़ता है। अच्छी भूमिमें तो वृक्षकी जड़ोंके अनुकूल छोटा गड्ढा देकर लगाया जाता है। यदि भूमि अच्छी न हो तो ३-४ फुट गहरा गड्ढा देना बड़ा हितकर समझा जाता है।

उत्तम भूमि बनानेकी विधि

फलीदार अनाज, मेथी, चना, मसूर आदिको

फूल आने पर हल चला कर भूमिमें दबा दिया जाए, इसको अंग्रेजीमें ग्रीनमेन्योर अर्थात् हरी खाद कहते हैं। अथवा ४-५ सौ मन बार्नयार्ड-मेन्योवर या पशुओंकी खादको डाल कर हल चला कर मिला देना चाहिये। इस रीतिसे भूमिको तैयार किया जाता है। वृक्षोंको लाइनोंमें भी लगाया जाता है। जैसे सब ओर से २०—२० फुटका अन्तर हो। इसको अंग्रेजी में स्क्वेयर सिस्टम कहते हैं। यदि चौकोरके बीचमें भी एक वृक्ष लगाया जाय तो उसको अंग्रेजीमें क्वीन कंक्स सिस्टम कहते हैं।

वृक्षोंके बीचका अन्तर

वृक्षोंमें २०—२० या २५—२५ फुटका अन्तर होना चाहिये, परन्तु यह ढंग सभी जातिके लिये उत्तम न समझा जावेगा। यानि किसी जातिका वृक्ष बड़ा होता है और किसीका छोटा। इसके अतिरिक्त कई जातियोंके वृक्ष ऊपरको सीधे बढ़ते हैं। कोई अपना अधिक फैलाव देते हैं और भूमिके अनुसार भी वृक्ष अपनी चाल दिखाते हैं, इन सब बातोंका ध्यान रखते हुए सेवके वृक्ष लगाए जाते हैं। यह कार्य बड़े अनुभवसे किया जाता है।

वृक्षका लगाना

वृक्षको लगानेसे पूर्व यह देख लेना चाहिए कि उसकी कितनी जड़ें उखाड़ते समय टूट गई हैं, उसी के अनुसार उसको ऊपरसे भी काटना चाहिये। वृक्ष को उतना ही गहरा लगाना चाहिये जितना कि वह पहले नरसरीमें लगा हुआ था। लगाते समय जड़ोंके आसपासकी मिट्टीको पांव द्वारा खूब दबाना चाहिये, नहीं तो वायुसे जड़ें सूख जावेंगी और वृक्ष मर जावेगा। इसके पश्चात् उसको जल देना चाहिये। छोटे वृक्षोंकी रक्षाके लिये बड़े वृक्षोंके बीचकी भूमि को अच्छा रखने के हेतु फसल बोना, जिसको अंग्रेजी में इन्टरक्रोमिङ्ग और कवर क्रोप्स कहते हैं। ये सब बातें लेख बढ़नेके भयसे नहीं लिखी गईं।

फलोंकी रक्षा

फलोंको बड़ा करनेके लिये ग्रीष्मऋतुमें जल अवश्य देना चाहिये। इसके अतिरिक्त वृक्षको उसके बढ़नेके अनुसार जल दिया जाता है। यदि फल एक ही जगह बहुत लगे हों तो उनमेंसे कुछ निकाल देने चाहिएं। जबकि फल अखरोटके समान बड़े हों तब यह कार्य किया जावे। इस कार्यसे फल बड़ा और सुन्दर होता है।

छांग

वृक्षको केवल सुन्दर बनानेके हेतु ही छांग नहीं की जाती अपितु इससे और भी बहुत लाभ हैं। फल शीघ्र आता है, वृक्ष बड़ा फैलाव देता है। रोग वाली टहनियोंके निकालनेसे बड़ा लाभ होता है। परन्तु छांग करना अनुभवी पुरुषका कार्य है। यदि टहनियां अधिक कट गईं तो वृक्ष फल रहित और निर्बल हो जावेगा; यदि कम कट गईं तो हलकी टहनियों पर भार पड़नेसे वृक्ष टूट जावेगा। इस लिये यह कार्य सदैव किसी अनुभवीसे करवाना चाहिये। वृक्षकी प्रतिवर्ष छांग करनी चाहिये और कटी हुई जगह पर औषधी लगानी चाहिये, नहीं तो कीड़े उस स्थान से सूखी लकड़ी खाकर अंदर घुस जावेंगे और वृक्ष को सुखा देंगे। सेवके वृक्षको कई प्रकारके रोग होते हैं, जिनका वर्णन यहां पर नहीं किया गया।

फलके पकनेका समय

यह समय बहुतसी बातों पर निर्भर है— (१) जाति, (२) ऋतु, (३) स्थान, (४) किस कारणसे फलको तोड़ना है (खानेके लिये या दूर भेजनेके लिये) (१) फल वृक्षसे सुलभतासे तोड़ा जा सकता है या नहीं ? जैसे पकनेके समय पर कई जातियोंके फल गिरने शुरू हो जाते हैं। (२) फलका स्वाद काट कर चखो, क्या फल काटनेमें सख्त है या नर्म ? इससे भी परीक्षा की जा सकती है। (३) रक्त-पीत जातिके फल क्या अपना रंग अपनी जातिके अनुसार ठीक दे रहे हैं या नहीं ? यदि ऋतु धुन्दली हो तो भी फल अपना रंग अवश्य दिखाएगा। (४) यदि फल दूर देश भेजने हों तो कच्चे तोड़ने चाहियें, नहीं तो शीघ्र पक कर सड़ जाते हैं।

[शेष पृष्ठ ५३ पर देखिये]

समर्घ महर्घ (तेजी मन्दी) विचार

[लेखक — श्री रामशरण शर्मा मिश्र]

[लेखकने सर्वतोभद्रचक्र वेधके अनुसार कुछ वस्तुओंकी तेजी-मन्दी निकाल कर विस्तृत रूपमें हमारे पास भेजी है। उसका कुछ संक्षिप्त भाग व्यापारी वर्गके लाभार्थ यहां प्रकाशित किया जा रहा है। पाठक इसका अनुभव करें और परिणाम की सूचना हमें अवश्य दें। —सम्पादक]

गेहूं

ता० २० जुलाईसे १६ अगस्त तक तेज। इसमें भी २७ जुलाईसे २ अगस्त तक सम रहेगा। ता० २२, २३, २५ जुलाई और ४, ६ अगस्तको कुछ मन्दा। ता० ११ अगस्तसे १३ सितम्बर तक तेजी रहेगी। इसमें भी ता० १९, २०, २२, ३१ अगस्त तथा ३ सितम्बरमें कुछ मन्दा। ता० १४ सितम्बरसे ता० १९ अक्टूबर तक भाव मन्दा होकर सम रहे। इसमें भी ता० १५, १६, १८ सितम्बर और ४ अक्टूबरको विशेष मन्दा और ता० ५, ६, ७ अक्टूबरको कुछ तेज रहेगा।

चणा

ता० १९ जुलाईसे २ अगस्त तक विशेष तेजी। ता० ३ से १३ अगस्त तक रुख मन्दा। ता० १४ से १९ अगस्त तक तेज। २० अगस्तसे १३ सितम्बर तक रुख मन्दा होकर सम भाव रहे। १४ से २७ सितम्बर तक विशेष तेजी। २८ सितम्बरसे १९ अक्टूबर तक मन्दा।

रुई

२ अगस्त तक सम भाव। ३ से १६ अगस्त तक तेजी। १७ अगस्तसे १३ सितम्बर तक भाव सम, साधारण घटा-बढ़ी होगी। ता० १४ सितम्बरसे २० अक्टूबर तक साधारण मन्दी।

सोना

ता० २० जुलाईसे २ अगस्त तक साधारण घटा-बढ़ी। ता० ३ से १६ अगस्त तक तेजी और आगे १३ सितम्बर तक मन्दा, ता० १७, २०, २२, २३, ३१ अगस्तमें विशेष मन्दा। १४ सितम्बरसे १० अक्टूबर तक भावमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं, साधारण घटाबढ़ी हो। ११ से १९ अक्टूबर तक तेजीका योग है।

चान्दी

२० जुलाईसे २ अगस्त तक तेजी। २४, २५, २८ जुलाई और ३ से १२ अगस्त तक रुख मन्दा। १३ से १९ अगस्त तक तेजी। २० अगस्तसे १३ सितम्बर तक साधारण मन्दी। १४ सितम्बरसे २७ सितम्बर तक विशेष तेजी। २८ सितम्बरसे १९ अक्टूबर तक विशेष मन्दी।

लोहा

ता० २ अगस्त तक विशेष तेज। ३ से १६ अगस्त तक कुछ मन्दा। १७ से ३० अगस्त तक विशेष तेज। ३१ अगस्तसे १९ अक्टूबर तक भावमें साधारण घटावढ़ी होकर रुख तेजीकी ओर ही रहेगा।

गुड़

ता० १३ सितम्बर तक मन्देके योग नहीं है, रुख तेजीकी ओर ही रहेगा। १४ सितम्बरसे १९ अक्टूबर तक मन्दा।

खण्ड

ता० १९ जुलाईसे १६ अगस्त तक सम भाव रहे साधारण घटा बढ़ी हो सकती है। १७ से ३० अगस्त तक तेजी। ३१ अगस्तसे १९ अक्टूबर तक सम भाव रुख कुछ तेजीकी ओर।

अलसी

३ से १६ अगस्त तक विशेष तेजी। आगे १९ अक्टूबर तक कोई विशेष परिवर्तन नहीं होगा, भाव टिका रहे या साधारण तेजी हो सकती है।

घृत

ता० २७ सितम्बर तक सम भाव, कोई विशेष परिवर्तन न हो। आगे १९ अक्टूबर तक तेज।

तैल

ता० २ अगस्त तक तेज। ३ से १६ अगस्त तक मन्दा। १७ अगस्तसे १३ सितम्बर तक विशेष तेज। १४ सितम्बरसे १९ अक्टूबर तक कुछ मन्दा होगा।

टमाटर

[लेखक — श्री सन्तराम शर्मा]

टमामर खानेमें बड़ा स्वादिष्ट रुचिकारक और अग्निवर्धक होता है। यह भारतके सभी स्थानों पर उत्पन्न किया जाता है, परन्तु भिन्न २ स्थानोंमें इसकी भिन्न-भिन्न जातियां होती हैं। वैसे तो इसको सभी किसान लोग उत्पन्न करते हैं; परन्तु इसको उत्तमरीति से उत्पन्न करना एक साधारण पुरुषका कार्य नहीं। मैं इस समय केवल इसकी स्वादिष्ट जातियों की पहचान आदिके विषयमें कुछ लिखता हूं।

टमाटरकी खेती वैसे तो सब जगह होती है, परन्तु काश्मीरमें इसको विशेषतासे उत्पन्न करते हैं। देखा जाता है कि शिमला पहाड़में इसकी जातिको पहाड़ी टमाटर कहते हैं। यह जाति देखनेमें बड़ी असुन्दर होती है, इसके अतिरिक्त इसमें बीजकी विशेषताके कारण स्वादिष्ट भी नहीं होती, परन्तु काश्मीरी टमाटर देखनेमें बड़े सुन्दर और गोल होते हैं। इसका जो फल बड़ा, गोल और रक्तवर्णका होता है वही खानेमें स्वादिष्ट जानना चाहिए। कई लोग कच्चे फलकी भाजी बनाते हैं और कई पक्के पकाते हैं। परन्तु पक्के फल अधिक गुणकारी होते हैं। यदि पक्के फलको काट कर और उसका छिलका निकाल कर चीनीके साथ खाया जावे तो बड़ा स्वादिष्ट और गुणकारी होता है। आजकल तो इसका इतना प्रचार बढ़ गया है कि इसकी कई वस्तुएं बना २ कर बोतलोंमें बन्द करके बाजारोंमें बिकती हैं। जैसे टोमेटोकेट्चाप (Tomatoketchup) आदि।

बनानेकी विधि

पक्के रक्तवर्णके फलोंको लेकर जलसे खूब धो डालो और ऊपरसे छील कर सड़ा गला भाग निकाल दो। अब कलईदार कढ़ाई या मिट्टीके बर्तनमें फलोंको डाल कर लकड़ीके सोटेसे खूब पीसो। जब तक कि वह चटनी समान न हो जावे। अब उसको ५ मिनट अग्नि पर उबालो, इसे किसी कपड़ेसे या छलनीसे निथार (छान) डालो कि बीज और छिलके अलग निकल आवें, अब जो वस्तु निकल आई इसको अंग्रेजीमें पल्प कहते हैं। अब पल्पका तोल कर लेना चाहिये और निम्नलिखित वस्तुओंको प्रति ६ गैलन पल्पमें विधिपूर्वक मिला कर सेवन करना चाहिए —

(१) कुतरे हुए प्याज ७ छटांक, (२) कुतरा हुआ लहसुन २। तोला, (३) लोंग १ तोला, (४) गर्ममसाला (जीरा कालीमिर्च आदि) १ तोला, (५) जावित्री बिना पिसी ३ माशा, (६) दालचीनी १।। तोला, (७) सिरका १। तोला, (८) चीनी १ सेर, (९) नमक ५।।। छटांक, (१०) लाल मिर्च १ तोला।

पल्पको अग्नि पर चढ़ादो। प्याज लहसुन गर्म-मसाले आदिको कपड़ेकी थैलीमें बंद करके पल्पमें डाल दो और $\frac{1}{3}$ भाग चीनी उबालनेसे पहले और बाकी उबलते समय पल्प में मिलानी चाहिये। सिर्केको उतारनेसे ५ मिनट पहले डालो। जब पल्प बिल्कुल उबल जावे या $\frac{1}{3}$ भाग रह जावे तो उसको उतार कर उसमें नमक मिलाओ और खूब हिलाओ, अब मसाले की थैली निकाल दो। इस वस्तुको गर्म २ बोतलोंमें डालो (जो पहले उबाल कर साफ की गई हों) और उसको इस प्रकार बंद किया जावे कि उसमें वायु न जा सके। अब इन बोतलोंको एक घन्टे तक उबलते पानीमें रक्खो, पश्चात् निकालकर ठंडे स्थानमें रक्खो, यह टोमेटोकेट्चाप बन गया।

समर्घ महर्घ (तेजी मन्दी) विचार

[लेखक — श्री रामशरण शर्मा मिश्र]

[लेखकने सर्वतोभद्रचक्र वेधके अनुसार कुछ वस्तुओंकी तेजी-मन्दी निकाल कर विस्तृत रूपमें हमारे पास भेजी है। उसका कुछ संक्षिप्त भाग व्यापारी वर्गके लाभार्थ यहां प्रकाशित किया जा रहा है। पाठक इसका अनुभव करें और परिणाम की सूचना हमें अवश्य दें। —सम्पादक]

गेहूं

ता० २० जुलाईसे १६ अगस्त तक तेज। इसमें भी २७ जुलाईसे २ अगस्त तक सम रहेगा। ता० २२, २३, २५ जुलाई और ४, ६ अगस्तको कुछ मन्दा। ता० ११ अगस्तसे १३ सितम्बर तक तेजी रहेगी। इसमें भी ता० १६, २०, २२, ३१ अगस्त तथा ३ सितम्बरमें कुछ मन्दा। ता० १४ सितम्बरसे ता० १६ अक्टूबर तक भाव मन्दा होकर सम रहे। इसमें भी ता० १५, १६, १८ सितम्बर और ४ अक्टूबरको विशेष मन्दा और ता० ५, ६, ७ अक्टूररको कुछ तेज रहेगा।

चणा

ता० १६ जुलाईसे २ अगस्त तक विशेष तेजी। ता० ३ से १३ अगस्त तक रुख मन्दा। ता० १४ से १६ अगस्त तक तेज। २० अगस्तसे १३ सितम्बर तक रुख मन्दा होकर सम भाव रहे। १४ से २७ सितम्बर तक विशेष तेजी। २८ सितम्बरसे १६ अक्टूबर तक मन्दा।

रुई

२ अगस्त तक सम भाव। ३ से १६ अगस्त तक तेजी। १७ अगस्तसे १३ सितम्बर तक भाव सम, साधारण घटा-बढ़ी होगी। ता० १४ सितम्बरसे २० अक्टूबर तक साधारण मन्दी।

सोना

ता० २० जुलाईसे २ अगस्त तक साधारण घटा-बढ़ी। ता० ३ से १६ अगस्त तक तेजी और आगे १३ सितम्बर तक मन्दा, ता० १७, २०, २२, २३, ३१ अगस्तमें विशेष मन्दा। १४ सितम्बरसे १० अक्टूबर तक भावमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं, साधारण घटाबढ़ी हो । ११ से १६ अक्टूबर तक तेजीका योग है।

चान्दी

२० जुलाईसे २ अगस्त तक तेजी। २४, २५, २८ जुलाई और ३ से १२ अगस्त तक रुख मन्दा। १३ से १६ अगस्त तक तेजी। २० अगस्तसे १३ सितम्बर तक साधारण मन्दी। १४ सितम्बरसे २७ सितम्बर तक विशेष तेजी। २८ सितम्बरसे १६ अक्टूबर तक विशेष मन्दी।

लोहा

ता० २ अगस्त तक विशेष तेज। ३ से १६ अगस्त तक कुछ मन्दा। १७ से ३० अगस्त तक विशेष तेज। ३१ अगस्तसे १६ अक्टूबर तक भावमें साधारण घटावढ़ी होकर रुख तेजीकी ओर ही रहेगा।

गुड़

ता० १३ सितम्बर तक मन्देक- योग नहीं है, रुख तेजीकी ओर ही रहेगा। १४ सितम्बरसे १६ अक्टूबर तक मन्दा।

खण्ड

ता० १६ जुलाईसे १६ अगस्त तक सम भाव रहे साधारण घटा बढ़ी हो सकती है। १७ से ३० अगस्त तक तेजी। ३१ अगस्तसे १६ अक्टूबर तक सम भाव रुख कुछ तेजीकी ओर।

अलसी

३ से १६ अगस्त तक विशेष तेजी। आगे १६ अक्टूबर तक कोई विशेष परिवर्तन नहीं होगा, भाव टिका रहे या साधारण तेजी हो सकती है।

घृत

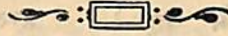
ता० २७ सितम्बर तक सम भाव, कोई विशेष परिवर्तन न हो। आगे १६ अक्टूबर तक तेज।

तैल

ता० २ अगस्त तक तेज। ३ से १६ अगस्त तक मन्दा। १७ अगस्तसे १३ सितम्बर तक विशेष तेज। १४ सितम्बरसे १६ अक्टूबर तक कुछ मन्दा होगा।

टमाटर

[लेखक — श्री सन्तराम शर्मा]



टमामर खानेमें बड़ा स्वादिष्ट रुचिकारक और अग्निवर्धक होता है। यह भारतके सभी स्थानों पर उत्पन्न किया जाता है, परन्तु भिन्न २ स्थानोंमें इसकी भिन्न-भिन्न जातियां होती हैं। वैसे तो इसको सभी किसान लोग उत्पन्न करते हैं; परन्तु इसको उत्तमरीति से उत्पन्न करना एक साधारण पुरुषका कार्य नहीं। मैं इस समय केवल इसकी स्वादिष्ट जातियों की पहचान आदिके विषयमें कुछ लिखता हूं।

टमाटरकी खेती वैसे तो सब जगह होती है, परन्तु काश्मीरमें इसको विशेषतासे उत्पन्न करते हैं। देखा जाता है कि शिमला पहाड़में इसकी जातिको पहाड़ी टमाटर कहते हैं। यह जाति देखनेमें बड़ी असुन्दर होती है, इसके अतिरिक्त इसमें बीजकी विशेषताके कारण स्वादिष्ट भी नहीं होती, परन्तु काश्मीरी टमाटर देखनेमें बड़े सुन्दर और गोल होते हैं। इसका जो फल बड़ा, गोल और रक्तवर्णका होता है वही खानेमें स्वादिष्ट जानना चाहिए। कई लोग कच्चे फलकी भाजी बनाते हैं और कई पक्के पकाते हैं। परन्तु पक्के फल अधिक गुणकारी होते हैं। यदि पक्के फलको काट कर और उसका छिलका निकाल कर चीनीके साथ खाया जावे तो बड़ा स्वादिष्ट और गुणकारी होता है। आजकल तो इसका इतना प्रचार बढ़ गया है कि इसकी कई वस्तुएं बना २ कर बोतलोंमें बन्द करके बाजारोंमें बिकती हैं। जैसे टोमेटोकेट्चाप (Tomatoketchup) आदि।

बनानेकी विधि

पक्के रक्तवर्णके फलोंको लेकर जलसे खूब धो डालो और ऊपरसे छील कर सड़ा गला भाग निकाल दो। अब कलईदार कढ़ाई या मिट्टीके बर्तनमें फलोंको डाल कर लकड़ीके सोटेसे खूब पीसो। जब तक कि वह चटनी समान न हो जावे। अब उसको ५ मिनट अग्नि पर उबालो, इसे किसी कपड़ेसे या छलनीसे निथार (छान) डालो कि बीज और छिलके अलग निकल आवें, अब जो वस्तु निकल आई इसको अंग्रेजीमें पल्प कहते हैं। अब पल्पका तोल कर लेना चाहिये और निम्नलिखित वस्तुओंको प्रति ६ गैलन पल्पमें विधिपूर्वक मिला कर सेवन करना चाहिए —

(१) कुतरे हुए प्याज ७ छटांक, (२) कुतरा हुआ लहसुन २। तोला, (३) लौंग १ तोला, (४) गर्ममसाला (जीरा कालीमिर्च आदि) १ तोला, (५) जावित्री बिना पिसी ३ माशा, (६) दालचीनी १॥ तोला, (७) सिरका १। तोला, (८) चीनी १ सेर, (९) नमक ५॥ छटांक, (१०) लाल मिर्च १ तोला।

पल्पको अग्नि पर चढ़ादो। प्याज लहसुन गर्म-मसाले आदिको कपड़ेकी थैलीमें बंद करके पल्पमें डाल दो और ⅓ भाग चीनी उबालनेसे पहले और बाकी उबलते समय पल्प में मिलानी चाहिये। सिर्केको उतारनेसे ५ मिनट पहले डालो। जब पल्प बिल्कुल उबल जावे या ⅓ भाग रह जावे तो उसको उतार कर उसमें नमक मिलाओ और खूब हिलाओ, अब मसाले की थैली निकाल दो। इस वस्तुको गर्म २ बोतलोंमें डालो (जो पहले उबाल कर साफ की गई हों) और उसको इस प्रकार बंद किया जावे कि उसमें वायु न जा सके। अब इन बोतलोंको एक घन्टे तक उबलते पानीमें रक्खो, पश्चात् निकालकर ठंडे स्थानमें रक्खो, यह टोमेटोकेट्चाप बन गया।



ग्रीष्म !

एक बार ग्रीष्म समयमें कविगोष्ठीमें यह प्रश्न उठा कि ग्रीष्मऋतुमें दिन इतने लम्बे क्यों हो जाते हैं ? प्रत्येकने अपनी २ कल्पनाके अनुसार इसका समाधान किया। 'श्रीस्वाध्याय' के प्रेमी पाठकोंके हाथमें यह 'ग्रीष्माङ्क' समर्पित करते हुए हमें भी इस प्रश्नके सम्बन्धमें जो समाधान स्मरण आया उसे यहां प्रकाशित करने का लोभ हम संवरण न कर सके। ग्रीष्ममें दिन क्यों बड़े हो जाते हैं इस पर एक कवि यों उत्तर दे रहे हैं। इन कविजीका परिचय पाठकोंको हेमन्ताङ्कमें दिया जा चुका है। ये वे ही कवि हैं जिन्होंने व्युत्पत्तिवादकी टीका तथा निर्णयसिन्धु की टीका कृष्णभट्टी आदि कई ग्रन्थ लिखे हैं। कितनी सुन्दर सूक्ति है, सुनिये—

स्वदेहघर्मोदकपिच्छिलेऽस्मिन्
नभस्थले किं तरणेस्तुरङ्गाः।
स्खलत्खुरा न त्वरया विचेलु—
स्ततो नु दीर्घा दिवसा निदाघे॥

भगवान् सूर्यके रथके घोड़ोंको गरमी बहुत लग रही है, उनके अपने देहसे पसीना बह रहा है। नभस्थल उसके कारण सरपट (चिकना) बन गया है। कृष्णभट्ट कहते हैं कि घोड़ोंके खुर नभोमार्गमें चिकनेपनके कारण लड़खड़ाने लगे और शीघ्र दौड़ना घोड़ोंके लिये असम्भव होगया अतः भगवान् सूर्यनारायणका रथ धीरे-धीरे चलने लगा इस लिए मैं समझता हूं कि ग्रीष्म-ऋतुमें दिन बहुत बड़े होगये।

प्रावृट् !

हन्त! प्रावृट्-समय कितना सुखद तथा उन्मादक होता है इसका पूर्णरूपसे निर्वचन करना वाणीके लिये अगोचर ही है। कारण स्वाधीनकान्ता कान्ताओंके लिए तथा विद्यमानकान्ताओं के लिए जितना ही यह सुखप्रद होता है अस्वाधीनकान्ता तथा प्रोषितकान्ता कान्ताओंके लिये उतना ही अधिक दुःखप्रद भी हो जाता है। एक ही समय किसीको सुखी तथा किसीको दुःखी भी करते रहता है। इसी सम्बन्धमें एक सुन्दर सूक्ति 'श्रीस्वाध्याय' के रसिक पाठकोंके मनोविनोदके लिये यहां हम दे रहे हैं। यह सूक्ति महामहिम आचार्य श्रीमान् अमृतवाग्भवजी महाराजके अप्रकाशित "छन्दोविश्वम्भर" नामक ग्रन्थसे ली गई है। मत्तमयूर नामक छन्दके उदाहरणमें आचार्य लिखते हैं—

प्रावृट्काले प्रोषितकान्ता तरुणीयं
हस्तन्यस्ताऽऽरक्तकपोला च्युतधैर्या।
दत्ते शापं वेधस आमीलितनेत्रा
दर्शं दर्शं मत्तमयूरं मदनार्ता॥

प्रावृट्कालमें मयूर मत्त हो रहा है, उसको यह तरुणी अधखुली आंखोंसे देख देख कर मदनसे पीड़ित हो रही है। इसका प्रियपति परदेश गया है। ईषद्रक्त कपोलको हथेली पर रख कर धैर्य धारण न कर सकनेके कारण वामविधाताको शाप दे रही है। कितनी सुन्दर सूक्ति है। रसिक पाठक रसभाव अलङ्कारध्वनि आदि पर स्वयं विवेचन कर सकते हैं। हमने तो इसे सुन्दर सूक्ति जान रसिक पाठकोंको समर्पित किया है। उपर्युक्त दोनों सूक्तियों पर रसिक पाठक टीका टिप्पण तो स्वयं ही कर लेंगे।

भारतीय कौमारभृत्य

[लेखक—श्री पं० धनेशचन्द्रजी आयुर्वेदाचार्य]



[गताङ्कसे आगे]

गर्भिणीको परिश्रम करना तो वर्जित है ही, परतु प्रसवकालके दिनोंमें तो भूलकर भी परिश्रम नहीं करना चाहिए। प्रसूतकाल सन्निकट होने पर गर्भिणी-को प्रसूतागार में ही रखना उचित है। प्रसूतागारके लिए पृथक् ही एक स्थान होना चाहिए। घरका सबसे अच्छा कमरा इसके लिए चुनना चाहिए, जिसमें वायु संचारके लिए खिड़की आदि होनी चाहिएँ, तथा वहां सफाई अच्छे प्रकार की हो। कीड़े मकोड़े आदि से रहित स्थान हो। प्रायः देखा जाता है कि घरके सबसे छोटे तथा अन्धकारपूर्ण स्थानका उपयोग प्रसूतिगृह या सौरगृहके लिए किया जाता है। जिसके फलस्वरूप सैकड़ों बीमारियां प्रसूता एवं बच्चेको भुगतनी पड़ती हैं। कारण यह है कि बालक एवं प्रसूता को इस समय शुद्ध वायुकी विशेष आवश्यकता होती है। बालक तो प्रथमवार ही श्वास लेता है, उस समय भी यदि उसे अशुद्ध वायु मिली तो वह जीवन भरके लिए दुर्बल हो जाता है। अतः प्रसूतागारके लिए कमरा खूब लम्बा-चौड़ा हवादार पुता हुआ एवं स्वच्छ होना चाहिए। प्रायः घरकी वृद्धा स्त्रियां वायुके विषय-में कहा करती हैं कि—"यदि प्रसूताको हवा लग गई तो प्रसूतकी बीमारी हो जाती है" परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि उसके कमरेमें वायु जाने ही नहीं देनी चाहिए। केवल सामनेकी एवं शीतल वायु से प्रसूताकी अवश्य ही रक्षा करनी चाहिए। वायुको शुद्ध करनेके लिए घरमें धूप आदि देनी चाहिए। गर्भिणीके पास ऐसे समयमें घरकी वृद्धा स्त्रियां जो कि प्रसव परिचर्य्यामें निपुण तथा गर्भिणीसे प्रेम करनेवाली हों—रहनी चाहिएँ। कारण यह है कि प्रसवकालमें गर्भिणीको अत्यन्त वेदना होती है और कभी २ तो गर्भिणी संज्ञाहीन भी हो जाती है। ऐसे समय पासकी स्त्रियोंका कर्तव्य है कि वे उसे आश्वासन देती रहें तथा यथानुकूल परिचर्य्या करती रहें।

गर्भिणीके लिए एक लम्बी चौड़ी अच्छी कसी हुई चारपाई होनी चाहिए, बिछानेके लिए कोमल गद्दे होने चाहिएँ। उस पर स्वच्छ चादर एवं तकिये लगे हुए होने चाहिएँ। प्रसवके पश्चात् ही कपड़े बदल देने चाहिएँ। प्रायः देखा जाता है कि गन्दे कपड़े ही प्रसूताके बिस्तर पर बिछे रहते हैं, जिनसे कभी २ बहुत हानि एवं बच्चेकी मृत्यु तक हो जाती है। अतः सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

प्रसवके समयके लिए रुई, स्वच्छ कपड़े, कैञ्ची, आवश्यक औषधि आदि सामग्री किसी मेज, अल-मारी अथवा किसी पासके स्थान पर रख लेनी चाहिए। जिससे आवश्यकता पड़ने पर शीघ्र ही उनका उपयोग किया जा सके। प्रसूतागारमें दो-तीन स्त्रियोंसे अधिक स्त्रियां न हों, प्रकाशके लिए हलकी मन्द अरण्डी या सरसोंके तेल का दीपक हो। बिजली या मिट्टीके तेलकी तीक्ष्ण प्रकाशवाली रोशनीकी आवश्यकता नहीं है। यदि जाड़के दिन हों और आगकी आवश्यकता हो तो प्रसूतागारके सामनेके दरवाजे पर कोयलोंकी सुलगी हुई अँगीठी रख देनी चाहिए। अँगीठीको यथासम्भव प्रसूतागारमें नहीं रखना चाहिए।

प्रसूताके लिए पीनेको पानी उबालकर ही देना चाहिए। और दो तीन दिन तक तो यदि गुनगुना पानी ही पीनेको दिया जाय तो विशेष अच्छा रहता है। इससे ज्वरादिकी सम्भावना कम रहती है। एवं शरीर शुद्धि भी होती रहती है।

प्रसूतकालमें दाईका स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण

है। प्रसूता एवं बालक दोनोंका उत्तरदायित्व दाईके ऊपर ही रहता है। प्रायः देखा जाता है कि ऐसे महत्त्वपूर्ण कार्यके लिए अशिक्षित, अपवित्र; अयोग्य दाइयोंको अधिकतर बुलाया जाता है, जिसका परिणाम बड़ा भयङ्कर होता है। अभी मेरे एक मित्र की स्त्रीका देहान्त ऐसे ही कारण से हुआ है। दाई प्रसूतिकलामें निपुण, मध्यम आयु वाली, स्वच्छ वस्त्र धारण करने वाली, जिसके नाखून कटे हुए हों, सुन्दर एवं प्रसूतासे प्रेम करने वाली हो।

प्रसवकाल

प्रसव होनेके एक दो दिन पूर्वसे बच्चेका गर्भ-बन्धन शिथिल होने लगता है। जिसके कारण गर्भ नीचेको लटक आता है। जिसका दबाव मूत्राशय पर पड़ता है और बार बार मूत्र करनेकी इच्छा होती है। साथ ही योनिसे कुछ सफेद स्राव भी होने लगता है। प्रसवके कुछ घण्टे पूर्व गर्भिणीको एक विशेष प्रकारका दर्द होने लगता है। जिसको आवि कहते हैं। यह गर्भाशयके उपरिभागमें एक प्रकारका सङ्कोच होता है; जिसके कारण बालक नीचेकी ओर आता है और योनि आदि पर अधिक भार आता है। इसी कारण दर्द मालूम होता है। प्रायः यह देखा गया है कि जो स्त्रियां अधिक शारीरिक परिश्रम करती हैं उनके शूल बहुत ही कम होता है। मैंने एक ग्रामीण स्त्रीको देखा जो करीब एक मन लकड़ीका बोझा सिर पर ला रही थी; उसे रास्तेमें ही प्रसवकी शङ्का हुई। उसने अपने बोझको एक तरफ रख दिया और एक झाड़ीकी ओर चली गई; थोड़ी ही देरमें बच्चेको साथ लेकर आई और अपना बोझ सर पर उठा लिया और चली गई। बड़े घरोंकी स्त्रियोंको जिनको शारीरिक परिश्रम बहुत कम करना पड़ता है उनको यह शूल अधिक होता है। प्रसवपीड़ाके समय स्त्रीको टहलाना या बैठाना चाहिए, लिटाना नहीं चाहिए; इससे गर्भके बाहर आनेमें कुछ समय अधिक लगजाता है। आसन्न प्रसवा अर्थात् जब बालक होनेको होता है तब निम्नलिखित लक्षण होते हैं—

योनिसे अधिक मात्रामें श्वेत तरल निकलना। पेटमें दर्द, मूत्र, पाखाना जानेकी इच्छा, जी मिचलाना, कै होना, कम्प इत्यादि।

सबसे प्रथम बालकका सिर बाहर आता है। अतः दाईका कर्त्तव्य है कि अपने हाथोंको चिकने कर योनिमें प्रवेश करे और बालकको धीरे २ बाहर निकाले। बाहर निकालते समय इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि गर्भोदककी थैली फटी है या नहीं। यदि नहीं फटी तो तत्काल फाड़ देना चाहिए अन्यथा प्राणोंका भय रहता है। बच्चेको बाहर निकालते ही नालको काट देना चाहिए। बालककी नाभिसे चार-अंगुल छोड़कर नालको बांध देना और फिर चार-अंगुल छोड़कर बांध देना चाहिए। फिर बीचमेंसे किसी तेज कैंची या चाकूसे शीघ्र काट देना चाहिए। बिना बांधे काटने पर रक्त निकलनेकी सम्भावना रहती है अतः दोनों तरफसे किसी डोरेसे अवश्य बांध देना चाहिए, फिर काट देना चाहिए।

कभी २ प्रसव होनेमें विलम्ब हो जाता है। ऐसी अवस्थामें शीघ्र ही प्रसवकारक योग देना चाहिए। गाजरके बीजोंका क्वाथ देनेसे प्रसव शीघ्र हो जाता है। बालकका सिर न आकर कोई दूसरा अङ्ग यदि योनिद्वारसे बाहर निकले तो किसी योग्य चिकित्सक को बुलाकर बच्चेको निकलवाना चाहिए। अन्यथा प्रसूता एवं बालक दोनोंके प्राणोंका भय रहता है।

बालक बाहर निकलतेही रोना प्रारम्भ करता है, तथा उसके फेफड़े स्वयं कार्य करना प्रथमवार ही आरम्भ करते हैं। बालकके मुंहमें कफ चिपटा हुआ रहता है; अतः दाईको चाहिए कि एक रुईके फाहेमें थोड़ा नमक सैंधा लगाकर उङ्गलीसे बालकके मुंहको साफ करदे। इससे उसका गला साफ हो जाता है और श्वास लेने तथा आवाज निकालनेमें सहायता मिलती है। यदि बालकको श्वास लेनेमें कुछ रुकावट मालूम हो तो दाईको उचित है कि तत्काल ही उसके मुंह पर ठण्डे जलके छींटे दे, पेटके बल लिटाकर उसे जल्दी २ हिलाए तथा बालककी नाक बन्दकर उसके मुंहमें फूंक भरे तथा धीरेसे उसकी छाती

दबा दे, ऐसा करनेसे शीघ्र ही श्वास चलने लगता है।

बालक होनेके कुछ काल पश्चात् गर्भाशयसे आंवल गिरती है। यह स्वयं ही निकला करती है। यदि न निकले तो सांपकी कांचली, नीमके पत्ते, गूगल इनकी धूनी योनिमें देनी चाहिए। धीरे २ गर्भाशयको दवाना उचित है। ऐसा करनेसे आंवल सुगमतासे निकल जाती है।

बालकको उत्पन्न होनेके पश्चात् ही स्नान कराना परमावश्यक होता है। स्नान करानेके पूर्व उसके शरीरको किसी स्वच्छ एवं कोमल वस्त्रसे पोंछना, तथा मुंह आंख आदिके मलको बड़ी सावधानीसे साफ करना चाहिए। फिर उसके शरीर पर तैल लगाकर स्नान करा देना चाहिए। स्नानके लिए यदि जाड़ेके दिन हों तो साधारण गरम जल अन्यथा ऐसे पानीसे स्नान कराना चाहिए जो न गर्म हो और न ठण्डा। स्नानके पश्चात् उसके शरीरको स्वच्छ कोमल वस्त्रसे पोंछकर किसी छोटी सी कोमल शय्या-वाली खाट पर सुला देना चाहिए। बच्चेको पहिनने तथा ओढ़नेके वस्त्र मुलायम, हलके, ऋतुके अनुसार होने चाहिए।

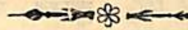
बालकके तालुको दक्षिण हाथकी तर्जनी अंगुलीसे कुछ ऊपर उठाकर उस पर तैलमें भिगोकर एक फाहा रखदेना चाहिए। बालककी आयु मेधा बलकी वृद्धिके लिए ब्राह्मी, बच, शङ्खाहूलीके चूर्णको थोड़ेसे घी तथा शहदमें मिलाकर चटा देना चाहिए तथा आमलेका चूर्ण ½ रत्ती तथा ½ रत्ती स्वर्ण भस्म शहद तथा घीमें मिलाकर अभिमन्त्रित कर चटा देना चाहिए।

प्रसूतिके कारण माताकी नाड़ियां अस्तव्यस्त हो जाती हैं; अतः तीसरे या चौथे दिन दूध उतरता है। इस लिए पहले दिन बालकको अनन्ताके चूर्णको शहदमें मिलाकर अभिमन्त्रित करके तीन बार चटाना चाहिए। दूसरे तथा तीसरे दिन लक्ष्मणासे शुद्ध किया हुआ घी तीन बार चटावें। तीसरे या चौथे दिन माताका दूध उतर आता है। पहिले ब्रैस्टपम्प द्वारा थोड़ा दूध निकाल लेना चाहिए। फिर बालकको पीनेके लिए उचित होता है। आरम्भके दो-तीन दिन माताके दूधके साथ ही बार २ थोड़ा सा नवनीत (मक्खन) भी बालकको चटा देना चाहिए।

(क्रमशः)

काश्मीर-सुषमा !

[कवयिता — श्री० पं० सूर्यनारायणजी व्यास]



निर्झर-तीर शिला पर बैठे बने चित्रवत् वाह।
संस्मरणोंके द्वार न खोलो 'टीस' उठेगी आह॥
सौध-शिखर-निर्झर-वनराजी 'पहल गांव' की बात।
रम्य-सुमन-सज्जित-वन-उपवन और सुनहले प्रात॥
वह निकुञ्ज, सुरसरिता 'डल'-सी गुरुतर-गिरिवर-माल॥
मनोमोहिनी हिम-किरीटिनी प्रकृतिकी मधुशाला॥
रंग-विरंगी सुरभित-सज्जित कुसुम-क्यारियां प्यारी।
विविध-लता-लावण्यमयी तरुवरसे लिपटी न्यारी॥
कुञ्ज-कुञ्ज तरु-लता पुञ्ज भी फल सुमनावृत श्रान्त।
प्रणयिजनोंके ही-तलको वे करते मधुमय शान्त॥
क्लांत-पथिकका विरह-व्यथितका स्मृतिका लिए सहारा।
'शालामार-निशात' खड़े हैं ले इतिवृत्त हमारा॥

सरस-लता-पल्लव-सुमनोंसे सुरभित शत उद्यान।
जन-मन अनुरञ्जित करते हैं हर लेते हैं ध्यान॥
कुञ्चित-केशमयी-कामिनियां रूपराशि-अम्लान।
शुभ्र कुमुदिनी सी कर्दम-मय मलिन-वसन अज्ञान॥
काश्मीरके वन्य-कुसुम-सी जन-मन करती भ्रान्त।
चञ्चल-मीनोंसी चितवन-सी, निर्विकार औ शान्त॥
मन्द-मलय-मय-सुधा-मधुर-सी बहती नित्य समीर।
विरह-विधुर-मनको विकसित कर हरती अंतर-पीर॥
जल-मय जीवनकी रसमयता सुषमामयी अनन्य।
सुरपुरके इस जीवनका बस अनुभव ही है धन्य॥
सृष्टि-सुन्दरि-धन्य-धरणि तू, काश्मीर तू धन्य।
तेरे जन-मन-जल-स्थल द्रुम-फल धन्य और वे वन्य॥

अनुभूत योग

[लेखक — वैद्यराज श्री पं० विष्णुस्वरूपजी शास्त्री]

[लेखक आयुर्वेदके मर्मज्ञ विद्वान् एवं सिद्धहस्त चिकित्सक हैं; साथ ही विरक्त और भगवान् श्रीकृष्णके अनन्य भक्त भी। "न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम्। कामये दु:खतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्॥" इस आदर्श वाक्यके अनुसार रोगियोंकी निष्काम सेवा तथा भगवद्भक्तिका प्रचार ही आपने अपने जीवन का लक्ष्य बना रक्खा है। इस अङ्कसे 'श्रीस्वाध्याय' में आपने अपने अनुभूत प्रयोग लिखने प्रारम्भ किये हैं—जो सर्वसाधारणको अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होंगे। आशा है पाठकगण इनके प्रचार द्वारा जनता-जनार्दनकी सेवा करके शास्त्रीजीके सदुद्देश्यमें सहायक सिद्ध होंगे।—सम्पादक]

जिस देशमें जो प्राणी उत्पन्न होता है, उसके लिए उसीदेशमें उत्पन्न हुई औषधियां हितकर होती हैं; यह आयुर्वेदका एक विशेष नियम है। अपने अनुभव तथा प्राचीन ऋषियों द्वारा निर्मित ग्रन्थोंके पठन-पाठनसे यह निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि भारत औषधियोंका भण्डार है और यहांकी एक सधारण-सी जड़ी ही अनेक रोगोंके शमन करनेकी सामर्थ्य रखती है। पाश्चात्त्य चिकित्सा प्रणाली से लाभकी अपेक्षा अनेक ऐसी हानियां देखी गई हैं कि जिनका निराकरण करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। अतः सर्व साधारणके लिए कुछ शतशः अनुभूत योगोंका उल्लेख किया जाता है। आशा है 'श्रीस्वाध्याय'के पाठकवृन्द इनका प्रचार करनेमें सहायक सिद्ध होंगे। इस समय यहां कालीमिर्चके तीन प्रयोग लिखे जाते हैं—

प्रयोग (१)—५ तोले तिलोंके तैलको अग्नि पर चढ़ाकर पकालें और जब तैल पक जाय तो उसमें १ तोला काली मिर्च डालदें, जब काली मिर्च जलजायँ तो अग्निसे उतार कर उसे छान लें। यह तैल समस्त कर्ण रोगोंको दूर करता है और कई प्रकारके रक्त-विकारोंके लिए भी अत्यन्त लाभदायक है। कैसी ही भयङ्कर कर्ण पीड़ा हो इस तैलकी दो तीन बून्द कानमें डालते ही तुरन्त लाभ होता है। यदि कान बहता हो तब भी प्रातः सायं दो तीन बून्दें कानमें डालनेसे बहना बन्द हो जायगा। नित्य डालनेसे बहरापन भी दूर हो जाता है। दाद, चम्मल, खुजली पर मालिश करनेसे बड़ा लाभ होता है। इसी तैलको गर्म करके मालिश करनेसे रीह अर्थात् वायुका दर्द और चोट लगनेसे होनेवाले दर्द आदि भी दूर हो जाते हैं।

प्रयोग (२)—पावभर काली मिर्चको कूटकर सायंकालके समय चार सेर पानीमें भिगो दो। प्रातः मीठी मीठी (मन्दी) आंच पर रखकर एक सेर पानी शेष रह जाने तक पकाओ। तदनन्तर कपड़ेसे छान कर इस पानीमें दो सेर खांड डालकर जैसे इलायचीदाना बनता है उसी प्रकार इलायचीदाना बनालो। इस इलायचीदानेको मुखमें रखकर चूसनेसे श्लेष्मा (नजला-जुकाम, खांसी) तथा आंख व शिरका भारीपन और साधारण श्वास रोग (दमा) को भी बहुत लाभ होता है। भोजनोपरान्त दोनों समय इसका रस चूसनेसे पाचनशक्ति बढ़ती है। यदि किसी भाई को दमा या खांसीका कफ खुश्क होगया हो और बारबार खांसने पर भी कफ न निकलता हो तो उसे तुरन्त ये इलायचीदाना चूसनेको दीजिए, कफ निकलने लगेगा और शीघ्र आराम होगा।

प्रयोग (३)—जिस भाईको पुराना सुजाक होकरके कुर्रा पड़ गया हो तो उसको दूर करनेके लिए हमारे भाई आजीवन डाक्टरों, वैद्योंके चक्करमें पड़े रहते हैं। बहुतसे गरीब जिनके पास पैसा नहीं, वे अपने स्वास्थ्यको नष्ट करके निराश हो जाते हैं तथा शरीरसे किसी प्रकारका परिश्रम करने योग्य नहीं रहते। 'श्रीस्वाध्याय' के पाठकोंको चाहिए कि ऐसे रोगीको दो माशे कालीमिर्च पीसकर प्रतिदिन प्रातः सायं ताजा जलके साथ फंकी देवें (खिलावें) और ऐसे भयङ्कर रोगसे दुखी हुए गरीबकी अन्तरात्माका आशीर्वाद प्राप्त करें।

स्वास्थ्योपयोगी आहार-विहार

[लेखक— श्री वैद्य चन्दालालजी भट्ट]

आहार का अर्थ है प्रकृतिके अनुकूल भोजन; जो कि नियत समयमें ही पच जाय । तथा विहारमें हमारी रहन सहन सोना बैठना घूमना इत्यादि सभी बातें आ जाती हैं । यदि ये दो क्रियायें हमारी ठीक हैं तो हम स्वस्थ रहेंगे; अन्यथा रुग्ण प्राय ही रहेंगे।

इन दोनोंमेंसे इस समय मैं केवल एक भोजनकी ही विवेचना आपके समक्ष उपस्थित करता हूं । आशा है इसके प्रयोगसे जनसमुदायमें अवश्य ही स्वास्थ्य वृद्धि होगी।

अपने ३५ वर्षके अनुभवमें मैंने देखा है कि जिन रोगियोंको कुपथ्य (बदपरहेजी) करनेकी आदत होती है वे प्रायः कभी ठीक नहीं होते । इसका कारण भी विकृत आहार ही है ।

आहारके साधारण नियम

१—पहले भोजनके जीर्ण हो जाने पर सुन्दर स्थानमें अच्छे वस्त्र पहन कर मौनावस्थासे ही करना उचित है ।

२—भोजनके समय किसी प्रकारकी शीघ्रता अथवा चिन्ता शोकादि न हों ।

३—भारी पदार्थ जैसे (उड़द पिट्ठी आदि) को अपने वास्तविक भोजन (पूरे आहार) से आधा खाना चाहिए ।

४—हल्के पदार्थ भी ठूंस-ठूंस कर न खाये जाएं।

५—प्रत्येक अवस्थामें अपने पेटका एक भाग भोजनसे; एक जलसे भरकर एक भाग खाली रहे; इस प्रकार भोजन किया जाए ।

हँसना, खेलना, चलना, दौड़ना इत्यादि जितनी क्रियाएं हम दिन भरमें करते हैं; प्रायः सभीमें हमारी कुछ न कुछ शक्तिका ह्रास होता हैं; इसलिए जो कुछ हम भोजन करते हैं उसका एक बड़ा भाग उसमें व्यय हो जाता है; शेष शरीरके पनपनेमें काम आता है । अतः नित्य हमको उतना ही भोजन करना चाहिए जितनेमें सब क्रियाओंके लिए व्यय होकर भी थोड़ा भाग नित्य ही शरीरमें इकट्ठा होता रहे । इस इकट्ठा होनेवाले भागको चर्बी (मेद) कहते हैं। जब मनुष्य रोगी होनेके कारण भोजन नहीं करता या थोड़ा करता है तो सर्वप्रथम वही मेद खर्च होता है और उसके न रहने पर शरीर निर्बल हो जाता है ।

अतः हमारे भोजनमें निम्न सामग्रियां होनी नितान्त आवश्यक है—

१. कार्बो हाइड्रेट्स (यह कार्बन ओषजन तथा हाइड्रोजनके मिश्रणसे बनता है) । २. शकर । ३. स्टार्च (यह भी एक प्रकारकी शकर ही होती है)। ४. तृण या रेशे (सेल्यूलोज फाइब्रेस)। ५. तैल-पदार्थ (फैट्स)। ६. पोषक तत्त्व (विटामिन्स)।

प्रत्येक पौधोंमें इन सामग्रियोंमेंसे कुछ न कुछ सामग्रियां थोड़े बहुत परिमाणमें अवश्य पाई जाती हैं ।

ताजे फल, नीम्बू, संतरा, टमाटर तथा हरी तरकारियोंमें इनका एक बड़ा अंश होता है। दालोंमें भी ये पाये जाते हैं। अतः हमारे भोजनमें रोटीके अतिरिक्त एक दाल, एक हरी तरकारी, कुछ घृत या तैल और यथासाध्य दूध ये पदार्थ होने चाहियें।

इनके अतिरिक्त केवल यथेच्छ दुग्धसे भी इन सबका काम चल सकता है। दुग्धके गुण कहां तक कहें, केवल इतना ही कहना पर्याप्त है कि यह अमृत है। इसीलिए भारतवासियोंकी दृष्टिमें दुग्धको उत्पन्न करने वाली गायका बड़ा महत्त्व है। अस्तु ।

वारोंका क्रम

आदित्यवारके बाद सोमवार ही क्यों ?

[लेखक — सिद्धान्तपंचानन साहित्यभूषण श्री पं० केदारनाथजी राजज्यौतिषी]

प्रायः संसारके एक तृतीयांश भागमें वारगणना प्रचलित है। यह वारगणना कितने कालसे प्रचलित है और इस गणनाका प्रथम आविष्कार कब हुआ ? इत्यादि विषयोंमें युरोप तथा अन्य देशोंके विद्वानोंने कई बार विचार किया है और प्रायः स्थिर भी कर लिया है कि यह वारगणना सबसे पहिले कैल्डियन् लोगोंमें प्रचलित थी और वहां ही इसका आविष्कार होना भी संभव है। मि० लेंगस M. नामक विद्वान् Origion of humans नामकी किताबमें लिखते हैं कि यह वारक्रम ईसाके ३८०० वर्ष पूर्व कैल्डियन् लोगोंमें प्रचलित था। भारतवर्षमें यह गणना कबसे प्रारम्भ हुई इसका कोई पूर्व प्रमाण तो नहीं मिलता, किन्तु ईसाके १६०० वर्ष पूर्वके ग्रन्थोंमें इन वारों तथा बारह राशियोंके नामोंका उल्लेख नहीं मिलता। इस कारण यह कहना अनुचित न होगा कि ईसासे १६०० वर्षमें इसका प्रचार हुआ। वारगणना-प्रवृत्ति का काल निर्णय करना इस लेख का उद्देश्य नहीं है। इस कारण मैं इस विषयको यहीं छोड़ कर केवल इस बातको लिखना चाहता हूं कि आदित्यवारके बाद सोमवार ही क्यों है ? यद्यपि इस विषयमें सूर्य-सिद्धान्त भूगोलाध्यायमें लिखा है कि—

मन्दादधः क्रमेण स्युश्चतुर्था दिवसाधिपाः ॥७८॥

अर्थात् शनैश्चरसे चौथा, फिर उससे चौथा इस नियमसे कक्षाक्रमके अनुसार नीचेकी ओर गिननेसे दिनके स्वामी होते हैं। देखो (S. Laing's Human Origions. Chap. V. pp. 144. 158.) और यह श्लोक तथा यह विषय कई बार विद्वानोंकी दृष्टि में तो आया है, किन्तु इस विषयको जनसाधारणके आगे स्वच्छतासे किसीने उपस्थित नहीं किया, इस कारण मैं इस विषय पर सूर्यसिद्धान्त आदि भारत-वर्षीय संस्कृतग्रन्थोंके आधारसे कुछ लिखना चाहता हूं। यह वारक्रम होराके आधारपर है। "होरा सार्ध-द्विनाड़िका" के अनुसार २॥ घड़ी अर्थात् ६० मिनिट अथवा एक घंटेको होरा कहते हैं। यह होरा शब्द संस्कृत नहीं है, किन्तु ग्रीक है। होराइजन Horizon तथा आवर Hour शब्द होरा Hora शब्दसे बहुत सन्निहित हैं। वराहमिहिरने जो छठी शताब्दीमें हुआ था अपने बृहज्जातक नामक ग्रंथमें होरा शब्दको संस्कृत सिद्ध करनेके विषयमें यों लिखा है—

होरेत्यहोरात्र विकल्पमेके वांछन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्।

अर्थात् अहोरात्र शब्दके प्रथम अक्षर 'अ' तथा चतुर्थ अक्षर 'त्र' के निकल जानेसे होरा शब्दको कुछ लोग अहोरात्रका अपभ्रंश मानते हैं। वराह-मिहिरने इस श्लोकमें होरा शब्दके विषयमें अपनी सम्मति प्रकट नहीं की, किन्तु इसके विरुद्ध भी कुछ नहीं लिखा, इस कारण वह भी प्रायः इस उत्पत्तिसे सम्मत था। अस्तु। फलितशास्त्र होरातन्त्र, होराशास्त्र आदि नामोंसे महाभारतमें प्रसिद्ध है। वराहमिहिर लिखता है—

होरातन्त्रमहार्णवप्रतरणे भग्नोद्यमानामहम्।
स्वल्पं वृत्तविचित्रमर्थबहुलं शास्त्रप्लवं प्रारभे ॥

बृहज्जातक १ अ०

होरातंत्र रूपी समुद्रमें तैरनेसे जिनका उत्साह टूट गया है उनके लिए मैं शास्त्ररूपी नौका बनाता हूं। शास्त्ररूपी नौका छोटी इस तरहकी है जिनमें छन्द कई प्रकारके और अर्थ बहुत हैं। नौकापक्षमें नौका छोटी, गोल, सुन्दर, अर्थ बहुत (अर्थद्रव्य जिसमें अधिक हों) समुद्र पार करनेको अच्छी होती है।

वराहमिहिरने होरा शब्दका "होरेतिलग्नं भवनस्य चार्धम्" इस श्लोक खण्डसे यह अर्थ किया है कि क्रान्तिवृत्तीय राशि Todiacal Sings के आधे भागका नाम होरा है। राशियां Todiacal Sings संख्यामें १२ हैं और एक सूर्योदय होनेसे दूसरा सूर्योदय होने तकके कालमें पृथिवीका एक पूरा भ्रमण होजाता है, इस कारण क्रम क्रमसे ये बारह रशियां क्षितिज पर आजाती हैं। और वराहमिहिरके कथनानुसार एक राशिमें दो होरा होती हैं इस कारण १२ राशि = २४ होरा हुईं। राशिचक्र या क्रान्तिकवृत्तका विषुवद्रेखासे २३-२७ का कोण है। इस कारण प्रत्येक स्थान पर एक होराके उदय होनेका समय एक नहीं हो सकता। तथापि २४ होराका उदयस्थान (अर्थात् Todiacal Point) जो क्षितिज पर है वही ठीक २४ घण्टेके बाद प्रत्येक देशमें फिरसे क्षितिज पर आ जाता है। सब देशोंमें ६६ अक्षांश (66 Latetude) के भीतर पूरे २४ घण्टेमें ही यह उदय होता है। इस प्रकार मोटे हिसाबसे एक होरा एक घण्टेके बराबर सिद्ध होती है।

होराके देवता कैल्डियन् लोगोंकी अभिमत ग्रहस्थिति (Solar System) के अनुसार शनि,बृहस्पति मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध और चन्द्र ये सात ग्रह क्रमसे हैं। सूर्यसिद्धान्तमें लिखा है—

> मन्दादधः क्रमेण स्युश्चतुर्था दिवसाधिपाः।
> वर्षाधिपतयस्तद्वत्तृतीयाश्च प्रकीर्तिताः ॥७८॥
> ऊर्ध्वक्रमेण शशिनो मासानामधिपाःस्मृताः।
> होरेशाः सूर्यतनयादधोऽधः क्रमश स्तथाः ॥७६॥

इसका अर्थ यह है कि शनिश्चरसे नीचेके क्रमसे चौथे चौथे ग्रह दिनके मालिक हैं, तीसरे तीसरे ग्रह वर्षके मालिक हैं, चन्द्रमासे ऊर्ध्वक्रमसे ऊपरके ग्रहक्रमसे मासके स्वामी हैं और शनिश्चरसे नीचेके ग्रह क्रमसे होराके मालिक हैं।

यहां यह लिखना भी परमावश्यक है कि कक्षाक्रम क्या है—

> मन्दामरेज्यभूपुत्रसूर्यशुक्रेन्दुजेन्दवः।
> परिभ्रमन्त्यधोऽधःस्थाः सिद्धविद्याधरा घनाः ॥

अर्थ—मन्द-शनी, अमरेज्य-बृहस्पति, भूपुत्र-मंगल, सूर्य, शुक्र, इन्दुज-बुध, इन्दु-चन्द्रमा ये 'अधोऽधस्थाः' अर्थात् एकके नीचे एक परिभ्रमण करते हैं। और उनके नीचे सिद्ध, विद्याधर घन (मेघ) परिभ्रमण करते हैं। यहां इण्डियन् या कैल्डियन् सोलरसिस्टम (ग्रहस्थिति) और यूरोपियन सोलरसिस्टमकी तुलना की जाय तो सबसे प्रथम दो बातोंका विचार करना चाहिये। (१) भारतवर्षीय अथवा कैल्डियन् लोग पृथिवीका भ्रमण नहीं मानते। (२) हर्शल और नेपच्यून ये दोनों ग्रह जो वर्तमान सोलरसिस्टममें ग्रह माने जाते हैं, पहले अविदित थे। पृथिवीका भ्रमण न माननेके कारण युरोपियन् सोलरसिस्टममें थोड़ी विभिन्नता होगई है। किन्तु वारक्रम होरासिस्टमके आधार पर है और होरासिस्टम कैल्डियन् सोलरसिस्टमके आधार पर है। इस कारण युरोपियन और कैल्डियन् सोलरसिस्टमकी तुलना करके कैल्डियन् सोलरसिस्टमका पृथकरण आवश्यक है। हर्शल और नेपच्यून ये दोनों ग्रह तो उनको बिलकुल अविदित थे, और युरोपियन सोलरसिस्टममें भी ये दोनों ग्रह थोड़े दिनसे लिये गये हैं। इस कारण उनको तो छोड़ ही देना पड़ेगा।

इण्डियन वा कैल्डियन् सोलरसिस्टम	युरोपियन पुराना सोलरसिस्टम
शनि	शनि
बृहस्पति	बृहस्पति
मंगल	मंगल
सूर्य	पृथिवी
शुक्र	चन्द्र
चन्द्र	बुध
पृथ्वी	सूर्य

युरोपियन सोलरसिस्टममें जहां पृथ्वी है, वहां पर कैल्डियन या इण्डियन सोलरसिस्टममें सूर्य रक्खा है। और जहां सूर्य है वहां चन्द्र समेत पृथ्वी

रक्खी है। इसका एकमात्र कारण पृथ्वीका भ्रमण मानना है। अस्तु।

यहां पहले लिखा जा चुका है कि होरा १ घण्टे (Hour) की होती है। दिन रातमें २४ होरा या २४ घण्टे होते हैं। एक एक घण्टेका एक एक ग्रह देवता माना गया है। यह देवता केल्डियन् या इण्डियन-सोलर सिस्टमके ग्रहोंके क्रमसे होते हैं। कल्पना कीजिए कि शनिवार की प्रातःकाल छः बजेसे सात बजे तक एक घण्टे (Hour) का मालिक या देवता शनि है तो दूसरे घण्टे (७ बजेसे ८ बजे तक) का देवता बृहस्पति होगा, तीसरे का मङ्गल, चौथेका सूर्य, पांचवेंका शुक्र, छठेका बुध, सातवेंका चन्द्र, आठवेंका फिर शनि, नवेंका फिर बृहस्पति, दसवेंका फिर मङ्गल, ग्यारहवेंका फिर सूर्य, बारहवेंका शुक्र, तेरहवेंका बुध, चौदहवेंका चन्द्र, पन्द्रहवेंका फिर तीसरे बार शनि, सोलहवेंका बृहस्पति, सत्रहवेंका मङ्गल, अठारहवेंका सूर्य, उन्नीसवेंका शुक्र, बीसवेंका बुध, इक्कीसवेंका चन्द्र, इसी प्रकार इक्कीस घण्टेमें पूरे तीन पर्य्याय (चक्र) सात ग्रहोंकी होराओंके हुए। एवं बाईसवेंमें फिर चौथी बार शनि, तेईसवेंमें फिर चौथी बार बृहस्पति, चौबीसवेंमें फिर चौथी बार मंगल, इस प्रकार २४ घण्टे समाप्त होने पर दूसरे दिनका पहिला घण्टा यानी २४ वीं होरा मङ्गलके आगे कक्षा क्रममें सूर्यके होनेके कारण सूर्यकी होगी और सूर्योदय भी सूर्यकी होरा हीमें होगा, इस कारण उस दिनका देवता सूर्य होगा। और वह सूर्यवार (Sunday) कहलावेगा। इसी प्रकार (Sunday) के २४ घण्टोंके देवता सूर्यसे गिनने चाहिएँ। २१ घण्टे में पूरे तीन चक्र समाप्त होकर २२वें घण्टेका देवता फिर सूर्य २३वेंका फिर शुक्र, २४वेंका बुध, इसी प्रकार सूर्यवार समाप्त होकर सूर्यका उदय चन्द्रकी होरामें होगा, क्योंकि कैल्डियन् सोलर-सिस्टममें बुध के बाद चन्द्र है, इस दिनका देवता चन्द्र और इस दिनका नाम चन्द्रवार (Monday) होगा। आगे इसी क्रमसे सब दिनोंके देवता नियत होंगे।

एक होराका एक देवता जो उन लोगोंने माना था, उसीके अनुसार वे लोग उस देवताकी शुभता और अशुभताके अनुसार उस एक घण्टे अर्थात् एक होरामें काम किया करते थे। और उसको साइत (Sait) भी कहते थे। वशिष्ठसंहिता नामकी पुस्तकमें इस होराको क्षणवारके नामसे लिखा है और यह भी लिखा है कि यह होराप्रवृत्ति लङ्काके सूर्योदयसे अर्थात् जहांका अक्षांश (Latitude) वे लोग शून्य (Zero) मानते थे, होती है। इस होरा वृत्तिका नाम उन्होंने वार प्रवृत्ति रक्खा था। और हिसाब भी साथ ही जोड़ दिया था जिससे यह मालूम हो कि लंकामें सूर्योदय प्रत्येक स्थानके सूर्योदयसे कितने पूर्व या पश्चात् होता है।

वारप्रवृत्तेर्विज्ञानं क्षणवारार्थमेव हि।
अखिलेष्वपि कार्येषु दिनादिरुदयाद्भवेत्॥

इसका अर्थ यह है कि वारप्रवृत्तिका जानना केवल क्षणवार अर्थात् होराके लिए है और सब कार्मोंमें दिन आरम्भ सूर्योदयसे होता है। फिर वशिष्ठजी लिखते हैं—

प्रभाकरस्योद्गमनात् पुरे स्या—
द्वारप्रवृत्तिर्दशकन्धरस्य।
चरार्धदेशान्तरनाडिकाभि—
रूर्ध्वं तथाधोऽथ परत्र तस्मात्॥

(दशकन्धरस्य) रावणके पुर लङ्का अर्थात् जहां अक्षांश शून्य (Latitude Zero) है वार प्रवृत्ति वहां सूर्योदयसे होती है। शेष स्थानोंमें चरार्ध देशान्तर नाड़िका (Ascenstonal difference) के अनुसार पीछे और पहले वार प्रवृत्ति होती है।

नारद प्रभृतिके नामसे जितने ग्रन्थ मुहूर्तविद्याके हैं उनमें होरा निकालनेका प्रकार प्रायः सबमें है। प्रति घण्टेका एक देवता क्यों माना और उसका क्रम ग्रहोंकी कक्षाओं (Orbit) के क्रमसे क्यों माना? इसका मूल कारण पूर्ण रूपसे नहीं मिलता। अनुमान से यह प्रतीत होता है कि इस नियमका आधार शायद राशिचक्र (Zodiac) का एक अहोरात्रमें

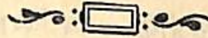
एक परिवर्तन और क्रान्तिवृत्तीय राशियों (Zodical-twelve Sings) का तथा होराओंका हरएक ग्रहका विभाग हो सकता है। अब मैं यहां अपने विचारानुसार दो कर्तव्य लिखकर इस लेखको समाप्त करता हूं।

१—कैल्डियन लोगोंको हर्शल और नेपच्यून यह दो ग्रह अज्ञात थे, इस कारण होरा गणनामें उनको स्थान नहीं मिला, इसी कारण उनका वार भी नहीं है। सो अब प्रथम कर्तव्य यह है कि इन दोनों ग्रहोंको इस क्रममें स्थान देना चाहिए। और उसीके अनुसार वार गणनामें भी, और उसीके अनुसार तीस दिनका महीना माननेवाले सूर्यसिद्धान्त आदि जिस क्रमसे होरा क्रमके आधार पर मासपति और वर्षपति मानते थे उसी क्रमसे मासके स्वामी और वर्षके अधिपति भी बनाने चाहिएँ।

२—यदि हर्शल और नेपच्यूनको स्थान न मिलता जो सिद्धान्त पृथ्वीके भ्रमण न माननेके कारण कैल्डियना सोलरसिस्टमके बारेमें किया था, और जिस क्रमके आधारसे होराक्रम और होरा क्रमके आधारसे वारक्रमकी कल्पना की थी उस सिद्धान्तके बदलनेके कारण सूर्यवारके अनन्तर मंगलवार मानना चाहिए। अथवा इस सारे झगड़ेको मिटानेके लिए युरोपियना सोलरसिस्टमके अनुसार सूर्यवार, बुधवार, शुक्रवार, पृथ्वी, चन्द्रवार, मङ्गलवार, बृहस्पतिवार, यह वारोंका क्रम मानना चाहिए। आशा है विद्याके विद्वान् इस पर विचार करेंगे।

ज्यौतिष और वेदकी एक वाक्यता

[लेखक— राजकुमार गुरु ज्यौतिषालंकार श्री पं० तारादत्तजी राज ज्यौतिषी]



कालाङ्गानि वराङ्गमाननमुरो हृत्क्रोडवासोभृतो
वस्तिर्व्यञ्जनमूरु जानुयुगले जङ्घे ततोऽङ्घ्रिद्वयम् ॥
मेषाश्वि प्रथमा नवर्क्षचरणाश्चक्रस्थिता राशयो—
राशि क्षेत्र गृहर्क्ष भानि भवनं चैकार्थ संप्रत्ययाः ॥

यह बृहज्जातकके राशिप्रभेदाध्यायका प्रथम श्लोक है। इसका सारार्थ इस प्रकार है—

चक्र-स्थित राशियोंका आरम्भ मेषराशि और अश्विनीनक्षत्रसे होता है। प्रत्येक राशिके नौ नक्षत्र-चरण होते हैं। मेष—शिर, वृष—मुख, मिथुन—वक्षःस्थल, कर्क—हृदय, सिंह—उदर, कन्या—कटि, तुला—वस्ति, वृश्चिक—लिङ्ग, धनु—ऊरु, मकर—जानु, कुम्भ—जङ्घा, मीन—चरण। ये काल-रूप परमात्माके अवयव हैं। राशि, क्षेत्र, गृह, ऋक्ष, भ, भवन ये शब्द एकार्थवाची हैं।

"नक्षत्राणि रूपम्"

यह श्रौत वचन यजुर्वेदमें उत्तर नारायणके षष्ठ मन्त्रके अन्तर्गत है। इसका अर्थ सायनाचार्यने इस प्रकार लिखा है—

नक्षत्राणि—आकाशे दृश्यमानानि (आकाशमें दिखाई देते हुए नक्षत्र) रूपम्—तव शरीर स्थानीयम् (तेरे शरीर रूप हैं)।

"हे परमात्मन्! नक्षत्र तेरे शरीरके अवयव हैं" यह इस भाष्य-लिखित अर्थका सारांश है। इस प्रकार यहां वेद तथा ज्यौतिषमें नक्षत्र परमात्माके शरीरके अवयव माने गए हैं। अतएव यहां ज्यौतिष और वेदकी एक वाक्यता है।

विराटनगर

[लेखक —ज्योतिर्विद्यामार्तण्ड श्री पं० मदनलालजी शास्त्री]



[इस लेखके लेखक ज्योतिर्विद्याके मर्मज्ञ तथा इतिहासके गम्भीर अन्वेषक एक सुयोग्य वयोवृद्ध विद्वान् हैं। विराटनगर पर 'हेमन्ताङ्क'में महामहोपाध्याय सम्मान्य श्री० पं० मथुराप्रसादजी दीक्षितने प्रथम प्रथम नवीन रूपसे प्रकाश डाला था। कुछ विद्वान् उस लेखमें उल्लिखित सिद्धान्तसे मतभेद रखते हैं, जिनमें से श्री पं० दशरथ शर्मा एम० ए०का एक छोटा सा लेख 'वसन्ताङ्क'में प्रकाशित हो चुका है। श्री० दीक्षितजीके मतसे विरुद्ध मत पर प्रकाश डालनेवाला विस्तृत सारगर्भित लेख इस ग्रीष्माङ्कमें भी आ रहा है। श्रीस्वाध्यायके प्रेमी पाठक इसका भी शान्त चित्तसे मनन करें। विद्वान् लेखकने अपने मतकी पुष्टिके लिए जो प्रमाण उपस्थित किए हैं उन सभीका उत्तरदायित्व योग्य लेखक पर ही है। किन्तु इस बातका अवश्य ध्यान रखना होगा कि यह लेख भी कोई साधारण नहीं है; इसमें भी गम्भीरतासे अन्वेषण किया गया है। इसके सम्बन्धमें हम अपना मत अभी कोई प्रकट नहीं कर सकते। जो विद्वान् प्रस्तुत विषय पर गम्भीर अध्ययन कर चुके हैं वे यदि अपना मत भेजनेकी कृपा करेंगे तो 'श्रीस्वाध्याय' उसे भी सहर्ष प्रकाशित करेगा। —सम्पादक]

श्रीस्वाध्यायके हेमन्ताङ्कमें महामहोपाध्याय श्री० मथुराप्रसादजी दीक्षितने विराटनगरके ऊपर जो प्रकाश डाला है उनका यह कार्य सराहनीय है, परन्तु दीक्षितजीने जिन आधारोंपर विराटनगरका स्थान निश्चय करनेका उपक्रम किया है, वह दीक्षितजीके पाण्डित्यके अनुरूप नहीं रहा।

दीक्षितजीका मन्तव्य है कि माधवरावजी सप्रे, हिन्दी विश्वकोषके सम्पादक और महामहोपाध्याय गौरीशङ्कर हीराचन्दजी ओझाने जो जयपुर प्रान्तमें मत्स्यदेश और विराटनगर लिखा है वह इस प्रान्तमें न होकर अम्बाला कालिका प्रान्तमें है।

दीक्षितजीका विचार है कि लोगोंने महाभारतको अच्छी तरह न देख कर जयपुर प्रान्तमें मत्स्य और विराटको भ्रमसे लिख दिया है और इसकी सिद्धिके लिये उद्योगपर्व अध्याय ५० श्लो० ४० व ५० से विराटराजको उत्तरका राजा निश्चय करनेका असफल प्रयत्न किया है। मत्स्य और विराटनगरको इन्द्रप्रस्थ से उत्तरमें ठहरानेके लिये उनका उपर्युक्त प्रयास है, इस पर आगे लिखेंगे। दीक्षितजीको महाभारत आदिपर्व अध्याय १४६ को देखना उचित था, वहां विराटनगरको मत्स्योंकी राजधानी लिखा है। आगे जिस उपप्लव नगरमें पाण्डवोंने युद्धकी तैयारी की थी, उसको विराटके उत्तर और इन्द्रप्रस्थके दक्षिणमें बताया है। पाठक विचार करें कि उपप्लव इन्द्रप्रस्थ से दक्षिणमें है और विराट उपप्लवसे भी दक्षिण है, तब विराट इन्द्रप्रस्थसे उत्तर किस प्रकार हो सकता है? कदापि नहीं। आगे दीक्षितजीने हिन्दी महाभारत समालोचना पृष्ठ ४१० में जो देशोंकी सूची दी है, उससे भी अपने पक्षको अर्थात् विराटको इन्द्रप्रस्थसे उत्तरमें सिद्ध करनेके लिए सापेक्ष शब्दमें विवाद उपस्थित किया है वह भी निरर्थक ही है। प्रत्युत सापेक्ष शब्दसे भी (महाभारतमीमांसाकारके मतसे भी) विराट इन्द्रप्रस्थसे दक्षिण ही सिद्ध होता है। महाभारत मीमांसा पृष्ठ ४१० में जो देशोंकी सूची दी है उसके ऊपर मोटे अक्षरोंमें लिखा है "आर्यभागके अथवा उत्तर ओरके देश"। मीमांसाकारने आर्यभाग लिख कर यह बतलाया है कि विन्ध्याचलपर्वतके उत्तर ओरके देश। क्योंकि मीमांसा लिखनेका स्थान पूना है जो विन्ध्याचलसे दक्षिण है। इसीलिये मीमांसामें विराटको उत्तरमें लिखा है। वास्तवमें मत्स्य और विराट मध्यके देश हैं, जो जयपुर प्रान्त में आते हैं।

आगे दीक्षितजीने उद्योगपर्व अ० १६ श्लो० १२

में जो "पर्वतीयैः" शब्द आया है उससे विराटराजको उत्तरका राजा मान कर अम्बालासे कालिका शिमला तक उत्तरमें उनके राज्यको फैला हुआ माना है। वह भी विचार करनेसे ठीक प्रतीत नहीं होता। क्योंकि "विराट नरेश अपने पक्षके पर्वतीय राजाओंको साथ लेकर पाण्डवोंके पास गये थे"। इतनेसे ही वे उत्तर के नहीं हो सकते। आजकल अमेरिकन यूरुपियन और चीनी एक स्थान पर अमेरिकन सेनापतिकी कमानमें आकर चीनी अमेरिकन और अमेरिकन चीनी नहीं हो सकते, इसी प्रकार वहां भी विराट उत्तरके नहीं हो सकते हैं।

आगे दीक्षितजीने म० भा० उ० प० अ० ५० श्लो० ४० व ५० के उद्धरणसे मत्स्यदेश तथा विराट-नगरको देहलीसे उत्तरकी ओर और विराट नरेशको उत्तरकी ओरके राजाओंमें बताया है, सो भी महाभारतके उस स्थलसे सिद्ध नहीं होता। उस अध्यायके श्लोक—

४० में विराटका नाम है
४१ में काशिराजका
४२ में द्रुपदके पुत्रका
४३ में अभिमन्युका
४४ में धृष्टद्युम्नका
४५ में धृष्टद्युम्नके पुत्रका
४६ में वासुदेवका
४७ में करभ शरभका
४८ में सहदेव जयत्सेनका
४९ में द्रुपदका नाम लिख कर—

आगे "एतेचान्ये च बहवः प्राच्योदीच्या महीक्षितः" श्लोक है। "एते" ऊपर कहे हुए और बहुतसे प्राच्य और उदीच्यके महीपाल उपस्थित हैं, अर्थात् ऊपर कहे हुये राजाओंके अतिरिक्त पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तरके और राजा भी वहां उपस्थित हैं। ऐसा सञ्जय ने कहा। इस कथनसे विराट उत्तरके नहीं ठहरते। दीक्षितजीने प्राच्य उदीच्यकी जो व्याख्या की है वह ठीक नहीं है, कोषकार लिखते हैं—

लोकोऽयं भारतं वर्षं शरावत्यास्तु योऽवधेः।
देशः प्राग्दक्षिणः प्राच्य उदीच्यः पश्चिमोत्तरः॥

इसकी व्याख्या करते हुए भानुजी दीक्षित लिखते हैं—

प्राच्यः शरावत्या नद्या मर्यादायाः प्राग्दक्षिणदेशे।
उदीच्यः शरावत्याः पश्चिमोत्तर देशे॥

मत्स्यपुराण भुवन-कोशवर्णनमें प्राच्यदेशके सम्बन्धमें यों लिखा है—

अङ्गा वङ्गा मसूरका इत्यारभ्य साल्वा मागधगोनर्दाः
प्राच्या जनपदाः स्मृताः।

उदीच्यदेशके सम्बन्धमें यों लिखा है—

वाह्लीका वाटधानाश्च इत्यारभ्य—"सैन्काः सह साकुजैः।
एते देशा उदीच्यास्तु पुराणे मत्स्यसंज्ञके॥"

मध्यदेशके सम्बन्धमें यों लिखा है—

तास्विमे कुरुपांचालारनल्वाश्चैव जाङ्गलाः।
तरसेना भद्रकाशा बोधाः सहपटचराः॥
मत्स्याः किराताः कुल्याश्च कुन्तलाः काशिकोशलाः।
आवन्त्यश्च पुलिन्दाश्च स्तकाश्चैवान्वकैस्सह॥
मध्यदेश्या जनपदाः प्रायशः परिकीर्तिताः।

इस प्रकार प्राच्य उदीच्य और मध्यके देश व्यासजीने लिखे हैं, तब उदीच्य शब्दसे भी विराट उत्तर ओरके नहीं ठहरते, अपितु मध्यदेशके सिद्ध होते हैं। मध्यदेशकी सीमा निम्नलिखित है—

हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विनशनादपि।
प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः॥

हिमालय और विंध्याचलका मध्य, कुरुक्षेत्रसे पूर्व और प्रयागसे पश्चिमका भूभाग मध्यदेश कहा है। इसमें अम्बाला शिमला प्रान्त आता ही नहीं तब विराटका उस प्रान्तमें होना कदापि सम्भव नहीं। अम्बालाप्रान्तको मनुने ब्रह्मावर्त्तमें लिखा है—

सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्त्तं प्रचक्षते॥

ब्रह्मावर्त्तके अनन्तर मनुने ब्रह्मर्षिदेशका उल्लेख किया है उसमें मत्स्यदेशकी गणना की है। यथा—

कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पंचालाः शूरसेनकाः ।
एष ब्रह्मर्षिदेशो वै ब्रह्मावर्त्तादनन्तरः ॥

जब मत्स्यदेशको ब्रह्मावर्त्त के अनन्तर पञ्चाल और शूरसेन (मथुराप्रान्त) के साथ कहा है तब अम्बाला प्रान्त मत्स्यदेश और विराट नहीं होसकता।

प्र० नं० ५ में दीक्षितजीने पाण्डवोंके अज्ञातवास के मार्गसे जो सगर्व अम्बालाप्रान्तमें विराटको सिद्ध करना चाहा वह भी युक्तियुक्त नहीं।

महाभारत विराटपर्वमें अज्ञातवासके लिये जाने का मार्ग इस प्रकार लिखा है कि—"पाण्डव यमुनाके दक्षिणतट पर चले, वहांसे दशार्णदेशकी उत्तर और पाञ्चालकी दक्षिणसीमासे निकलकर शूरसेन और यकृल्लोमकी सीमाको लांघते हुए विराटके राज्यमें पहुंचे।"

"श्रीस्वाध्याय"के वसन्ताङ्कमें श्री पं० दशरथ शर्म्मा जीने इसीका उल्लेख किया है, उससे भी सिद्ध होता है कि दीक्षितजीका निर्णय भ्रममूलक है। पाण्डवोंके अज्ञातवासके मार्गमें दशार्ण, पञ्चाल, शूरसेन, यकृल्लोम का नाम है, इसके पीछे विराटमें प्रवेश होना व्यासजी ने लिखा है।

दशार्ण—विन्ध्यके दक्षिणपूर्वकी ओर (पूर्वी-मालवा)।

पञ्चाल—पंजाब नहीं है, महाभारतमें हिमालयकी तराईसे लेकर चम्बल तक पञ्चालका उल्लेख है।

शूरसेन—मथुरा प्रान्त।

यकृल्लोम—पलवलसे ले सारा हरियाणाप्रान्त है।

उसके बाद मत्स्य और विराट है जो जयपुर प्रान्त ही में है।

विराटकी सीमा शक्तिसङ्गममें इस प्रकार है—

वैदर्भदेशादूर्ध्वं च इन्द्रप्रस्थाच्च दक्षिणे ।
मरुदेशात्पूर्वभागे विराटः परिकीर्तितः ॥

निष्कर्ष यह है कि इन्द्रप्रस्थसे दक्षिणकी ओर, जयपुर राज्यका उत्तरीय भाग और अलवरका दक्षिण-पश्चिम भाग विराट है। जयपुरकी सीमा जो अलवर राज्यकी निजामत थाना गाजीसे मिलती है उसी भागमें विराट नगरका ध्वंसावशेष वैराट ग्राम है। उसीके पास पाण्डुडूङ्गरी नामक पर्वतमें भीम-गुफा नामक स्थान है, इसके आसपास और भी बहुत से स्थान हैं, जिनका सम्बन्ध पाण्डवोंके अज्ञातवास से है। वहीं अलवरकी सीमामें पाण्डुपोल और नील-कंठ महादेव हैं, जिसको युधिष्ठिरका स्थापित किया मानते हैं।

फिरस्ताने लिखा है कि ई० सन् १०२२ में अमीरअलीने इसी विराटनगर पर चढ़ाई की थी, उसको वहां अशोकका शिलालेख मिला था जो अब कलकत्तामें विद्यमान है।

चीनी परिव्राजक यूशां चूयंगने ईसाकी ७वीं शताब्दीमें इसी विराटनगरका वर्णन अपनी परि-भ्रमण पुस्तकमें दिया है।

मुहम्मद गजनीने ई० सन् १००६ में इसी विराट नगर पर आक्रमण किया था।

इसी विराटका उल्लेख आईने अकबरीमें भी है।

इसी विराटको ज्योतिषमें मध्यरेखा पर लिखा है।

उपर्युक्त विचारोंसे जयपुर राज्यान्तर्गत जो विराटका ध्वंसावशेष वैराट है वही मत्स्यदेशान्तर्गत विराटराजकी राजधानी पाण्डवोंके अज्ञातवासका विराटनगर है।



पौराणिक ऐतिह्य विवेचन

[लेखक — "कश्चित् उज्जयिनीस्थ"]

[इस लेखमें विद्वान् लेखकने पौराणिक-इतिहास पर गम्भीर अन्वेषण करके अपने परिमार्जित मौलिक विचार व्यक्त किये हैं—जो प्राचीन भारतीय संस्कृति, सभ्यता, भाषा, देश, जाति, राजवंश और आर्योंके मूल निवासस्थान आदि कई महत्त्वपूर्ण विषयोंकी वस्तुस्थितिके सन्निकट ले जानेमें सहायक सिद्ध होंगे। यह लेख बहुत विस्तृत एवं सारगर्भित है, अतः 'श्रीस्वाध्याय'के आगामी ३--४ अङ्कोंमें क्रमशः प्रकाशित होता रहेगा। यहां केवल आरम्भिक उपक्रम मात्र दिया जा रहा है। अग्रिम सामग्री इतिहास प्रेमियोंके लिए एक अत्यन्त उपादेय स्थाई एवं ज्ञानवर्द्धक वस्तु होगी। आशा है प्रेमी पाठक आगामी अङ्कोंमें इस पूरे लेखका गम्भीरताके साथ मनन करेंगे। —सम्पादक]

पौराणिक इतिहास—

कहा जाता है कि यूरोपके विचारों पर जैसे अभी तक 'प्लेटो' शासन कर रहा है। ठीक उसी प्रकार हमारे पश्चिमकी शिक्षासे भरे हुए दिमागों पर वह प्रसिद्ध मेकोलेकी मिनिट (नोट) अभी तक प्रभाव डाल रही है। इस 'मिनिट' ने भारतका भविष्य तो नष्ट नहीं किया, किन्तु इसकी आरम्भ की हुई शिक्षाके प्रभाव सर्वथा असत्य भी नहीं हुए हैं। उसी शिक्षाको लेकर हम अपना भूतकाल देखने और समझने योग्य हुए हैं। हमें पहले पश्चिमके मोहमें डाला गया, फिर भी इस शिक्षाने बुद्धि स्वातन्त्र्यका एक ऐसा बीजारोपण किया है कि जिसके परिणामसे पश्चिमके दोष और हमारे अपने गुण भी इसी शिक्षा के उघाड़े हुए नेत्रोंसे हम देखने लगे हैं; यह कहना अनुचित नहीं।

इस समय हम पश्चिमकी वर्तमान संस्कृतिके सामने अपनी प्राचीन और सादी एवं आत्मबलसे चमकती हुई जीवन व्यवस्था रख रहे हैं। अथवा महावीर स्वामी या बुद्ध भगवान्के उपदेशका सम्मान हिन्दू धर्मके ही एक विभागके तौर पर कर सकते हैं। अथवा मौर्य और गुप्त राज्योंका विस्तार जान कर वा हर्षवर्द्धनकी उदार धर्मनीति देख कर तथा प्राचीन और मध्यकालीन भारतके व्यापार-उद्योगकी परमोज्वलताका स्मरण कर हमारे स्वदेशाभिमानकी ज्योति जगाते हैं तो वह मैकोलेकी आरम्भकी हुई नई शिक्षा का ही परिणाम है। यह भूलने जैसी बात नहीं। मेकोलेकी दृष्टि भी उनके समयके धर्मसे नियन्त्रित थी। हमारे शास्त्रकार कहते हैं कि युग-युगके धर्म भिन्न होते हैं; और यह कहना सत्य है। उस 'धर्म' शब्दके दोनों अर्थोंमें युग-युगके कर्तव्य भिन्न हैं— इतना ही नहीं, किन्तु इसके स्वाभाविक लक्षण भी पृथक् हैं। जिसके कारण कर्तव्य भी भिन्न पड़ते हैं। मेकोलेके रचित पुराणके उपहासके उत्तरमें पुराण का सत्यार्थप्रकाश रचा गया—खिस्तीधर्मके ही रणक्षेत्र में खिस्ती धर्मका सामना कर सकें ऐसी शक्ति जिस बुद्धि पर खिस्तीधर्मका प्रबल प्रभाव होने लगा था, उसी बुद्धिको संतुष्ट कर सके ऐसे प्रमाणकी आवश्यकता है। इससे स्वाभाविक रीतिसे ही जानबूझ कर साध्य-साधनकी योजनापूर्वक नहीं, किन्तु स्वाभाविक रीतिसे ही ब्राह्मधर्मके संस्थापक और आद्यप्रवर्तकों की ओरसे उपनिषद्का पुरस्कार हुआ। किन्तु ब्राह्म धर्मके पीछेके अनुयायी क्रमशः हिन्दूधर्मके स्थानसे सर्व धर्ममेंसे सामान्य तत्त्व निकाल कर, उनके पूज्य हुए। और यह स्थिति भी बहुत दिनों तक चली। गत ईसवी शतकके तृतीय चरणके अंतमें दयानन्द सरस्वतीने हिन्दूधर्मके रक्षणके लिए महान् प्रयत्न किए, उसमें वेदका प्रामाण्य बहुत जोरसे प्रतिपादित किया। किन्तु उन्होंने जो कार्यारम्भ किया था उसमें पुराण प्रतिकूलता आनेसे उसका विरोध हुआ। इस समय भी पुराणोंके प्रति 'मेकोले' की शिक्षासे शिक्षित हिन्दुओंकी वृत्ति पृथक् नहीं है, यह सामान्यतः कहा

जा सकता है। इस समयके अंगरेजी शिक्षासे संस्कारित बहुतसे हिन्दू उपनिषद्, गीता या शांकर-भाष्य पर ममत्व दिखाएंगे, किन्तु उनमेंसे कितने थोड़े हैं जो श्रीमद्‌भागवत्‌की महत्ता स्वीकार करेंगे?

वस्तुतः पुराणोंके जितना अन्याय जगत्‌में शायद ही किन्हीं अन्य धार्मिक ग्रंथोंका हुआ हो! अधिक निश्चयपूर्वक कहें तो पुराणोंके दोषोंके साथ न्याय हुआ है; किन्तु इनके गुणोंके प्रति अन्याय हुआ है। थियासोफिकल सोसाइटीने पुराणोंके प्रति प्रेम जागृत किया है किन्तु वह अधिकांश इसके मन्वन्तर कथाओं भरको ही। इस समय तो पुराणों और तत्सम्भूत तंत्रोंकी प्रतिष्ठा करके इसकी महिमा जगत्‌के समक्ष रखनेका मान कलकत्ता हाईकोर्टके दो भूतपूर्व अंग-रेज जजोंको है, एक मि० जस्टिस वूड्राफ और दूसरे मि० जस्टिस पार्जिटर। मि० वूडराफने तंत्रोंका तत्त्वज्ञान बहुत सुन्दर और वस्तुगतश्रद्धासे प्रतिपादित किया है। मि० पार्जिटरने पुराणोंके अंतर्गत इतिहास को सश्रम ढूंढ निकाला है और इसकी प्रामाणिकता के लिए सुदृढ़ समर्थन भी किया है। तथा उसके आधार पर अभी तकके स्थापित और सर्वमान्य हुए कितने ही ऐतिहासिक निर्णयों पर भी प्रभाव डाला है।

मि० रमेशचन्द्र दत्तोने अपनी "प्राचीन भारतीय संस्कृति" नामक पुस्तकमें विष्णुपुराणसे दी हुई कलि-कालके राजाओंकी वंशावलिका उपयोग किया था। इसके बाद विसेण्टस्मिथने भी १९०२ में भारतके प्राचीन इतिहासके प्रमाणोंमें पुराणोंको गिनाकर उसमें से विशेषकर विष्णु-वायु-मत्स्य पुराणका इसी वंशावलिके लिए आधार लिया था; किन्तु पुराणोंमें कलिकालके राजाओंकी वंशावलि सम्बन्धी जितने वचन हैं वे सब एकत्र कर पाठकोंके आगे उपस्थित करनेका और इस सम्बन्धी अपने दीर्घ अभ्यासका प्रकट करनेका प्रथम सम्मान मि० पार्जिटरने १९१३ में प्राप्त किया था। किन्तु उतनेसे ही भारतके प्राचीन इतिहास सम्बन्धी सिद्धान्तोंमें कुछ फेरफार नहीं हुआ। उसके बाद अभी कुछ वर्ष पहले, १९३२ में प्रकट हुए उनके "The Ancient Indian Historical Tradition नामक पुस्तकने भारतके प्राचीन इतिहासके क्षेत्रमें बहुत श्रमपूर्वक निर्माण की हुई कुछ सुदृढ़ अट्टालिकाओं पर महान् आक्रमण किये हैं। इससे ये अट्टालिकाएं धराशायी हो गईं ऐसा तो अभी नहीं कहा जा सकता, किन्तु सुदृढ़ भवनोंकी भित्तियों में भी दरारें अवश्य पड़ी हैं इतना तो कहा जा सकता है। इन विद्वानोंके इस प्रकार कितने ही महत्त्वके प्रतिपादन आपके सामने रखनेका, तथा इस सम्बन्धमें अपना विचार प्रदर्शन करनेका इस लेखका उद्देश्य है।

—*—

विक्रम द्विसहस्राब्दी महोत्सवकी रूप-रेखा

[यह रूप-रेखा विक्रम द्वि-सहस्राब्दी महोत्सवके आयोजन मनानेवाली उज्जैनकी इतिहास संशोधन सभाकी ओरसे प्रकट है, आने वाले इस महोत्सवके सर्व-व्यापी महत्त्वपूर्ण कार्य-क्रम पर हम सभी संस्थाओं, राज्यों और देशके प्रमुख पुरुषोंका ध्यान इस ओर आकर्षित करते हैं। —सम्पादक]

अब यह समय शीघ्र ही निकट आरहा है कि विक्रम संवत्के दो हजार वर्ष पूर्ण होंगे, (अर्थात् सं० २००० के कार्तिकशुद्ध प्रतिपदासे) स्थानीय इतिहासानुसन्धान समिति यत्नशील है कि विश्व-विख्यात विक्रमादित्यकी साम्राज्यधानीका गौरव प्राप्त करने वाली उज्जैन नगरीमें द्विसहस्राब्दी महोत्सव बृहद् समारोहके साथ सम्पन्न किया जाय।

इस समय यदि ऐतिहासिक कल्पनान्वेषण शक्ति के आधार पर, भारतके इस महनीय कीर्त्ति विक्रमादित्यकी तेजोमय प्रतिभा और वैभवका यथोचित प्रमाणपूर्ण चित्र रेखाङ्कित किया जा सके, तो आशा है कि एक सुन्दर कार्य हो सकेगा।

विवादास्पद विषयको उठानेका न तो यह समय है, न इतना दीर्घ अवकाश, किन्तु इतना स्पष्ट है कि जिस विक्रमादित्यका पवित्र नाम संवत् प्रवर्त्तकके रूपमें जगविश्रुत है, वह अतुलित सामर्थ्यशाली रहा है, जगद्विजयी रहा है, सर्व शास्त्रों और कलाओंका पुरस्कर्ता एवं आश्रयदाता रहा है, किसी भी कालमें क्यों न हो उसका युग सरस्वतीका लीलानिकेतन, विद्वज्जनोंकी प्रतिभाका विकास युग रहा है। इसी प्रकार कालिदास और विक्रम यह नाम 'अद्वैत' होकर सर्वव्यापी बने हुए हैं, उसकी राजधानी महानगरी अवन्तिका ही थी, उस समय आर्य-संस्कृतिके कल्याणकारी किरण गगन मध्यवर्ती विक्रमार्कके प्रभामण्डलसे विकसित होकर साम्राज्यके बाहर भी चतुर्दिक् तेजोराशिसे आलोकमय बना रहे थे; वह इतिहासका सुवर्णकाल,—मध्यभारतके इस महामानवका निर्मित काल था। उस कालका संस्मरण आज जब दो हजार वर्ष पूरे होने जा रहे हैं,—आवश्यक-पवित्र-पर्वकाल है।

द्विसहस्राब्दी मनानेमें हमारा हेतु 'विभूतिपूजन' होते हुए भी इस युगमें जबकि विभिन्न संस्कृतियोंका परस्पर संघर्ष हो रहा है, 'न्यू ऑर्डर' (नव-विधान) की पुकार मच रही है, यह आवश्यक है कि हम एक 'आर्य-संस्कृति' जो हमारी पैतृक है, सुरक्षित रखनेका कर्तव्य करें। उत्सव मनानेमें यही हमारा मुख्य ध्येय है।

हमारी सांस्कृतिक व्यवस्था सर्वथा नई नहीं बनेगी। किन्तु भय है कि जब विशेष घटनाओंके कारण सार्वत्रिक विचारोंमें क्रान्तिकारक परिवर्तन हो रहे हैं,— विभिन्न सांस्कृतिक-विचार, शास्त्रोंके साथ जगन्नियन्ताकी महान् रथ-यात्रा निकली है, तब कहीं हमारे जागरणके अभावमें हमारी प्रिय संस्कृति, सुधारके रथचक्रोंके नीचे दबकर कुचली न जावे। हमारी नवीन व्यवस्था प्राचीन संस्कृतिके पुनरुज्जीवन से और उसके आदि वैभवकी पुनः स्थापनासे ही रक्षित रहेगी। अनेक सुधारणाएं आईं और चली गईं, कई साम्राज्य वैभव सूर्यके साथ चमक कर अस्तङ्गत हो गए, हमारा उनके साथ विस्खलन बालुकासे आवृत किनारेकी तरह हो गया हो, और हमारी संस्कृतिकी धवल-धारा शिथिल और शैवाल व्याप्त हो गई हो, तथापि वह आज निरन्तर प्रवहमान है! इस पुरातन राष्ट्रिय-भावनाकी पुनः प्रतिष्ठा-सुवर्णयुगकी परम्पराका पुनः सूर्योदय, और अतीत युगके जीवनका आलोक पुनः प्राप्त करनेके लिए ही विक्रमादित्यका पुण्य-स्मरण करना परमावश्यक है।

इस समयके लिए संशोधन सभाने जिन प्रयोगात्मक कार्यक्रमकी संक्षिप्त रूप-रेखा निश्चित की है वह इस प्रकार है—

१— **विक्रम विश्वविद्यालय** की स्थापना जिसमें

राष्ट्रभाषा हिन्दीके माध्यम द्वारा शिक्षण देकर आर्य-संस्कृतिका गौरव प्रस्थापित करना।

यह विश्वविद्यालय अवन्तिका (उज्जैन) ही में हो, क्योंकि उज्जैन भारतका पुराकालसे सांस्कृतिक-केन्द्र रहा है। भगवान् श्रीकृष्णने इसी नगरीमें अध्ययन-कर इसका गौरव बढ़ाया है, प्राचीन-विद्या-कला-वैभवका यह पवित्र केन्द्र-स्थानीय भू-भाग है। प्राकृतिक, भौगोलिक और ऐतिहासिक परम्पराके कारण भी विश्वविद्यालयके लिए यही सर्वाधिक महत्त्वका स्थान है।

२—इसी प्रकार एक विक्रम प्राच्य-साहित्य संस्था (विक्रम ओरिएण्टल इन्स्टीट्यूट) की स्थापना की जाय, जिसमें एक—

(अ) संग्रहालय (म्यूज़ियम) हो, जो इस प्रान्तके सभी ऐतिहासिक साधन-सामग्रीको सुरक्षित रख सके, इसीके अन्तर्गत—

(ब) ज्योतिर्विद्याके संशोधन, ग्रहगति जानने आदिका कार्य होता रहे।

(स) एक प्राचीन ग्रन्थ-पत्रोंका संग्रहालय हो, जिसमें पुरातन साहित्यका संशोधन हो, प्रकाशन हो, और इस संस्थासे एक संशोधक त्रैमासिकका प्रकाशन भी होता रहे।

(ड) तीसरा इतिहास संशोधन समितिका कार्य इसीमें हो, जिसमें कालिदास विक्रमके समस्त साहित्यका संग्रह और उनका अनुसन्धान होता रहे, भूगर्भ-शोधन और उसका 'रिसर्च' कार्य इसके द्वारा सम्पन्न हो।

(ई) आधुनिक संस्कृतकी एक ऐसी विशाल लाइब्रेरी स्थापित हो, जिसमें जगत्के प्राचीन साहित्य प्रकाशनका सुन्दर संग्रह अपने ढङ्गका बस एक ही हो। इनके लिए एक विशाल नवीन स्थापत्यकलाके सर्वथा अनुरूप भवन हो और इन संस्थाओंका उसमें समावेश रहे।

(१)—इस कार्यक्रमके अतिरिक्त एक 'विक्रम-विजय-स्तम्भ'की स्थापना की जावे, जो कि महान् विक्रमादित्यके दो सहस्र वर्षकी (विजय महोत्सवकी) स्मृतिमें हो, यह स्तम्भ अवन्तिकाके प्राचीन ऐतिहासिक भूभाग पर हो, इसके स्वरूपका निर्णय एक विद्वत्समिति करेगी।

(२)—इसी प्रकार इस समय विशेष रूपसे एक ग्रन्थका प्रकाशन हो, जिसका नाम 'विक्रम द्विसहस्राब्दी अभिनन्दन ग्रन्थ' रहे। इस ग्रन्थमें विक्रम और विक्रम कालीन, कला साहित्य आदि पर इन दो हजार वर्षमें हुए क्रम विकास पर अधिकारी विद्वानोंके सहयोगसे प्रकाश डाला जावे। और अपूर्व वस्तु स्मृति स्वरूप प्रकाशमें लाई जावे। यह ग्रन्थ एक प्रकारसे सुन्दर स्मारक संग्रहके रूपमें कलाका उत्कृष्ट नमूना बनाया जावेगा।

जिस समय यह उत्सव मनाया जावे उस समय वह उत्सव स्थल प्राचीन उज्जयिनीके रूपमें (अस्थायि रूपमें) प्रदर्शित हो जिसके निर्माणमें विक्रम कालीन कला, और शैलीका अनुसरण किया जावेगा। विक्रम-कालीन कला और वस्तुओंका तत्सम्बन्धी साहित्यका विशाल प्रदर्शन होगा (प्राचीन अवन्तिकाका एक चित्र ही प्रत्यक्ष नेत्रके सम्मुख आजावे इस प्रकार उत्सवकी योजना की जावेगी) उस समय विक्रम कालिदासकी नवरत्न-सभा, इनके साहित्य पर विद्वानोंके भाषण, अनुसन्धानात्मक निबन्ध, चर्चा, अभिनय, कला-कौशल,उस कालके काव्य साहित्यका प्रवचन, पराक्रम प्रदर्शक खेल, बालक-बालिकाओं तथा सैनिक प्रदर्शन, वीर पूजाके आयोजन आदि गम्भीर-एवं रोचक कार्य-क्रम करना है।

उत्सव सभागृह (पण्डाल) दो हजार वर्ष पूर्व की कलाका स्मारक स्वरूप बनाया जाकर उसके चतुर्दिक्में दीपक-स्तम्भ निर्माण किए जाएंगे, जो पण्डाल ही नहीं समस्त उत्सव नगरको प्रकाशसे स्नान कराते रहेंगे। भारतसे लेकर सभी देशोंके विशिष्ट पुरुषोंको इस समय आमन्त्रित किया जायगा। और महान् आयोजनके स्वरूपमें यह महोत्सव सम्पादित होगा। देश-विदेशकी सभी प्रकारकी संस्था और राज्योंको अपने प्रतिनिधि द्वारा—विक्रमादित्य

दुर्गा दुर्गति-नाशिनी

[लेखक—श्री पं० निरंजन शर्मा अजित भू० पू० सम्पादक श्रीवेंकटेश्वर समाचार]



[लेखककी विद्वत्ता और देशसेवासे हिन्दी संसार भलीभांति परिचित है। आपने श्रीवेंकटेश्वर समाचार आदि कई सुप्रसिद्ध पत्रोंका सम्पादन बड़ी योग्यतासे किया है। आने वाले नवरात्र महोत्सवके उपलक्ष्यमें आपका यह उपादेय लेख हम पाठकोंको भेंट कर रहे हैं। —सम्पादक]

हिन्दू धर्मग्रन्थोंकी छानबीन करनेसे विदित होता है कि कदाचित् शाक्त-धर्म ही सर्वोपरि और सर्व-प्रथम धर्म भारतमें प्रचलित था। इस समय शाक्त-धर्मके नामसे लोग चिढ़ते हैं। पर किसी समय सब इसके अनुयायी थे। इसका कारण कुछ तो यह है कि इस मतके मान्य ग्रन्थों तकमें बहुत काफी मिलावट कर दी गई है—(कुछ स्वार्थियों और दुराचारियोंने की है तो कुछ भ्रममें पड़े हुए तथा बहकाए हुए लोगोंने की है) और कुछ यह है कि आत्मजगत्के सूक्ष्म सिद्धान्तों और तत्त्वोंके उन अंशोंसे इसकी परिपुष्टि और स्थापना हुई है जिनका रहस्य और महत्त्व बाह्य दृष्टि रखने वाले कदापि नहीं समझ सकते। वह सब रहस्य और महत्त्वमय साधन एवं सिद्धान्त अनधिकारियोंके लिए नहीं हैं। वह बाह्य-दृष्टिसे जैसे प्रतीत होते हैं सूक्ष्मदर्शीको उससे नितान्त भिन्न दिखाई देते हैं।

शाक्तधर्म मन्त्रशक्ति और आत्मसिद्धिका स्रोत है। मन्त्रशक्ति क्या वस्तु है? यह बात शक्तिके उपासक और कृपापात्र भक्त ही जानते हैं "दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति" इस ओर ही घटित होता है।

धूर्तोंने कुछ समझाया है; नीचोंने कुछ समझा है; पर वास्तवमें क्या है, यह बात वही जानते हैं जिनके लिए कहा गया है कि—"कोई-कोई साधू रह गए कीलीमानी पास।"

मन्त्र जप और उसकी सिद्धिके सम्बन्धमें आज कितना प्रमाद फैल रहा है। जो लोग जप तप करने बैठते हैं, जो विद्वान् माने जाते हैं, जो गुणी गिने जाते हैं, जिन्हें अपनी विद्वत्ताका बतङ्गड़ बनाना आता और भाता है और जिन पर सैंकड़ों आदमी विश्वास रखते हैं वे सब भी तो आज अति सामान्य नियमोपनियमोंका ज्ञान नहीं रखते हैं। साधारणतः संकल्प और समर्पणका निर्वाह भी तो कोई नहीं करता है। इस प्रमादके फलस्वरूप मन्त्र शक्ति रहित मालूम पड़ने हैं। जप-तप फल-विहीन दिखाई देता है। लोगोंका विश्वास उठता चला जाता है। किन्तु वास्तवमें जप तप यदि सुनिश्चित रीतिसे किया जाय तो तत्काल फल देने वाला होता है। यह गलत है कि जप तप बहुत दिनों बाद फल देता है। जप-तपके परिणाम और उसके फलका अनुमान तो तुरन्त ही आश्चर्यजनक रीतिसे हो जाता है।

यह कई बातें विषयान्तर्गत आ पड़नेके कारण, हमने यहां लिखदी हैं। इस विषयमें बहुत कुछ कहने सुननेकी आवश्यकता है—और जितना अधिक

की स्मृतिमें श्रद्धाञ्जलि समर्पित करनेको आमन्त्रित किया जाएगा। इस महोत्सवके सभी आयोजनोंमें विक्रमकी राजधानी उज्जैनके राज्याधिकारी होनेके कारण श्रीमन्त महाराजा ग्वालियरके सम्पूर्ण सहयोग की पूर्ण आशा है। उनका नेतृत्व इस सार्वदेशीय महोत्सवकी सफलताका कारण बन सकेगा इसमें सन्देह नहीं।

ऊपर कथित महत्त्वपूर्ण संस्थाओंकी स्थापना द्वारा उज्जैनका अतीत गौरव महाराजाके शुभोद्योगसे बढ़े यही हमारी कामना है।

—मन्त्री

कहने सुननेकी आवश्यकता है, उससे कहीं अधिक पढ़ने-गुननेकी आवश्यकता है।

मैया क्या हैं? वह शक्तियोंका स्रोत हैं। वह आद्या शक्ति हैं। वह महाशक्ति हैं। कितनी शक्तियां हैं, इनकी गिनती करना असम्भव है। सब प्रकारकी शक्तियोंके उद्‌गमका नाम है महाशक्ति। यह महाशक्ति ही तो विश्वके उद्भव, उसकी स्थिति और उसके लयका कारण है। कलकत्ता हाईकोर्टके स्व० जज सर वुडराफने तथा अन्य कई विद्वानोंने इस तत्त्वकी ओर ध्यान दिया था और बहुत दिनोंके अध्ययनके पश्चात् उन्होंने यह कहा कि "हिन्दूधर्मका महत्त्व इसीमें है कि उसने जगत्‌के कारणको 'मैया' के रूपमें माना" संसारमें छोटे बड़े अनेक मत और धर्म प्रचलित हैं। पर जगत्‌के कारणको अधिकसे अधिक लोगोंने पिताके रूपमें माना है। वास्तवमें यह पिता और पुत्रकी भावना भी हिन्दू धर्मसे ही निकली है। हज़रत ईसाको इस भावनाके कारण ही शूली पर चढ़ना पड़ा था। यह प्रमाणित हो चुका है कि हज़रत ईसा तिब्बत तक आए थे* यहींसे उन्होंने यह जाना कि परमात्मा तो पिता है और हम पुत्र हैं। पर इस बातको उन्होंने सबके लिए नहीं माना, या सबने इस रहस्यको नहीं समझा—यही विपत्तिका कारण हुआ।

परमात्मा पिता ही है। और परमात्मशक्ति जगदम्बा ही है। शक्ति ही जगत्‌की रचना करती है, रक्षा करती है और उसका विनाश भी करती है। लीलामयी तो वही है।

परमात्मा सोता रहता है योग-निद्रामें उस समय तक जबतक शक्तिका सहयोग प्राप्त नहीं होता।

वैष्णव-धर्म-प्रधान पुराणोंमें एक बड़ी रोचक और ज्ञानगर्भित कथा आती है। सृष्टिका श्रीगणेश किस तरह होता है? विष्णु योग-निद्रामें सोए हुए हैं। जल ही जल है—बस और कुछ पता नहीं चलता। फिर सृष्टिका श्रीगणेश कौन करे? इच्छाशक्ति विष्णुके दोनों कानोंका मैल अपनी कनिष्ठा अंगुलीसे निकालती है। इस तरह उनकी योग-निद्रा भंग होती है, सृष्टिकी इच्छा होती है। इस प्रकार रचना-क्रमका श्रीगणेश होता है। योग-निद्रा तो कानका मैल निकालने से ही टूटती है। विष्णु सोए हुए थे—तो उनको सुलाने वाली शक्ति ही थी। वही तो उनके पैर चाप रही थी। उसीने सुलाया, उसीने जगाया। और कानके मैलसे मधुकैटभ राक्षस पैदा हुए तो महाशक्तिने ही उनका नाश भी किया। उसीने उनको मोहमें डाला।

कोई किसी पत्रमें लेख लिखता हुआ इस परम रहस्यमय सिद्धान्त और उसके विवेचनकी तह तक क्यों जाय? यह तो संकेतोंका स्थल है। यहां तो संकेतोंके लिये स्थान है। इसी लिये बुद्धिमानोंके लिए संकेत मात्र ही पर्याप्त है।

तीन बड़े सिद्धान्त हैं—विष्णु, शिव और शक्ति उनके आधार हैं। बाह्य दृष्ट्या वे भिन्न-भिन्न हैं, पर उनमें है एकात्मता। और इस एकात्मतामें भी तो भिन्नता है। वैष्णव-सिद्धान्ततः, शैव-सिद्धान्ततः और शक्ति सिद्धान्ततः सृष्टि-रचना, उपक्रम और उसके नियन्त्रणके सम्बन्धमें कुछ प्रभेद भी हैं। पर अन्ततः सभीमें मैयाका महत्त्व परिलक्षित हो जाता है।

ब्रह्मा हैं, विष्णु हैं और महेश हैं। हिन्दुओंके त्रिदेव यही हैं। एक बड़े कामके तीन विभाग होते हैं और तीनोंको संभालनेके लिए एक ही ब्रह्म तीन रूप लेता है। ब्रह्म, शक्ति और शिवका योग है। वही ब्रह्म "एकोहं बहु स्याम्" की इच्छा करता है। यहां भी वही इच्छाशक्ति सामने आती है। इसके बाद अर्धनारीश्वर रूप होता है। तब फिर सदाशिव और महाशक्ति अपने-अपने रूपमें आते हैं। यहांसे रुद्र और रुद्राणी, विष्णु और लक्ष्मी, ब्रह्मा और सावित्री उद्भव स्थिति और लयकी धाराओंको बहाते हैं और

[*पुरातत्त्वज्ञोंने निश्चित किया है कि ईसामसीह १८ वर्ष तिब्बत में रहे थे तथा तात्कालिक अथर्ववेदी ब्राह्मणों (लाम्बालोग जो कि आजकल बौद्ध धर्मानुयायी हैं) से शिक्षा प्राप्त कर यूरोपमें अपने मतका प्रचार किया था। —सम्पादक]

उनके नियन्ता बनते हैं। वे एक हैं। उनकी शक्तियां भी वस्तुतः एक ही हैं।

सूक्ष्म शक्ति हैं सावित्री — वह मंत्रशक्ति हैं। इस मंत्रशक्तिसे ही जगत्की रचना होती है। और इसके द्वारा पहले होती है मानस सृष्टि। मैथुनी सृष्टि तो बहुत देरसे शुरू होती है।

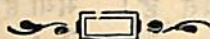
शिवा हैं, जड़ शक्ति हैं। वह प्रकृति हैं। प्रकृति के विना पुरुष कुछ नहीं कर सकता। पुरुषके बिना प्रकृति। पर पुरुष प्रकृतिका जनक नहीं है — प्रकृति पुरुषकी जननी है। यह रहस्य समझनेके लिए भी मस्तिष्क चाहिए और समझानेके लिए भी मन भर बुद्धिकी आवश्यकता है।

लक्ष्मी द्रव्य-शक्ति है। मन्त्रके पश्चात् द्रव्य पदार्थ पैदा होता है। यह द्रव्य खाली रुपया पैसा नहीं है—यह तो कोई एक विशेष शक्ति है जिसमें प्रवाह है — और वह अनेक रूपोंमें विद्यमान है। यही प्राणवायु है, यही अग्नि है, यही जाने क्या-क्या है।

रुद्राणी जड़ शक्ति हैं, प्रकृति हैं। वह कुपित होती हैं तभी विश्वका खेल बिगड़ जाता है-सिमट जाता है-तमाशा खतम हो जाता है—पैसा हजम हो जाता है। वह हंसती है तो फूल खिलते हैं—वह प्रसन्न होती है तो फल लगते हैं, मैयाका खिलवाड़ मैया ही जानें। जगत्पिताका सम्बन्ध जगत्से कितना है?—उतना ही है जितना पिताका परिवारसे। जगदम्बाका सम्बन्ध जगत्से कैसा है? वैसा ही जैसा बच्चोंका मैयासे। बच्चा दुःखमें किसे पुकारता है? मैयाको। बच्चोंको खाता खेलता देखनेमें कौन अधिक सुख मानता है? मैया। बाप घरमें आता है, इस बच्चेके आगे चुटकी बजा जाता है, उस बच्चेको थप-थपा जाता है, किसीने मांगा तो कुछ दे जाता है। मैया रात्रि-दिवस अपने बच्चों पर निगाह रखती है। वही तो है जो कभी उनके साथ खेलती है—कभी उन्हें गोदीमें उठाती है—कभी हंसाती है, कभी रुलाती है। वह करुणामयी है। वह लीलामयी है। वह अपने बच्चोंके लिए ही तो अन्नपूर्णा और विश्व-म्भरा बनी है।

मांगना है तो मांगने वाले मैयासे मांगें, गोद पसार-पसार कर! वही तो देती है, वही तो देना जानती है। बच्चोंको देनेके लिए ही तो उसने अटूट भण्डार और उसकी शाखा प्रशाखाएं विश्व भरमें प्रसारित कर रक्खी हैं।

शरदंक हेमन्तांक और वसन्तांक



श्रीस्वाध्यायके शरदङ्क हेमन्ताङ्क और वसन्ताङ्ककी भारतके गण्यमान्य विद्वानों एवं समाचार-पत्रोंने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। शरदङ्कमें प्रकाशित दैनिक सूक्ष्मग्रहोंके सम्बन्धमें सुधी-समाजकी सम्मति है कि "ऐसा अद्वितीय परिश्रम साध्य कार्य किसी भी ज्यौतिषीने अब तक नहीं किया। ज्योतिर्विज्ञानसे प्रेम रखनेवाले सज्जनोंके लिए कई वर्षो तक काम आनेवाली यह एक आवश्यक स्थिर वस्तु है" श्रीयुत विद्याभूषण पं० दीनानाथजी शास्त्रीने लिखा है कि – "श्रीस्वाध्यायका हेमन्ताङ्क तो प्रत्येक सनातनधर्मी और राष्ट्रवादीको सदा अपने पास रखना चाहिए।" इसी प्रकार गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुरके प्रधान डा० शिवदत्तजी भिषगाचार्यने लिखा है कि – 'श्रीस्वाध्याय' में सम्पादकजीने जिस विधिसे ग्रहण और राहुकेतुका वर्णन किया है—वह सर्वथा प्रशंसनीय है। यदि इस प्रकारके लेख जनताके सम्मुख रक्खे जावें तो प्राचीन ज्यौतिषके सम्बन्धमें आधुनिक जनतामें जो अविश्वास सा हो गया है वह दूर हो सकता है।" ऐसी ही मान्य विद्वानों और समाचारपत्रोंकी कई सम्मतियां आचुकी हैं। यदि उन सबको अक्षरशः प्रकाशित की जावे तो एक पुस्तक बन सकती है। इसीसे आप अनुमान लगा सकते हैं कि ये अङ्क कितने ठोस और उपादेय होंगे। अब उक्त तीनों अङ्कोंकी बहुत थोड़ी प्रतियां शेष हैं, अतः जो महानुभाव वर्तमान वर्षका वार्षिक मूल्य २) रु० मनीआर्डर द्वारा भेज देंगे उन्हींको इस प्रथम वर्षके चारों अङ्क भेजे जावेंगे। अकेले शरदङ्कका मूल्य बारह-आने और शेष तीनों अङ्कोंके दश दश आने हैं। इस वर्षके ये चारों अङ्क शीघ्र ही समाप्त होने वाले हैं, अतः विलम्ब करने वालोंको पश्चात्तापके अतिरिक्त कुछ हाथ न लगेगा।

सं० २००० वि० के दैनिक ग्रह

सं० २००० वि० के दैनिक ग्रह स्पष्ट श्रीस्वाध्याय सदनने अलग पुस्तकाकार रूपमें प्रकाशित करने का निश्चय किया है। अर्थात् दूसरे वर्षके प्रथमाङ्क (शरदङ्क) में दैनिक ग्रहोंके २४ पृष्ठ नहीं होंगे। यदि पहलेकी भांति ही हम अलग छपाई और कागजके व्ययकी बचत करते हैं तो अन्य लेखोंके लिए ८० में से केवल ५६ पृष्ठ ही शेष रह जाते हैं। किन्तु पाठकोंकी अभिरुचिका ध्यान रखते हुए हम श्रीस्वाध्यायकी पाठ्य सामग्रीमें किसी प्रकारकी भी न्यूनता करना नहीं चाहते, इसी लिए यह दैनिक ग्रहोंकी पुस्तिका अलग छपवा-कर उपहार रूपमें ग्राहकोंको भेंट करनेका निश्चय किया है। प्रत्येक ग्राहकको यह पुस्तिका बिना मूल्य दी जावेगी, किन्तु इसके मार्गव्यय (डाकखर्च)के लिए –)। पांच पैसेका टिकट भेजना प्रत्येक ग्राहकके लिए आव-श्यक है। अतः जो ज्योतिष (गणित) प्रेमी महानुभाव अपने अग्रिम वर्षके मूल्यके साथ ही –)। अधिक अर्थात् कुल २।=)।। मनीआर्डर द्वारा भेज देंगे उन्हींको यह पुस्तक शरदङ्कके साथ विना मूल्य प्राप्त हो सकेगी।

पता—व्यवस्थापक श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन (शिमला)

लेखकोंको सूचना

आगामी अङ्क (शरदङ्क) के लिए सब लेख श्रावण शु० १५ ता० २६ अगस्त १९४२ ई० पर्यन्त कागजके एक ही ओर तट (हाशिया) छोड़कर सुवाच्य स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे हुए निम्न पते पर कार्यालयमें पहुंच जाने चाहिएं। अस्पष्ट अधूरे और विलम्बसे आये हुए लेख समय पर प्रकाशित न हो सकेंगे। श्रीस्वाध्यायमें आनेवाले लेखोंकी एक संक्षिप्त तालिका पृष्ठ ६ पर दी गई है; उसमें से किसी भी विषय पर विद्वान् महानुभाव शरदङ्कके लिए लेख भेज सकते हैं।

पता—सम्पादक "श्रीस्वाध्याय" सोलन (शिमला)

समालोचना

विक्रम—

संस्थापक—श्री पं० सूर्यनारायणजी व्यास ज्यौतिषाचार्य। सम्पादक—श्री पाण्डेय बेचनशर्मा 'उग्र'। प्रकाशक—श्रीकन्हैयालाल चौरूषिया, विक्रम कार्यालय, उज्जैन (मालवा) पृष्ठ संख्या ५८, वार्षिक मूल्य ४) एक प्रति के ।=) आने।

विक्रमका दूसरा अङ्क हमारे सामने है।

हिन्दी साहित्य जगत्के लिए यह एक हर्षका विषय है कि जिस पवित्र मालव भूमि (उज्जयिनी) ने संवत् प्रवर्त्तक सम्राट् विक्रमको जन्म दिया था—उसीसे मासिक 'विक्रम' भी आदित्य (श्री पं० सूर्यनारायणजी व्यास) के योगसे विक्रमादित्य बनकर एवं विरोधियोंके लिए 'उग्र' होकर हिन्दी साहित्यकी श्रीवृद्धि करेगा।

अन्तर्राष्ट्रिय-ख्यातिप्राप्त श्री पं० सूर्यनारायणजी व्यास उन साहित्य-महारथियोंमेंसे हैं, जिन्होंने मध्य भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके सभापतित्वका भार अपने स्कन्धों पर उठानेका सफल गौरव प्राप्त किया है। और श्री 'उग्र' जीकी ओजस्विनी लेखनी तो सर्वविदित ही है। अतः उपर्युक्त महानुभावोंसे हमें पूर्णआशा है कि इस द्विसहस्राब्दिमें उग्र विक्रमादित्य हिन्दी जगत्का नवयुग प्रवर्त्तक होगा। जैसा कि विक्रमके उपक्रमसे ही भासित होता है।

सम्पादकीय "बिन्दु बिन्दु विचार" में गागरमें सागरका समावेश कर दिया है। पाठकोंको जहां राजनैतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, एवं अन्तर्राष्ट्रिय आदि विषयोंका रसास्वाद प्राप्त होगा वहां "महन्त मूजीराम महाराज सिनेमा स्टूडियोमें"-के "अदरख-पुरुष" आदिकी चाट भी गरिष्ठ पदार्थोंके पाचनमें सार्थक सिद्ध होगी। "होनहार बिरवानके होत चीकने पात" के अनुसार इस बाल विक्रमसे हिन्दी साहित्य को अपने उज्ज्वल भविष्यकी पूर्ण आशा है। सन्मानसमराल श्री महाकाल भगवान् इसे दीर्घायु प्रदान करें। विक्रम-जन्मोत्सव के उपलक्ष्यमें यह शब्द भेंट करते हुए हम उसके अभिभावुकोंको सहर्ष बधाई देते हैं।

प्राप्ति स्वीकार

कर्मठगुरु—

लेखक—श्री० राजज्यौतिषी पं० मुकुन्दवल्लभजी ज्यौतिषाचार्य कुराली (पंजाब)।

प्रकाशक—मोतीलाल बनारसीदास पञ्जाब संस्कृत पुस्तकालय, सैदमिट्ठा बाजार, लाहौर।

यह नित्य नैमित्तिक कृत्य, तांत्रिक प्रयोगादिका अत्युत्तम ग्रन्थ है। ग्रीष्माङ्क छपते समय ही उक्त ग्रन्थ प्राप्त हुआ, इस कारण इसको आद्योपान्त हम भलीभांति देख नहीं पाए। एतदर्थ इसकी पूरी आलोचना आगामी अङ्कमें प्रकाशित होगी।

गताङ्कमें जिन पुस्तकोंकी प्राप्ति स्वीकार दी गई है उनकी आलोचना भी आगामी अङ्कमें ही प्रकाशित होगी। प्रेषक महानुभाव क्षमा करें।

श्रीस्वाध्यायसदनका हिन्दी विद्यालय

हमें यह प्रकट करते अत्यानन्द अनुभव हो रहा है कि जिस भाषाके द्वारा यह आपका प्रिय पत्र धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष एवं इतिहास सम्बन्धी सिद्धान्तोंको आपकी सेवामें भेंट कर रहा है, उसी राष्ट्रभाषा प्रचार के लिए श्रीस्वाध्यायसदनकी ओरसे एक हिन्दी विद्यालयकी आयोजना की गई है। जिसमें हिन्दीकी प्रारम्भिक शिक्षासे लेकर उच्चश्रेणी (साहित्यरत्न, प्रभाकर, भूषण, हिन्दीरत्न) एवं श्रीरामचरितमानसका स्वतन्त्ररूपसे अध्ययन करानेका प्रबन्ध किया गया है। देवनागरी कालेज तथा गोपाल आर्ट्स-कालेज लाहौरके सुयोग्य अध्यापक साहित्यरत्न श्री पं० रामेश्वरजी शास्त्री 'अरुण' ने विद्यालयको अपनी समस्त सेवाएं अर्पित करते हुए स्वल्प समयमें ही आशातीत सफलता प्राप्त की है।

यदि राष्ट्रभाषा (हिन्दी) प्रेमी महानुभावों एवं श्रीमानोंका सक्रिय सहयोग हमें प्राप्त होता रहा तो हम शीघ्र ही इस विद्यालयको स्थायी रूप देकर उच्चशिखर पर पहुंचानेका प्रयत्न करेंगे। विद्यालयकी नियमावली और प्रवेशपत्र कार्यालयसे प्राप्त करें।

मन्त्री—श्रीस्वाध्यायसदन हिन्दी विद्यालय,
सोलन (शिमला)

आभार-प्रदर्शन

प्रिय पाठकवृन्द ! हमें यह लिखते हुए बड़ा हर्ष हो रहा है कि आपका प्रिय पत्र 'श्रीस्वाध्याय' अपने प्रथम वर्ष का यह अन्तिम अङ्क (ग्रीष्माङ्क) आप महानुभावोंके कर कमलोंमें सहर्ष अर्पित कर रहा है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि 'श्रीस्वाध्याय' का जन्म ही ऐसे समयमें हुआ है—जब कि सभी सामग्रीका भाव अत्यन्त तेज हो रहा है। कागज आदिका मिलना तो बहुत ही कठिन हो गया है, चतुर्गुण मूल्य देने पर भी यथेच्छ कागज नहीं मिल रहा, ऐसे विकट समय में जहां बड़े २ पत्रोंकी दशा भी चिन्तनीय हो गई और कुछ तो अपना अस्तित्व ही मिटा चुके हैं, वहां श्रीस्वाध्याय "श्रेयांसि बहुविघ्नानि" के अनुसार कई कठिनाइयोंका सामना करता हुआ अपने प्रथम वर्षको निर्विघ्न समाप्त कर रहा है। प्रथम वर्षमें ही इसने आप महानुभावोंकी जो कुछ सेवा की है और भारतीय विद्वद्वर्गने इसे जिस आदरकी दृष्टिसे देखा है वह सब इन चारों अङ्कोंके अध्ययनसे आपके प्रत्यक्ष ही हैं।

यह जो कुछ भी सेवा हमसे बन पड़ी है वह सब 'श्रीस्वाध्याय' की जननी एक महान् विभूतिके आशीर्वाद, एवं संरक्षक सहायकोंकी उदार सहायता तथा धुरन्धर विद्वानों, सहयोगी मित्रों और ग्राहक महानुभावोंके पूर्ण सहयोगका ही परिणाम है। इस कठिन कालमें उक्त महानुभावोंकी उदार सहायता के लिए हम हृदयसे उनके आभारी हैं।

प्रस्तुत अङ्कके सम्पादनमें (सोलनमें) साहित्याचार्य श्री पं० रामेश्वर जी शास्त्री 'अरुण' ने और छपते समय दिल्लीमें प्रूफसंशोधनादि कार्योंमें सुहृद्वर साहित्याचार्य श्री पं० नन्दलालजी शास्त्री, श्री पं० गोविन्द जी मिश्र और श्री पं० मनोहरलाल जी चित्रकला विशारदने जो सहयोग प्रदान किया उसके लिए इन मित्रोंको विशेष धन्यवाद देना आत्मीयतासे पृथक् करना है। आत्मोन्नतिसे जो सुफल प्राप्त होता है उसके आनन्दका अनुभव भी उसी व्यक्तिको होता है, इसके लिए वह किसीके धन्यवादकी अपेक्षा नहीं रखता, अस्तु।

महामहोपाध्याय श्री पं० परमेश्वरानन्दजी विद्याभास्कर, म० म० श्री पं० मथुराप्रसादजी दीक्षित, श्री पं० दीनानाथजी शास्त्री सारस्वत, श्री पं० केदारनाथ जी महाराज राजज्यौतिषी, श्री पं० सूर्यनारायण जी व्यास, श्री पं० मदनलाल जी ज्यौतिषी, श्री पं० माधवाचार्यजी शास्त्री, श्री पं० विद्याधरजी एम० ए०, श्री पं० नन्दकिशोर जी आयुर्वेदाचार्य, श्री धनेशचन्द्र जी आयुर्वेदाचार्य, श्री पं० मोहनलालजी भिषगाचार्य, श्री पं० राधाकृष्णजी उपाध्याय भिषगाचार्य धन्वन्तरि, श्री पं० जगन्नाथप्रसादजी ज्यौतिषी, श्री पं० सखारामजी जोशी, श्री पं० आनन्दस्वरूपजी ज्यौतिषी, श्री प्रो० बी० सी० महता म्यू० कमिश्नर, श्री पं० परमानन्दजी विद्यालङ्कार, श्री प० नन्दकुमारजी शर्मा, श्री डा० श्रीनाथजी तिक्कू शास्त्री, कविवर श्री पं० कुलशेखरजी और श्री पं० बालविहारीजी आदि २ विद्वान् लेखक महानुभावोंने अपने गवेषणापूर्ण और मौलिक लेख भेज कर 'श्रीस्वाध्याय' को अलंकृत किया है। इस सौजन्यके लिए उक्त महानुभावोंके हम अत्यन्त आभारी हैं और आशा करते हैं कि भविष्यमें भी ये महानुभाव इसी प्रकार 'श्रीस्वाध्याय' को अपनी उदार सहायतासे उपकृत करते रहेंगे।

श्री पं० शिवशरणजी राजोपाध्याय, श्री पं० विजयप्रतापजी शर्मा और श्री बा० हंसराजजी इन्स्पेक्टर तथा अन्य कई मित्रोंने 'श्रीस्वाध्याय' के प्रचारमें पूर्ण सहयोग दिया। अतः इन मित्रोंके भी हम आभारी हैं।

जिन महानुभावोंके लेख स्थानाभावके कारण इस अङ्कमें प्रकाशित नहीं हो सके, वे किसी आगामी अङ्कमें प्रकाशित किये जावेंगे।

अर्जुन प्रेसके मैनेजर श्री पं० कल्याणस्वरूपजी तथा श्री पं० बाबूरामजी त्यागीने 'श्रीस्वाध्याय' की सुन्दर छपाई और कागज इत्यादिका प्रबन्ध करनेमें पूर्ण सहयोग दिया अतः इन महानुभावोंके भी हम आभारी हैं।

—ह० श० त्रिवेदी सम्पादक।

श्रीदुर्गा भवन

यह जानकर हमारे भारतीय सम्पूर्ण नर-नारियों का परम हर्ष होगा कि "श्रीदुर्गा-भवन" की स्थापना होगई है। इसमें श्रीदुर्गाभगवतीके सम्बन्धमें जितना भी वाङ्मय होगा उस सबका संग्रह किया जायगा। अच्छे २ योग्य विद्वानोंसे अन्वेषण कराया जाएगा, तथा क्रम-बद्ध सुचारु रूपसे उसका विवरण भी प्रकाशित होगा। इस समय दुर्गासप्तशतीकी सात आठ टीकाएं तथा छः सात प्रकारकी भिन्न २ रूपोंमें मुद्रित पुस्तकें इसमें संगृहीत होचुकी हैं। अतः "श्रीस्वाध्याय" के पाठकों एवं अन्य सज्जनोंसे भी प्रार्थना है कि जिन-जिन लोगोंको सप्तशतीके सम्बन्धमें जो भी कुछ विशेष ज्ञान हो वह लेखबद्ध कर नीचे लिखे पते पर भेजनेकी कृपा करें। जितनी प्रकारकी पुस्तकें, टीकाएं, भाष्य, अनुवाद, निबन्ध आदि जो भी कुछ हों एक-एक प्रति भेज कर अनुगृहीत करें। यह संस्था लोकोपकारक है इस कारण विशेषतः अमूल्य ही भेज कर इस शुभ कार्यमें सहयोग प्रदान करें। जो महानुभाव मूल्य लेकर भेजना चाहें, वे अपनी पुस्तकोंके विवरण तथा मूल्यकी पृथक् सूची बनाकर हमारे पास भेजें।

श्रीस्वाध्यायसदन

श्रीस्वाध्यायसदन एक ऐसी संस्था होने जारही है जो भारतमें एक सर्वोच्च अन्वेषकका कार्य करेगी। अपने लोकोपकारी कार्योंसे राष्ट्र तथा धर्मकी भली-भांति सेवा करती हुई उनकी उन्नतिका प्रयत्न करेगी। इसमें संस्कृत तथा हिन्दीके सब विषयोंके ग्रन्थ संगृहीत होंगे और वाङ्मयका अन्वेषण, अनुशीलन तथा उसका स्वाध्याय होगा। उसके सक्रिय प्रचारका भी प्रयत्न किया जायगा। इस संस्थाके द्वारा अच्छे २ विद्वान् तथा कार्यकर्ता पुरस्कृत होंगे।

सर्व प्रथम इस संस्थाने "श्रीस्वाध्याय" नामक त्रैमासिक पत्र प्रकाशित करना प्रारम्भ किया है, जिसका चतुर्थाङ्क "ग्रीष्माङ्क"के रूप में आपके हाथों में ही है। इसे शीघ्र ही मासिक करनेका आयोजन किया जा रहा है। अतः राष्ट्र, धर्म, जाति तथा स्वातन्त्र्यसे प्रेम रखने वाले सभी भारतीय सज्जन तन-मन-धनसे इस संस्थाको उन्नत एवं अखिल भारतमें आदर्श बनानेके लिए हाथ बटानेमें सङ्कोच न करते हुए सबका हित करेंगे।

पत्र व्यवहार का पता—व्यवस्थापक, श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन (शिमला)

श्रीस्वाध्यायसदनका ज्योतिष-विभाग

इस विभागमें ज्योतिष सम्बन्धी प्रत्येक कार्य शास्त्रानुसार सन्तोष-जनक रीतिसे किये जाते हैं। जन्मपत्र वर्षफलमें आयुः, सन्तान, स्त्री, धन, व्यापार, नौकरी, शरीरका सुखदुःख, भाग्योदयादिका पूरा पूरा विचार शास्त्रप्रमाणानुसार लिखा जाता है। प्राचीन तथा नवीन दोनों पक्षसे गणित होता है और इंगलिश-पद्धति Primary & Secondary Direction द्वारा फलित विचार भी किया जाता है। दोनों पद्धतियोंका पारिश्रमिक (फीस) भिन्न २ है। जन्मपत्रकी फीस ११) रु० से १०००) रुपये तक। वर्षफल ५) से १००) रु० तक। एक भावका सूक्ष्म विचार (यथार्थ निर्णय) के ११) रु०। आयुर्विचार (अंशायुर्गणित, मारकेश विचार मृत्यु-समय-स्थान-राग-मोहादि निर्णय सहित) राजा महाराजा एवं सेठ साहुकारोंसे १००) रु०, सर्वसाधारणसे २५) रु०। टेवा बनानेकी फीस २) रु०, भारतसे बाहर अन्य देशोंमें उत्पन्न हुए बालकोंके शुद्ध इष्ट और केवल लग्न कुण्डली बनानेकी फीस ५) रु०, विवादास्पद प्रश्न पर शास्त्रानुसार व्यवस्था बतलाने की फीस ५) रु०, शुद्ध विवाह मुहूर्त्त और ग्रहमेलापक (कुण्डली मिलान) की २) रु०, सामान्य प्रश्न १।) रु०।

प्रत्येक कार्यकी आधी फीस पेशगी मनीआर्डर द्वारा पत्रके साथ ही भेजना आवश्यक है। बिना प्रारम्भिक (एडवांस) प्राप्त हुए कार्य-आरम्भ नहीं किया जाएगा। उत्तर प्राप्त करनेके लिए जवाबी कार्ड अथवा टिकिट भेजना आवश्यक है। पता—व्यवस्थापक श्रीस्वाध्यायसदन [ज्यौतिष विभाग] सोलन (पंजाब)

श्रीग्रन्थमालाका प्रथम पुष्प

श्रीपञ्चस्तवी

(श्रीमद्धर्माचार्य भगवत्पाद प्रणीत)

यह एक अत्यन्त प्राचीन तथा भक्तोंके सम्पूर्ण मनोरथों को पूर्ण करने वाला श्रीमहामायाका स्तोत्ररत्न है। लाखों भक्तोंने अनुभव किया है और आगे भी करेंगे कि यह स्तोत्र-रत्न संसारमें अद्वितीय है।

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम श्रीमदमृतवाग्भवाचार्य प्रणीत कुछ प्रकाशित तथा अप्रकाशित ग्रन्थरत्न

श्रीपरशुरामस्तोत्र

यह एक अत्यन्त ओजस्विनी भाषामें लिखा हुआ भगवान् श्रीपरशुरामका स्तोत्र है। भारतके अनेकों पत्र पत्रिकाओंने तथा विद्वानोंने इसकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है। राष्ट्रभाषानुवाद सहित सचित्र द्वितीय संस्करण छपकर तैयार है।

श्रीराष्ट्रालोक

अत्यन्त सरल तथा सरस संस्कृतभाषामय इस ग्रन्थके अध्ययनसे नस २ में राष्ट्रप्रेम व उत्साह भर जाता है। राष्ट्रिय व्यक्तियोंके सम्पूर्ण कर्तव्य, राष्ट्रको स्वतन्त्र व उन्नत करनेके उपाय, राष्ट्र किसे कहते हैं? उस पर किसका अधिकार होता है? इत्यादि विभिन्न राष्ट्रिय विषयोंका सम्पूर्ण ज्ञान होजाता है। बड़े २ राष्ट्रिय नेताओंने इसकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है। अधिक क्या, गागरमें सागर है। राष्ट्रभाषानुवाद सहित द्वितीय संस्करण शीघ्र प्रकाशित होने वाला है।

श्रीसप्तपदीहृदय

(राष्ट्रभाषानुवाद सहित)

भारतीय आर्यविवाह-संस्कारमें सप्तपदी नामक क्रिया कितनी सुन्दर एवं महत्त्वपूर्ण है यह तो पाठकोंको विदित ही है। किन्तु इस सप्तपदीका वास्तविक रहस्य आज तक किसी भी विद्वान्ने खोल कर नहीं लिखा। "एकमिषे" इत्यादि सूत्रोंके यथार्थ रहस्यको खोल कर भारतीय आदर्शके राष्ट्रिय रूपमें यह श्रीसप्तपदीहृदय नामक ग्रन्थ लिखा गया है। विशेष क्या आदर्श-दाम्पत्य जीवनका तत्त्व इस पुस्तकमें भरा पड़ा है।

श्रीआत्मविलास

(सुन्दरी राष्ट्रभाषा व्याख्या सहित)

मनुष्यमात्रके लिए परम कल्याणकारी व सन्मार्ग प्रदर्शक यह वही अद्भुत आध्यात्मिक दार्शनिक ग्रन्थरत्न है, जिसके प्रकाशित होते ही दार्शनिक जगत्में हलचलसी मच गई और सैंकड़ों प्रतियां हाथोंहाथ लग गईं। इस ग्रन्थको पढ़नेसे स्थितप्रज्ञता प्राप्त होती है, चित्त शान्त होता है, संसार बाहर भीतर सम्पूर्णरूपसे आनन्दमय प्रतीत होता है। अतः यदि आप भी आत्मा क्या है? परमात्मा क्या है? ईश्वर जगदुत्पत्ति क्यों और किस प्रकार करता है? हम क्या हैं? और हमें क्या करना चाहिए? दर्शन किसे कहते हैं? उनका प्रारम्भ तथा अन्त कहां होता है? उनकी उपपत्ति क्या है? आदि २ आध्यात्मिक गूढ़ रहस्योंसे भली भांति परिचित होकर आत्म-साक्षात्कार करना चाहते हैं तो इस ग्रन्थका अवश्य मनन कीजिये। आपके सभी सन्देह दूर होकर अद्भुत आनन्द प्राप्त होगा। मूल्य २) रु० मात्र।

शीघ्र प्रकाशित होनेवाला

श्रीराष्ट्रालोकका

श्रीराष्ट्रसञ्जीवन संस्कृतभाष्य

इसके विषयमें संक्षेपसे ही हम पाठकोंको सूचित करते हैं कि यह ग्रन्थरत्न सम्पूर्ण साहित्यसागरका सार है। इसके जोड़का ग्रन्थ आज तक संसार भरके किसी भाषाके साहित्यमें नहीं लिखा गया। ग्रन्थ क्या है, सम्पूर्ण राष्ट्रिय विषयोंका हृदय है। ग्रन्थमें प्रणेताने स्वाभाविक पूर्ण विज्ञानके आधार पर सम्पूर्ण मानव-कर्तव्य तथा स्वभावका उस विशेषतासे प्रतिपादन किया है कि जो एक अत्यन्त नवीन, सुललित, स्वभाव-शुद्ध तथा प्रकृति-सिद्ध हो सकती है। इस ग्रन्थका स्वाध्याय प्रत्येक राष्ट्रहितैषीका परम प्रधान कर्तव्य है। न पढ़ने वाले आजन्म पछतायेंगे। कईसौ पृष्ठोंमें यह ग्रन्थ समाप्त हुआ है।

सूचना—श्रीआत्मविलासको छोड़ कर शेष सभी मुद्रित पुस्तकें मार्गव्यय (दो आने) प्राप्त होनेपर "श्रीस्वाध्याय" के ग्राहकोंको बिना मूल्य दी जावेंगी।

पता— श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन (शिमला)।

पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी द्वारा अर्जुनप्रेस देहलीमें छप कर श्रीस्वाध्यायसदन सोलन (शिमला) से प्रकाशित